कवि निराला

नन्ददुलारे वाजपेयी

महान कवि और चितक

स्व० जयशकर प्रसाद

को जिनके स्नेह सौजन्य के समभागी
हम दोना (निराला जी और मैं) थे
तथा जिनकी जीवनस्मृति हम
अविस्मरणीय है और रहेगी

अनुक्रम

जीवनी और व्यक्तित्व

सूर्यकात त्रिपाठी 'निराला' से मेरी पहली भेट सन 1924 के ग्रीष्मावकाश म हुई थी। हमारा परिवार अकसर गर्मियो म हजारीबाग मे उन्नाव जिले के अपने ग्राम (मगरायर) आया करता था और हमलोग महीन डेढ महीने गाव पर रहकर वापस जाया करते थे। उस वष निराला भी उन्ही दिनो कलकत्ता के अपन गाव गढाकोला आए हुए थ। हमारे और उनके गावो म मुश्किल से डेढ मील का अतर था। हमार गाव मे ही निराला का डाकघर था। व प्राय अपनी डाक लेन अथवा दनिक उपयोग का सामान खरीदन हमारे गाव आ जाते थ। उस दिन मैं अपन गाव के बडे तालाब म कुछ मित्रो के साथ स्नान करन गया था। हमलोग लौट ही रह थे कि निराला उसी ओर स आते दिखाई दिए। हमलोग क्षण भर को रुक गए और वह हमारे पास आ पहुचे। लबा कद लबे और कुछ बिखरे बाल, चौडा और ईषत लबा मुख, पुष्ट देह, तरल आखे कुर्ता व धाती पहने वह ज्यो ही हमसे मिले, हमन उन्ह नमस्कार किया। वह अगरेजी म बोले, 'आप ही नददुलारे वाजपेयी है ? मै आप ही से मिलने आपके घर जा रहा था। अच्छा हुआ यही मुलाकात हो गई।' उन्ह समीप की एक दुकान से कुछ सामान भी लेना था, इसलिए वह उस ओर चले गए और हमलोग मित्रो सहित अपन अपन घर आए। कुछ ही देर म वह मेरे घर पर फिर आए और थोडी सी बातचीत करने के पश्चात चले गए।

निराला से मिलने के पूव मैं मतवाला' म प्रकाशित होनेवाली उनकी कविताओ और साहित्यिक टिप्पणियो से परिचित हो चुका था। उनकी कविताओ का असाधारण उल्लास और वेग तथा उनकी सशक्त भाषा हम विशेष रूप से आकृष्ट कर चुकी थी। साथ ही उनकी टिप्पणियो का तीव्र किंतु निष्कलुष व्यग्य हम प्रभावित कर चुका था। गाव आने पर हमे पता लगा था कि निराला भी अपने गाव आए हुए हैं उनसे मिलने की उत्कठा भी थी, परतु साहस न हो रहा था। मैं उन दिनो इटरमीडिएट कक्षा का छात्र था। गाव पर कुछ छोटे और नादान लडके उनकी आकृति देखकर कुछ इस प्रकार की तुकबदी गाया करते थ 'निराला, मतवाला, गढाकोला का रहनवाला, बडे बाल वाला, बडी नाक वाला।' उनके इस वणन को सुनकर मरा क्षणिक मनोरजन तो हुआ परतु उनकी इस हिमाकत पर

मन म वितष्णा भी हुई थी। निराला की इस समय की आकृति और शारीरिक सगठन म एक भव्यता थी और उपहासास्पद कुछ भी न था।

उनस मरी आरभिक बातचीत रवीन्द्रनाथ की कविता स शुरू हुई थी और प्रसगवश सुमित्रानदन पत की रचनाओ स वह रवीन्द्रनाथ की विशिष्टता बतान लग थ। हिंदी म पत ही एस कवि थ जिनक प्रति उनका सर्वाधिक आकषण था। पत की भाषा और कल्पनाछवियो से वह अनुरक्त थ परतु उन कल्पनाछवियो म कोई अविति न पाकर वह बार बार रवीन्द्रनाथ की भावान्वितियो का उल्लेख करते और उदाहरण दत थ। यो निराला हिंदी क पुरान और नए कवियो की भी अनक रचनाए स्मरण रखत थ और अवसर मिलन पर प्रशसा के साथ उनक उद्धरण दिया करत थे। निराला म आरभ स ही मैंन यह विशषता पाइ की वह सभी अच्छी कविताओ का स्वागत करत थ। प्राय सभी अच्छे कवियो की दो चार कविताए उन्ह याद थी। उनकी दष्टि समीक्षक क साथ साथ सहृदय की प्रमुखता लिए हुए थी।

कभी कभी व सामाजिक विषयो की भी चर्चा करत थ। कनौजिया समाज म जो बिस्वा की पद्धति है उसका उपहास करन म वह एतिहासिक तथ्यो का भी उल्लख करत थ। उनका कथन था कि अकबर के समय म बीरबल न कनौजिया ब्राह्मणो को बडी सख्या म आमत्रित किया था और उन्ह राजकीय सम्मान दकर विदा किया था। इस अवसर पर कनौजिया ब्राह्मणो के जो वग राजदरबार म पहुच थ उन्ह ऊचे बिस्व दिए गए थ और जो नही पहुच व मध्यम और हीन कहलाए। इस आधार पर वह यह सिद्ध करत थ कि ऊच कनौजिया वास्तव म अकबर के आश्रित और उनक दरबार के अनुगत थ। शेष जो वास्तविक विद्रोही थे और दरबार म नही गए थ वे ही श्रेष्ठ कान्यकुब्ज कहलान के योग्य है और इसी श्रष्ठ श्रणी म वह अपन तिवारी वश को भी शामिल कर लेत थ। यद्यपि यह चर्चा वह विनोद म ही किया करत थ पर इसस स्पष्ट हो जाता था कि उनका कान्यकुब्जो की उच्चता नीचता पर विश्वास नही था। जहा भी उन्ह पुरानी शली का ऊच नीच व्यवहार मिलन की सभावना होती वहा वह जाते ही न थ।

निराला म आत्मीयता और मत्री का गुण इतना प्रबल था कि वह किसी प्रकार क शिष्टाचार क पाबन्द नही थ। अपनी ओर से तो वह शिष्टाचार म अतिम दूरी तक जाते (शिष्टाचार की प्रतिमूर्ति ही थ) पर अपन मित्रो से वह ऐसे किसी औपचारिक सबध की अपक्षा नहा रखत थ। मुझ जस तरुणवय के विद्यार्थी से जो उम्र म उनस दस बारह वष छोटा था, वह ऐसे हिलमिल गए थे कि प्राय प्रतिदिन मरे गाव के घर पर आकर बठन और मुझे दूर दूर घुमान भी ले जात पर इस बात की रचमात्र भी चिंता न करत कि मैं उनक घर कितनी बार गया हू।

तीन चार वर्ष पश्चात ('29 '30) जब महात्मा गाधी का सत्याग्रह आदोलन गाव म भी जोर पकड चुका था मुझे उनके राजनीतिक स्वरूप का भी परिचय मिला। हमारे गाव म ही राजनीतिक सभाए हुआ करती थी। उनमे सक्रिय काग्रेसी कर्ताओ क साथ निराला और मै प्राय उपस्थित रहने थे। इस अवसर पर उनके भाषण भी उत्तेजक और जोरदार हुआ करत थ। उनका मुख्य विषय अगरजी राज्य म ग्रामीणा की दुदशा का रहा करता था और यहा वह आर्थिक पक्ष पर अधिक बल दिया करते थे। मुझे आरभ म आश्चय हुआ था कि निराला अपन विचारा और अपनी कविताओ मे विशुद्ध वदाती हात हुए अपन सामाजिक विचारा म इतन कट्टर वस्तुवादी कसे है ? वास्तव म यह उनका मानवतावादी दष्टिकोण था जो वेदात के व्यवहार पक्ष से पूरी तरह समर्थित था। बल्कि कहना चाहिए कि यह उनका उग्र वेदात था। मुझे इस बात का भी आश्चय था कि हम म से बहुत म लाग तो मौखिक रीति से ही देशप्रेमी बन रह पर निराला न वर्षो तक गाव मे रहकर किसानो का आदालन चलाया और तब तक उसका साथ दिया जब तक किसाना मे पूरी तरह स आत्मपराजय की भावना भर नही गई। जब निराला न दखा कि किसान ही उनका साथ नही देत और वे जमीदारो तथा सरकारी अफसरो और पुलिस के सम्मिलित आतक स अभिभूत हो गए है तब उन्हान इस आदोलन से अपना पिंड छुडाया।

सन '24 से सन '28 तक निराला जी प्राय प्रतिवप गाव आत थे और महीने दो महीन वहा रहा करत थे। उस समय उनकी रुचि कसरत करन की और कुश्ती लडने की भी रहा करती थी। मैंने इन वर्षों म उनका स्वास्थ्य सबस अधिक बना हुआ पाया। निराला अपनी जोड के किसी भी जवान स टक्कर ले सकने थे। दाव-पेंच म काफी विचक्षण थे। मैंन यह भी देखा कि वह अपन मल्ल गुरु हजारी चाचा क तो परम भक्त थ ही अपन उन साथियो की भी जीभर प्रशसा करत थे जो उनकी बराबरी के जाड के थ। निराला भावुक ही नही नितात निश्छल थ। उनका सा खुले हृदय का व्यक्ति मैंन दूसरा नही दखा, उनकी जा दष्टि साहित्यिक विशेषताओ की पहचान मे रहा करती थी प्राय वही मनुष्या के पहचानन की भी रहती थी। वह सच्चे अर्थो म गुणग्राही थे। किसी भी पक्षपात या दलबदी म फसना उनके लिए असभव था।

निराला जी खूब मिलनसार थ। उनके परिचय और घनिष्ठता का क्षेत्र बहुत बडा था। जब साहित्यिक मित्रा म होत तब साहित्य की बातचीत करत गाववाला के साथ होत तो उनके निजी विषयो और समस्याओ की चर्चा करत। युवका के साथ ताश खेलते और छाट बच्चा स भी बडे प्रेम से मिलन थ। खानपान के मामलो म वह उत्तम से कभी नीचे नही जाना चाहन थ और अच्छे से अच्छा भोजन बनाने

मे निष्णात थे। एक बार उन्होने मुझे भोजन के लिए आमन्त्रित किया। वह जानते थे कि हम लोग पूरे शाकाहारी हैं इस पर कभी कभी हलका मजाक भी किया करते थे, परतु उन्होने कभी किसी की वयक्तिक रुचि या स्वतन्त्रता पर आक्षेप नही किया। उस दिन कहने लगे 'आप निरामिषभोजी हैं। आपको सर्वोत्तम भोजन तो खिलाया नही जा सकता फिर भी मास का स्वाद कसा होता है, इसका कुछ आभास आपको आज मिलेगा।' और उन्होने गोभी के बडे बडे टुकडे काटकर प्रचुर और समुचित मसाला से साग बनाकर हम खिलाया और पूछा गोभी की तरकारी आपको पसद आई? समझ लीजिए कि इसका चौगुना स्वाद क्या होगा? वही स्वाद आमिष भोजन का होता है। मैन उनका औपचारिक रूप से समथन किया।

निराला की निर्भीकता बहुख्यात रही है। जब कभी व गाव आते, रात नौ या दस बजे तक हमारे गाव पर रहा करत थे। उनसे कहा जाता कि रात यही रह जाइए तो वह बहुत कम इस प्रस्ताव को स्वीकार करते। रात उजेली हो या अधेरी वे चल देत और डेढ दो मील सूनी वाडियो और बगीचा को पार कर अपने घर पहुचते। बरसात के दिना म लान नामक नदी जो उनके रास्त म पडती थी बेहद भयावनी हो जाती थी। उसका पाट खूब बट जाता था और वेग का तो कहना ही क्या! परतु निराला एक हाथ म कुर्ता धोती लिए दूसरे हाथ से तरकर उस बरसाती नदी को न जान कितनी बार तर गए थे। कहा जाता है कि महिषदल मे निराला श्मशानसेवन किया करत थे और साथ ही वहा के प्रसिद्ध मदिर मे देर तक बठे रहत थे। ये दोनो ही बाते मुझे सत्य प्रतीत होती हैं।

सन 28 के पश्चात निराला का स्वास्थ्य कुछ खराब हुआ था। वह उन दिनो कलकत्ता रहा करत थे और वही से अस्वस्थ होकर काशी आए थे और महीन दो महीन वहा रह थे। उन दिनो मैं काशी विश्वविद्यालय की एम० ए० कक्षा का विद्यार्थी था। निराला कभी प्रसाद के घर और कभी हमारे 'जायभवन लाज' म रहा करते थे। समवयस्क या अपन से छोटी उम्र के लोगो के साथ रहन म उनकी अधिक रुचि थी। अपन से बडो के साथ उन्ह अशात सकोच होता था। प्रसाद स उनका वार्तालाप सीमित होता था। दोनो एक दूसरे का सम्मान करते थे परतु निराला उम्र म छोट होन के कारण प्रसाद का वयक्तिक सम्मान अधिक देत थे। जिस रोग की चिकित्सा के लिए वह काशी आए थ वह त्वचा सबधी रोग था। होमियोपथिक दवा स उन्ह लाभ हुआ था।

काशी विश्वविद्यालय म हमारे साथ रहत हुए निराला बहुत शीघ्र हमारे नव साहित्यिक मित्रा स परिचित और घनिष्ठ हो गए थे। डा० रामअवध द्विवेदी, सुधाशु, सोहनलाल द्विवेदी तथा अन्य प्राय एक दजन तरुण और उदीयमान साहित्यिको के कमरा म जाकर वह कभी ताश खलन और कभी साहित्यिक वार्तालाप

करत। उनके आत्मीय गुणो से प्रभावित हाकर हमारे साथी उन्ह दिन रात घेरे रहत। निराला साहित्यिक क्षेत्र मे प्रसिद्ध हो चुके थ। वह अपनी कविताओ को जिस ओजस्विता और गतिशील लय म सुनात थ, वह उस समय के श्रोताओ के लिए एक अविस्मरणीय वस्तु थी।

इसी सहज सम्मिलन का परिणाम यह हुआ कि एक दिन मेरे मित्रा न आकर प्रस्ताव किया कि विश्वविद्यालय म निराला का भाषण और काव्यपाठ कराया जाए। मैं उन दिनो एम० ए० (अतिम वष) की कक्षा मे था और हिंदी अध्यापको का स्नेहभाजन बन चुका था। उन दिना विभाग की हिंदी समिति का मैं कर्ता-धर्ता भी था। मैंने विभागाध्यक्ष डा० श्यामसुदरदास से जब इस विषय का प्रस्ताव किया तब उन्होन आचाय रामचद्र शुक्ल और अयोध्यासिंह उपाध्याय से मिलने और उन्ह राजी करन का सकेत किया। आचाय शुक्ल न नाही तो नही की पर किसी अन्य काय म लगे रहन का उल्लेख किया। हरिऔध' राजी हो गए और हम लोगा की सभा उन्ही की अध्यक्षता म प्रारभ हुई। प्रसाद तथा नगर के अन्य साहित्यिक भी आए हुए थे। निराला आरभ मे आधुनिक हिंदी कविता का विकास क्रम बतात रह। पूववर्ती कवियो की प्रशसा भी की, परतु ज्यो ही वे नए छायावादी काव्य की चर्चा करने लगे, सहसा उत्तेजित हो गए और बोले 'हमारी इस कविता का पुरान साहित्यिक और समीक्षक उसी प्रकार नही समझ सकते जिस प्रकार काई मिडिल कक्षा का विद्यार्थी एम० ए० के पाठ्यक्रम का नही समझ सकता।' शायद निराला अपनी कविता के विरुद्ध उठाए गए उन दिनो के साहित्यिक आदोलन से विक्षुब्ध थे अन्यथा उनका सा सहृदय और शीलवान व्यक्ति ऐसे वाक्य का प्रयोग नही कर सकता था। पर जो कुछ होना था हो चुका था। सभा म एक विचित्र दृश्य उपस्थित हो गया। 'हरिऔध' जो मुख पर अपार स्नेह करते थे, सभा छोडकर चले गए। आचाय शुक्ल को सूचना मिली तो वह मुझसे खिन्न और रुष्ट हो गए। बाबू साहब (डा० श्यामसुदरदास) इस विषय म अधिक तटस्थ थे, उन्होंने पूरा वत्तात सुनन के बाद एक मद मुस्कान से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। उस दिन के भाषण के बाद काव्यपाठ भी हुआ। नए साहित्यिक विद्यार्थी सकडो की सख्या म निराला का कवितापाठ सुनकर आह्लादित और विमुग्ध हुए। तभी से काशी विश्वविद्यालय म नए कवियो और साहित्यिको की गाष्ठिया बहुतायत से हाने लगी। निराला को जब उस दिन के उनके भाषण म उठन वाली हलचल की सूचना दी गइ, तब वह पहले तो जी खालकर हस, पर बाद म उन्हें इस बात की चिता हुई कि कही अध्यापको के क्षोभ और रोष के कारण मेरा अहित न हो जाए। परतु वे दिन दो साहित्यिक पीढियो के बीच इतन सघष के थे कि इस विषय म लाभ-हानि की चिता करना व्यथ ही था।

1929 के पश्चात निराला के जीवन म सघष की स्थिति अधिक गभीर हान लगी। वह कलकत्ता स उत्तरप्रदेश चले आए थ और गाव पर ही रहन लग थ। गाव स लेख कविताए पत्र पत्रिकाआ का भेजा करत थ परन्तु उनस मिलन वाला द्रव्य इतना कम था कि परिवार का निर्वाह कठिन हो गया था। फिर भी निराला उद्याग करन म किसी प्रकार पिछड़े नहीं। उन्हान कविता और साहित्यिक निबधा के अतिरिक्त कहानिया और उपन्यास लिखन शुरू किए। इन कथाकृतियो का वह प्राय एकमुश्त बच देत थ और जा कुछ पसा मिलता उसी स काम चलात थ। सन 30 म वह गाव स लखनऊ आ गय और वहा रहकर स्वतन्त्र लखन का काय करन लग। इसी समय व 'सुधा' पत्रिका का सपादकीय काय भी थोडा बहुत दखत थे। इसी वष उनका प्रथम काव्य सग्रह परिमल गगा पुस्तकमाला लखनऊ म प्रकाशित हुआ था। इसक पहले उनकी एक छाटी काव्य पुस्तिका 'अनामिका' नाम से प्रकाशित हुई थी परतु उसमे कुल सात कविताए थी। परिमल' निराला के उस समय तक क समस्त काव्य का सगहीत रूप था, यद्यपि उसम आरभिक कवि ताए तथा कुछ ऐसी भी रचनाए जो प्राप्त न हो सकी थी छोड दी गई थी। निराला के काव्य प्रकाशन म होन वाला यह विलब उस समय क हिन्दी प्रकाशन जगत की स्थिति पर एक कडी टिपण्णी है परतु वह निराला की उस अदम्य वत्ति का भी परिचायक है जो किसी प्रकाशक के इद गिद मडराना नही जानती थी।

सन '31-32 मे निराला पुन एक बार कलकत्ता गए थ। वहा उनके कुछ साथिया न रगीला नामक पत्र निकालन का आयोजन किया था। कलकत्ता जात समय वह प्रयागमे मेर घर पर ठहरे थे उनकी मानसिक स्थिति काफी गिरी हुई थी। वास्तव म वह कलकत्ता जाना नही चाहत थे क्योकि वह जानत थ कि रगीला पत्र उनकी आवश्यकताओ की पूर्ति नही कर सकेगा। परतु उस समय उनके समक्ष एक विवशता भी थी। एक देशव्यापी महगाई का दौर चल रहा था। बेराजगारी बढ रही थी। आय के द्वार बद हो रहे थ। ऐसी स्थिति मे निराला का कलकत्ता जाना अनिवाय हो गया था। कलकत्ता जाकर भी वह वहा अधिक समय नही ठहर। रगीला' की गतिविधि उ ह आकृष्ट नही कर सकी। इस पत्र म निराला की जा कविताए छपी थी उनम एक मथर गति है जो कवि के मानसिक अवसाद का परिचय दती है। काई कवि या साहित्यकार चाह जितना सशक्त हो विपरीत परिस्थितिया अपना प्रभाव डालती ही हैं।

इसी समय निराला ने अपनी पुत्री सरोज का विवाह गाव म किया था। कदाचित यह उनका सबस कमजोर आर्थिक वष था। फलत इस विवाह म जहा एक विवशता का वातावरण व्याप्त था वही एक विद्रोहपूण सकल्प भी उतना ही दढ था। इस विवाह क समय की निराला की मनावत्ति अत्यत द्वद्वग्रस्त थी। एक

ओर वह अपनी विपन्नता से बाधित और विवश हो रहे थे दूसरी ओर अपने दृढ़ निश्चय में अडिग भी बने हुए थे। उन्होंने विवाह की सारी व्यवस्था जिस स्फूर्ति और समारंभ में की थी और व्यक्तिगत रूप से सारे विवाहकार्य का जिस तरह अकेले संपन्न किया था वह उनके व्यक्तित्व के महान और निष्कंप निश्चय का ही परिचायक है। विवाह के चार पांच वर्षों के पश्चात पुत्री का निधन होने के पश्चात उन्होंने 'सरोज स्मृति' नामक जो मार्मिक रचना लिखी थी वह उनके उस समय के (पुत्रीविवाह से लेकर पुत्रीनिधन तक के) विचारमंथन का ही परिणाम है।

सन '31 32 के पश्चात निराला पुनः लखनऊ आकर रहे और प्रमुख रूप से स्वतंत्र लेखन का कार्य करते रहे। उनकी अधिकांश आरंभिक कहानियां और उपन्यास इन्हीं वर्षों में लिखे गए थे। निराला अपने इस कथालेखन कार्य को एक भिन्न ही स्तर का कार्य मानते थे, अपनी काव्यरचना से उन्होंने कभी इसकी तुलना नहीं की। इन वर्षों में उनकी परिस्थितियां उन्हें यथेष्ट मानसिक संतोष संतुलन और शांति देने में असमर्थ थीं। वे कथालेखन का कार्य प्रमुखतः अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए ही किया करते थे।

ज्योंही निराला ने अपने लखनऊ प्रवास में थोड़ी बहुत स्थिरता प्राप्त की, उनका ध्यान गीतरचना की ओर गया। 'परिमल' की मुक्तछंद की रचनाओं के पश्चात एकदम सधे हुए गेय गीतों का लिखना एक साहित्यिक चमत्कार ही था, जो केवल निराला ही कर सकते थे। निराला की सामाजिक और साहित्यिक विद्रोह की भावना क्रमशः संयमित होती जा रही थी और वह प्रवेग और प्रखरता के स्थान पर सौंदर्य और सांस्कृतिक भावना से परिचालित होने लगे थे। यह निराला का दूसरा काव्य प्रस्थान था। प्रकृत्या भिन्न होते हुए भी यह निराला के प्रारंभिक काव्य के समतुल्य साहित्यिक वशिष्ट्य रखता है।

इसी समय निराला ने अपने बड़े लड़के रामकृष्ण का विवाह लखनऊ में किया था। आर्थिक दृष्टि से यह निराला के अपेक्षाकृत संपन्नता के दिन थे। सरोज और रामकृष्ण के विवाहों के अवसर बहुत कुछ व्यतिरेकी कहे जा सकते हैं। सरोज के विवाह के समय निराला एकदम साधनहीन थे। रामकृष्ण के विवाह के समय उन्होंने न केवल कन्यापक्ष के लोगों को बंगाल से लखनऊ तक अपने व्यय से बुलाया था बल्कि वैवाहिक व्यय भी बहुत कुछ स्वयं ही वहन किया था। सरोज के विवाह के समय निराला की वृत्ति अतिशय अस्थिर और विवशतापूर्ण थी। रामकृष्ण के विवाह के अवसर पर वह अधिक आश्वस्त और निश्चित हो चले थे। इन दोनों विवाहों में निराला ने सामाजिक रीतियों और प्रथाओं का उल्लंघन किया था, परंतु पहला उल्लंघन समाज को एक चुनौती था दूसरा उल्लंघन (कन्यापक्ष को आर्थिक योगदान करने आदि का) सामाजिक प्रशंसा का विषय था। इन दोनों

पारिवारिक घटनाओ के समानातर रूप निराला के साहित्यिक व्यक्तित्व म भी बने गए थे। परिमल का मुक्तकाव्य यदि सराज की विवाह स्थिति का प्रतीक था तो 'गीतिका' के गीत रामकृष्ण के वैवाहिक परिवेश के प्रतिरूप थे ' इनके बीच चार-पाच वर्षों का अतर भी है।

यो तो निराला किसी लबी अवधि तक किसी एक स्थान पर नही रहे परतु पुत्री के निधन के पश्चात उन्होने अपना लखनऊ का किराय का मकान छाड दिया और व अपने मित्रा के साथ यत्र तत्र रहन लग। यद्यपि उनके मित्र उनका भरपूर सम्मान करत थ और उनके साथ रहने म अपना गौरव मानते थे, परतु निराला जी स्वय इस स्थिति से नितात प्रसन्न नहीं थे बल्कि समय समय पर एक अदभुत रिक्तता का अनुभव करते थे। अपने आप मे लीन होकर अपने से ही बातचीत करने की आदत उन्हे इसी समय पडी थी। यो निराला जी पिछले कुछ वर्षों स एकातिक होने लगे थे। कई बार मित्रो के यहा होने वाली साहित्यिक जमातो म व कोई दिलचस्पी न लेकर अलग ही बठे रहते थे। पडित श्रीनारायण चतुर्वेदी जी के यहा इस प्रकार की बठकें प्राय होती थी और निराला अधिकतर मौन ही बठे रहते थे। इन्ही दिनो (छत्तीस के पश्चात) उनके काव्य म व्यग्यात्मकता बढन लगी। उनके आरभिक व्यग्य अधिकतर वयक्तिक भूमि पर हुआ करते थे। जिनसे उनकी निजी मानसिक व्यथा और अवसाद का पता लगता था। आगे चलकर उनके व्यग्य और विनोद सामाजिक भूमिका पर पहुचे परतु सन '36 से '40 तक की कविताओ म व्यग्य का स्वरूप वैयक्तिक ही रहा है। कदाचित इसी नियति की भूमिका पर उन्होन सन 38 म वह कविता लिखी थी जिसका उद्धरण हमारे एक विद्यार्थी ने 'निराला के परवर्ती काव्य' शीर्षक पुस्तक मे दिया है। कुछ पक्तिया इस प्रकार हैं

विश्व सीमाहीन।
बाधनी जाती मुझे कर कर
व्यथा स दीन।
कह रही हो —दुख की विधि —
यह तुम्हे ला दी नई निधि
विहग के व पख बदले—
किया जल का मीन।
मुक्त अम्बर गया अब तो
जलधि जीवन को।

सन '36 के पश्चात निराला के व्यक्तित्व म उत्तेजना की वृत्ति बढन लगी थी। इसका कारण हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रति किए जाने वाले उच्चतर क्षेत्रो के आक्षेप थे जिन्हे सहन करना किसी भी स्वाभिमानी साहित्यकार के लिए सभव न

था। पर जिस सीमा तक यह असहनशीलता निराला म दिखाई पडी उसम उनकी वयक्तिक प्रतिक्रिया भी कुछ न कुछ अवश्य थी। महात्मा गाधी से उनकी हिंदी कविता सबधी बातचीत, पडित नेहरू से हिंदुस्तानी पर विवाद और फजाबाद सम्मेलन म पुरुषोत्तमदास टडन और सपूर्णानद आदि स उनकी बहस, उनके निजी आक्रोश को सूचित करती हैं। जहा एक ओर उनकी मनोभावना इस प्रकार तीव्र हो रही थी, वहा दूसरी ओर उनकी कविताओ म वयक्तिक व्यग्य का प्रवेश हो रहा था। ये घटनाए उनकी पुत्री के निधन के तत्काल पश्चात की है। इनस निराला के क्षुब्ध होत हुए मनोभावो का अनुमान किया जा सकता है। वह उन दिनो अपनी सहज वनि की और अपन गभीर और शालीन स्वभाव को स्थिर नही रख पाए थे। यद्यपि यह बडी हद तक स्वाभाविक था परतु निराला के इस बदले हुए मनोभाव का उल्लेख करना आवश्यक है। उनके काव्य पर और उनके साहित्यिक लेखन पर भी इसकी प्रतिक्रियाए बहुत कुछ स्पष्ट है। उनके व्यग्य का य का उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं। इन्ही दिनो उनकी कुछ अधिक लबी और उदात्त रचनाए भी लिखी गई थी जिनमे 'राम की शक्तिपूजा और तुलसीदास प्रमुख है। राम की शक्तिपूजा' म राम की विजय एक उत्कट साधना के पश्चात उपलब्ध होती है। सारी कविता उस साधना का ही आलेख करती है। इसी प्रकार 'तुलसीदास म मुख्य विवरण उन विपरीत परिस्थितिया का है, उस अधेरी सध्या का है -- जिसका उच्छेद करत हुए 'तुलसी शशि' का उदय होता है। इस लबी कविता के आरभ मे भारत क सास्कृतिक सूय का अस्त होना और अत म तुलसी शशि' का उदय होना आलेखित हुआ है। यदि इन दोनो कविताओ मे व्याप्त विपरीत परिस्थितिया को निराला के निजी व्यक्तित्व म व्याप्त विपण्ण चेतना स सयुक्त करके देखा जाए, तो यह ज्ञात होगा कि कवि निराला चतुर्दिक व्याप्त अवरोधा म विजय की सभावना को अतिम आशा के रूप मे देखन लगे थे। इसी के साथ जब हम उनके गद्यलेखन मे भी व्यग्यात्मक कथानको और रेखाचित्रो को देखन है और समीक्षा की भूमिका पर सुमित्रानदन पत पर धारावाहिक रूप म दोपदशन के निबधो को पढन हैं तब यह आभासित हो जाता है कि ३6 से 40 तक निराला की मन स्थिति म काफी परिवतन हो गया था और वह सतुलन की भूमिका से दूर हात जा रह थे।

मन '40 के पश्चात निराला अधिक अतमुख रहने लगे और उनकी बातचीत मे थोडी बहुत अव्यवस्था भी दिखाई दन लगी। मन ही मन कुछ बातचीत करते हुए अचानक ठहाका मारकर हस पडना अपन को रवीद्रनाथ का परिवारी बताना और चर्चिल रूजवेल्ट आदि से होनवली बातचीत का जिक्र करना इन्ही वर्षों की विकृतिया हैं, जो क्रमश निराला पर हावी होन लगी थी।

सन '41-'42 म निराला कई महीना तक मेरे साथ रहे थ, जब मैं काशी म दुर्गाकुंड पर रहा करता था। विश्वविद्यालय म मेरी नियुक्ति हो चुकी थी। इन दिना निराला यद्यपि मानसिक दृष्टि से काफी खिन्न और आत्मलीन हो चुके थ, परतु व्यावहारिक भूमिका पर उनकी व समस्त विशेषताए अक्षुण्ण थी जो सन 24 म उनस प्रथम भेट के दिनो म दिखाई पडी थी। एक बार यह जान लेन पर कि हम लोग निरामिषभाजी हैं उन्हाने कभी भी हमारे परिवार की भोजनचर्या म अनिच्छा नहीं दिखाई और रुचिपूवक हमारे घर का भोजन करत रह। महीन पन्द्रह दिन म जब उन्ह रुचि परिवतन के लिए आमिष की आवश्यकता पडती वह अपन किसी अन्य मित्र के यहा चले जात थ और वहा स भोजन करके लौट आत थे। उस समय तक मेरा बडा लडका स्वस्तिकुमार पाच वष का हो चुका था। वह उस बहुत स्नह करत और विनोद म उसका नाम सुस्तकुमार कहा करत थ। मुझ से भी उन्हान एकआध बार स्वस्ति और सुस्त' के उच्चारण साम्य पर विनोदात्मक चर्चा की थी।

कुछ दिन पश्चात निराला काशी म रामघाट पर स्थित राष्ट्रभाषा विद्यालय चले गए क्योकि विद्यालय क अध्यापक महोदय न बहुत अधिक आग्रह किया था। यद्यपि स्नहवश निराला कुछ भी करन का तयार हो जात थ पर आग चलकर उन्ह उस स्नह का महगा फल मिला करता था। लोग उनस तरह तरह क आकाक्षित अनाकाक्षित काय करा लिया करत थ और यह सब स्नह के ब्याज स ही हुआ करता था। काशी स कुछ समय बाद व प्रयाग चल गए थ और महादवी वमा क साहित्यकार ससद भवन म रहन लग थे। यह भवन उन्ह महादवी क नाम स तो प्रिय था परतु वहा उन्ह कई प्रकार की असुविधाए भी रहा करती थी। प्रयाग म रहत हुए उन्हान कइ स्थान बदले थ। उनका अधिक सपक वाचस्पति पाठक और पडित श्रीनारायण चतुर्वेदी से रहा करता था। वाचस्पति पाठक उनक ग्रथो क प्रकाशक थे और चतुर्वेदी जी उन्ह इडियन प्रेस के मारफत अनुवाद आदि का काय दिलाया करत थ। निराला की इन दिना की मनोवत्ति का परिचय उनकी कुकुरमुत्ता खजोहरा और स्फटिक शिला जैसी रचनाओ म मिलता है। 'कुकुरमुत्ता म गुलाब और कुकुरमुत्ता सपन्न और असपन्न दोना वर्गों पर व्यग्य है। उनकी दष्टि म पूरा सामाजिक जीवन ही हास्यास्पद होता जा रहा था। यह निराला क व्यक्तित्व की ही विशेषता थी कि इस चतुर्दिक व्याप्त असस्कारिता का खुली आख देखकर वह उसका उपहास कर सकत थ। दूसरा कोई सामान्य कवि या लेखक ऐसी स्थिति म अपने द्रष्टा रूप की रक्षा नहा कर सकता था। खजोहरा ग्रामीण समाज की कुरूपता और कुव्यवस्था का एक प्रतीकचित्र है। ग्रामीण नायिका का उपहास करन म यद्यपि निराला अशत औचित्य की सीमा

पार कर गए हैं पर उस प्रतीकचित्र के रूप में देखने पर ग्रामीण जीवन के प्रति उनकी यथार्थ दृष्टि का प्रत्यय मिलता है। 'स्फटिक शिला' में आदि से अंत तक व्यंग्य का प्राधान्य है। चित्रकूट की पूरी यात्रा पिछड़ी हुई सामाजिक स्थितियों का प्रतिरूप है।

प्रयाग से वापस आकर निराला कुछ दिनों तक पुनः उन्नाव में रहे थे। चौधरी साहब और सुमित्रा सिंहा उन्हें आदरपूर्वक रखते थे, इसलिए निराला वहां लंबे समय तक रहने में भी ऊबते नहीं थे। परंतु इस बीच उनकी मानसिक स्थिति काफी गिर गई थी और उन्हें संदेह होने लगा था कि उनके चारों ओर किसी प्रकार का पहरा लगा हुआ है। इन वर्षों में 'राज' शब्द का प्रयोग निराला विशेष अर्थ में किया करते थे। वह कहते थे कि लोग उन्हें राज नहीं देते। उनका अर्थ यह होता था कि लोग उनसे सहज भाव से बात नहीं करते। दिलों में कुछ रखकर कहते कुछ और हैं। इस प्रकार की मनोवृत्ति काफी गहरी हो गई थी और बदले में निराला निरंतर सशंक रहने लगे थे। वह अपने मन में ही बहुत कुछ उल्टा करते थे और रह रहकर अपने आप ही हंसा करते थे।

जहां तक काव्यरचना का प्रश्न है, निराला इन वर्षों में (सन् 45 के आसपास) वैयक्तिक व्यंग्य और असहिष्णुता के स्तर से निकल चुके थे और 'जूही' व 'राम की शक्तिपूजा' आदि की उदात्त भूमिका को छोड़कर सहज हास्य और विनोद के भावस्तर पर आ गए थे। उनके 'नये पत्ते' काव्यसंग्रह में इस सरल हास्य और विनोद का पूरा निदर्शन मिल जाता है। निराला के हास्य का विषय समाज की कृत्रिमताएं, छिछलापन, और मिथ्या आचार था। निराला की इन रचनाओं में सहजता का आगमन, एक नया उन्मेष ही कहा जाएगा जो एक ओर उनके वैयक्तिक व्यंग्य से और दूसरी ओर उनके आलंकारिक औदात्य से श्रेष्ठतर श्रेणी का भाव विन्यास है। इन्हीं वर्षों में उनकी भाषा बदल चली और वह बोलचाल के ठेठ प्रयोगों को अपनाने लगे। एक तो हास्य विनोद में यों भी गरिष्ठ भाषा काम नहीं देती, पर अन्य प्रकार की रचनाओं में भी सरल और सहज भाषा का एक नवीन अध्याय निराला की काव्य रचनाओं में आरंभ हुआ था।

अपनी अस्वस्थता और मानसिक विक्षेप के दिनों में निराला ने कुछ अपूर्व और आश्चर्यजनक काव्यप्रयोग भी किए थे। इनमें से एक प्रयोग उनकी उर्दू शैली की गजलों का है। यों तो निराला का संपर्क उर्दू कवियों और लेखकों से बहुत पुराना था, परंतु पिछले वर्षों में वह जोश मलीहाबादी और फिराक से साहित्यिक मशविरा किया करते थे। उनके कुछ उर्दू कवि मित्र लखनऊ में भी थे। अपने परवर्ती काव्य में संस्कृत का प्राचुर्य छोड़कर उन्होंने जो आसान भाषा अपनाई, उसमें थोड़ा बहुत असर उर्दू कविता के साहचर्य का भी रहा है। 'कुकुरमुत्ता' का

पहला सस्करण प्रकाशित हान के पश्चात उन्हान अपन उर्दू मित्रा से इस्लाह लेकर बहुत कुछ रद्दोबदल किया था। इस कविता की पहली और दूसरी आवत्तिया को देखन पर उर्दू की रचनाशली के नए प्रभाव दिखाई दत है। उनक 'बला' काव्यसग्रह म तो उर्दू अपन परिनिष्ठित रूप म आ गीत हुई है। इन कविताओ को देखन पर निराला की उस उत्तामक प्रतिभा का परिचय मिलता है, जो नवीन शलिया और नए मार्गो का अनुसरण करन म हिचकती नही थी। निराला का यह उर्दू काव्य स्वतत्र अध्ययन की वस्तु बन गया है। यह काव्यरचना उन्हान अपनी पूण अनाविल मनोदशा म नही की है। इन कविताआ म उन्हें एक दुहरे प्रयास की आवश्यकता पडी है। एक तो नई भाषा और नई काव्य शली के सजन का प्रयास और दूसरे मानसिक दौबल्य से ऊपर उठन का प्रयास। इस दोहरे सघष म य कविताए यत्र-तत्र बेडौल भी हो गई हैं, परतु अधिकतर रचनाआ म एक बडे कवि का सधा हुआ हाथ दिखाई पडता है।

सन 47 के जनवरी मास म निराला के इक्यावनवें जन्मदिवस पर हम लोगा न उनकी स्वणजयती मनाने का आयोजन किया था। यद्यपि यह शका हमारे मन म बनी हुई थी कि निराला इस अवसर पर कोई सतुलित भाषण दे सकेंग या नहीं—कही बहक ता नही जाएगे, पर जयती के अवसर पर काशी म एकत्र हुए अपन पचासो साहित्यिक मित्रो को दखकर उनका मन उत्फुल्ल हो गया। उन्हान स्वामी विवकानद की जसी पोशाक बनवाई और उस पहनकर बहुत प्रसन्न हुए। दिन म आचाय नरेंद्रदेव का उद्घाटन भाषण होन के पश्चात जब निराला के सबध म अन्य अनक भाषण हो चुके और उनसे कुछ कहन का निवदन किया गया तब आरभ म व उचित रूप से कृतज्ञता ज्ञापन करत रहे। सहसा उनकी अति-कल्पना जागत हुई और वह यह चर्चा करने लगे कि उन्ह महारानी विक्टोरिया न अपना ग्रास किस प्रकार दिया था। परतु हम लोगा ने उन्हें तुरत ही सभाला और उनस दो एक कविताए सुनाने का आग्रह किया। निराला मान गए और कुछ कविताए सुनाकर समारोह का सफलतापूर्वक समापन किया। रात्रि को कवि सम्मलन म व और भी अधिक सुस्थिर थ। दिनकर बच्चन जानकीवल्लभ और सुमन जस कविया की प्रशसा करत हुए उन्होंने कहा कि अब मेरी आवाज मेरा साथ नही दती। अब मैं अपना यह रिक्थ नई पीढी के युवक कवियो पर छोडकर प्रसन्न हू। दूसरे दिन काशी विश्वविद्यालय म अध्यापका और विद्यार्थिया की सभा म उन्हान बहुत सतुलित भाषण दिया और अपन हाथ से नई पीढी के दस बारह कविया को सौ और दो सौ रुपए का उपहार देकर हष का अनुभव किया।

निराला स्वण जयती के पश्चात प्राय दो वर्षों तक उनका स्वास्थ्य बहुत

कुछ ठीक रहा। यद्यपि वे वयक्तिक वर्तालाप मे कभी कभी असबद्ध बातें कहने लगते थे, परतु उसकी स्मृतिशक्ति अव्याहत थी और वे छोटी से छोटी घटनाओ का बडा ही सटीक उल्लेख किया करते थे। हिंदी काव्य के लिए बडे सौभाग्य की बात थी कि निराला इन वैयक्तिक व्यतिरेको के रहते हुए भी काव्य रचना के समय एकदम अस्खलित रहा करते थे। सन '50 से आरभ होने वाले उनके गीतो मे एक प्रशात और भावनामयी दृष्टि का सचार हो गया था। उनके व्यक्तिगत आक्रोश और दुश्चिताए दूर हो गई थी। उन्होने कुछ कविताओ म देश के विशिष्ट जना और हिंदी के कुछ वरिष्ठ कविया के प्रति अपनी सम्मान भावना व्यक्त की थी। ऐतिहासिक भूमिका पर महात्मा बुद्ध और विक्रम द्विसहस्राब्दि पर बडी ही भावपूर्ण और बहुज्ञता की परिचायक रचनाए प्रस्तुत की थी। रामकृष्ण परमहस तथा उनके आश्रम से सबधित कुछ रचनाए भी उन्होने इन वर्षो म लिखी थी। परतु वे बडी और लबी कविताए सख्या म अधिक नही है। सन '50 से लेकर अत समय तक निराला विनय और आत्मनिवेदन के गीत ही लिखते रहे थे।

निराला के काव्य मे तथा गद्यसाहित्य म भी प्रकृति के प्रति घनिष्ठ आत्मीयता निरतर उदभासित होती रही है। उन्होने ऋतु सबधी कविताए सन '16 से लेकर '61 तक बराबर लिखी। आरभ म वह प्राकृतिक सौंदय को मानवीय रूपकात्मकता देकर अकित करते थे। इन आरभिक कविताओ म आनद, उल्लास और सौंदय का वातावरण व्याप्त है। इन कविताओ से यह व्यजित होता है कि मानवीय सयोग और वियाग के भावो से वह पूणत प्रभावित थे। उनका प्राकृतिक श्रृगार वर्णन मानवीय श्रृगार से मिलकर एक हो गया था। 'बादलराग और 'जागो फिर एक बार' कविताओ म प्रकृति का प्रयोग मानव जीवन की प्रेरणादायक सत्ता के रूप म हुआ है। यह भी प्रकृति के प्रति गभीर आस्था और आकषण का द्योतक है। परवर्ती कविताओ म भी मानवीय वणना के साथ प्रकृति का योग अभिन्न रूप से बना हुआ है। राम की शक्तिपूजा' म प्रकृति की पृष्ठभूमि सवत्र भास्वर है। अपने परवर्ती काव्य मे जब निराला मानव समाज और उसकी विकृतियो से हताश हो गए थे, तब उन्होंने प्रकृति और ऋतुवणनो म मानव का सपक छोड दिया है। वह इन वर्षो मे वस्तुमुखी प्रकृतिवणन के अभ्यासी हो गए थे। ऐसा ज्ञात होता है कि प्रकृति निराला के काव्य का ही नही उनके वयक्तिक जीवन को भी अवलब और आश्वासन देती रही है। प्रकृतिसौंदय के प्रति निराला का आकषण सुना सुनाया या पढा-पढाया नही था, वह उससे गहरे आत्मीय सबधो मे बधे हुए थे। अनेक बार निराला के साथ घूमते हुए मैंने उन्हे सहसा रुककर किसी पुष्प उदभिज या वनस्पति को दर तक उल्लासपूवक देखते हुए पाया है। वह न केवल पुष्पो का हार पहनना पसद करते थ, न केवल उनके घ्राण से

आप्यायित होते थे पुष्पों के रूपों रंगों से भी उन्हें अपार प्रेम था। अनेक पुष्पों और वनस्पतियों की उनकी पहचान इतनी सहज थी कि स्मय पर आश्चर्य होता था। उनके अंतिम वर्षों में विनय और आत्मनिवेदन के गीतों के साथ प्रकृति सौन्दर्य संबंधी गीतों की संख्या बहुत कुछ समतुल्य है।

सन 50 से 60 तक का जीवनकाल निराला के संबंध में अनेक किंवदंतियों और अतिरंजनाओं से आच्छन्न है। इन वर्षों में वह प्रायः प्रयाग में ही रहे थे। कमलाशंकर उनके गृहपति थे, जो निराला की संपूर्ण देखभाल किया करते थे। वहां रहकर ही निराला ने 'अर्चना' 'आराधना' और 'गीतगुंज' के गेय पदों का निर्माण किया था। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'चमेली की पकड़' और 'काले कारनामे' शीर्षक दो उपन्यास भी लिखने का उपक्रम किया था परंतु उन्हें वह पूरा नहीं कर सके। जो अंश लिखे गए हैं उनमें निराला की किसी समग्र कृति को लिखने की असमर्थता स्पष्ट हो जाती है। यह भी उनके मानसिक गतिरोध का लक्षण और प्रमाण है। इन वर्षों में लंबी काव्यकृतियां भी उन्होंने लिखीं अंतरंग भावना के तत्कालीन उन्मेष को निराला छोटे छोटे गीतों में ही बांध सके हैं। उनमें दीर्घ रचना के लिए अपेक्षित एकाग्रता और समाहार की विशेषताएं क्षीण हो चली थीं। उनके गीत भी अलंकृतियों और कल्पना की योजनाओं से बहुत कुछ विरहित हो चले थे। इन गीतों को आध्यात्मिक इस विशेष अर्थ में कहा जा सकता है कि इनमें निराला शांत और करुण रस की उस भावभूमि पर आ गए थे जो कवित्व की अपेक्षा समर्पण की वृत्तियों से अधिक परिचालित थी। महादेवी वर्मा के गीत भी कुछ क्षेत्रों में आध्यात्मिक और रहस्यवादी कहे जाते हैं। पर निराला के 'अर्चना' 'आराधना' आदि के गीतों से उनकी तुलना करने पर निराला के गीत अधिक गहरे आत्मसमर्पण के प्रतिनिधि हैं। निराला के अंतिम वर्षों के गीत संतकाव्य की श्रेणी में परिगणित हो सकते हैं जब कि महादेवी के प्रगीतों की यह श्रेणी सिद्ध नहीं होती। महादेवी की काव्यालंकृतियां और कल्पना की सज्जा उनके प्रगीतों को साहित्यिक सौंदर्य से संबद्ध रखती है परंतु निराला यहां एक श्रेणी आगे पहुंच गए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कल्पना सौन्दर्य से भी उच्चतर कोई सौंदर्य है जो निराला के गीतों में व्याप्त है। आधुनिक पश्चिमी विवेचकों ने कल्पना के वैशिष्ट्य से बढ़कर साहित्य के लिए समर्पण या साक्षात्कार का वैशिष्ट्य स्वीकार किया है। निराला के अंतिम वर्षों के प्रायः 300 गीतों में समर्पण की यह स्थिति देखी जाती है।

किंतु प्रतीकवादी कवियों का वैयक्तिक साक्षात्कार न होकर निराला का यह वेदांतिक साक्षात्कार ही कहा जाएगा। वैयक्तिक साक्षात्कार में कवि केवल ऐसी सत्ता से संपृक्त रहता है जिसका वैशिष्ट्य उसके नीजी जीवन से है। उसकी सारी

अनुभूतिया व्यक्तिपरक होती है। निराला के इन गीतो म एक सावभौम सत्ता के प्रति समपण और निवदन की भावना सन्निहित है। इस सत्ता क प्रति आत्म निवेदन करत हुए निराला मानो समस्त मानवा की ओर स निवदन कर रह हो। तभी उनक अनक गीतो मे परम सत्ता स समस्त विश्व क प्रति करुणा प्रदर्शित करन की प्राथना की गई है। जगह जगह निराला ससार के विकारो क मोचन के लिए शक्तिमान सत्ता का आवाहन करत हैं। समपण के इस स्वरूप का समथ विना निराला क इस समपण काव्य का आशय नही जाना जा सकता।

एक ओर निराला का यह अनाविल काव्य है और दूसरी ओर व किवदतिया है जो उनको अनक अदभुत रूपा म व्याख्यायित करती है। वास्तव म इन वर्षो म निराला का काव्य और उनका व्यक्तित्व एक अनवरत सघष का प्रतिनिधि है। व्यक्तिगत रूप से निराला नाना व्याधिया — शारीरिक और मानसिक रुग्णताओ से ग्रस्त रहत थ, और दूसरी ओर वह इन व्याधियो का तिरस्कार कर कतिपय निमल क्षणो क अनुसधान म तत्पर रहे हैं। उनका इन वर्षो का जीवन यदि एक ऐसा आकार है जिसम धूल मिटटी और ककड पत्थर, चारो ओर विकीण है तो उनका काव्य उस माणिक या हीरक के समान है जो उस आकर स निसृत हुआ है। निराला के अतिम वर्षो की द्वत स्थिति बहुत स लाग नही समझ पात। वे उन्ह चौबीस घट बारह महीन, और दस वर्षों का सपूण सत मानत है उनके वाक्यो का प्रतीकाथ ढूढत है और उनक विक्षेप का छद्मवेश बताते हैं। वे निराला के इन वर्षों के नानाविध सतुलित और असतुलित कार्यों को एक अपूव महिमा मे मडित करके दखना चाहत है।

मेरा अपना अनुभव यह है कि निराला अपन अतिम वर्षो म अपना मानसिक सतुलन खो चुके थे। उनके पूवसस्कार दृढमूल थे, इसलिए उनकी वृत्तिया म शील सौजन्य और उदारता बनी हुई थी। वह अतिथियो का स्वागत अब भी सपूण हार्दिकता से करत थ। साहित्यिका का उचित समादर उनकी साहित्यिक साधना का अनिवाय प्रतिफल था। परतु इन सस्कारी प्रवत्तियो के विरुद्ध उनकी वे प्रवत्तिया थी जिन पर वे शासन करन म असमथ थे। खेद है कि इन्ही अतिवादी प्रवत्तियो का विनापन करन म कुछ लोग निराला की महत्त्व वद्धि मानत हैं। ऐसे लोगो को निराला का नादान दोस्त मानना ही उचित होगा। परतु निराला के दोनो दुश्मनो की सख्या भी कुछ कम नही रही जो इन नादान दोस्तो को बार बार प्रामाणिक बताकर अपना मतलब साधत थे। निराला क विवश और व्याधि ग्रस्त क्षणो को लेकर कुछ लोग उन्ह अपदस्थ करन और उनकी खिल्ली उडान का दुष्कम भी करते रहे हैं। ऐस लोगो को निराला के उन तथाकथित 'भक्तो के अचिंतित वक्तव्यो स सहायता मिलती रही है। इस प्रकार एक ओर निराला को

उनकी मानसिक विपन्नावस्था म अवतारी पुरुष घोषित करन वाले लोग रह हैं और दूसरी ओर उनकी उसी विपन्नावस्था मे किए गए कार्यों पर कपट प्रहार करन वाले चतुर लाग भी कायरत रह है।

निराला के अतिम कुछ दिना की जीवनकथा अत्यत कारुणिक है। वे कुछ दिना के लिए अपक्षाकृत स्वस्थ हो गए थ। लोगा न समझा अब सब ठीक है। वह बहुत कुछ निश्चित हो गए और निराला जो फिर मनमानी करन लगे। बीमारी की अपेक्षा स्वास्थ्यलाभ के दिना मे अधिक निगरानी की आवश्यकता पडती है, पर लोग इस आवश्यक नियम को भी भूल गए। फल वही हुआ जो होना था। भोजन सबधी अतिचार से निराला पुन रोगग्रस्त हुए। डाक्टरा न आपरेशन की सलाह दी। निराला राजी नही थ। उन्होन आपरेशन के विरोध म शायद यह कहा कि यह परिश्रम की पद्धति है अथवा इसी प्रकार का कोई अन्य तक दिया। लोगो न समझा निराला यहा भी भारतीय सस्कृति की रक्षा कर रहे हैं। सभावित रोग मुक्ति की अपेक्षा उन्होंन भारतीय सस्कृति की रक्षा सबधी निराला की तथाकथित इच्छा का अधिक महत्व दिया। समय बीतता जा रहा था। आवश्यक निणय लेने म लोग असमथ रहे। ऐसी ही परिस्थिति म निराला का शरीरात हुआ। ऊपर के वक्तव्य की सपूण प्रामाणिकता का आग्रह मैं नही करता। मैं उस स्थान पर उन दिनो नही था पत्रा म छप वक्तव्यो का आधार लेकर ही मरी यह धारणा बनी है। सभव है इसम विवरण की गलतिया हा परतु जो बात मैं यहा कहना चाहता हू वह यह है कि निराला के अतिम दिनो की चिकित्सा और अच्छे ढग स की जा सकती थी। सन '47 के पश्चात जब राष्टीय सरकार इस देश मे कायम हुई, तब वह निराला क स्वास्थ्य पर अधिक तत्परता से ध्यान दे सकती थी। मानसिक विक्षेप के आरभिक लक्षण देखकर ही उन्ह विशेष चिकित्सा दी जा सकती थी। विदश भी भेजा जा सकता था। उन्ह किसी सामान्य नागरिक के घर म न रख कर - चाहे वह कितना ही श्रद्धालु क्या न हो—उन्ह सरकारी अस्पताल म विशिष्ट रोगी क रूप मे रखा जा सकता था। उन्ह उनकी इच्छा पर न छोडकर नियमपूवक उनकी शुश्रूषा की जा सकती थी। उनकी आर्थिक और पारिवारिक चिताआ को दूर करन क उपाय भी किए जा सकते थ। निराला भारतीय राष्ट्र की एक अनुपम विभूति थ। राष्ट्र न उनके प्रति अपने कतव्य का पालन नही किया यह ता कहना ही पडेगा।

निराला एक असाधारण और महान पुरुष थ। एक सामान्य परिवार म उत्पन्न होकर उन्हान काव्य और साहित्य की जो साधना की तथा जो उत्कष प्राप्त किया वह इस युग की एक महान घटना है। निराला क व्यक्तित्व की कतिपय विशेषताए किसी भी दश काल म महत्त्वपूर्ण मानी जाती पर भारतीय परिस्थितिया

म व और भी अविस्मरणीय हो गई है। एक एस युग म उत्पन्न होकर जो बाह्य शिष्टाचार और दिखावटी व्यवहार का सब कुछ मानता था उन्होंने विशिष्टता के नए प्रतिमान उत्पन्न किए। उनक चरित्र की सबस बडी विशेषता शिष्टाचार के कृत्रिम स्वरूप का खडित कर सत्याचार की प्रतिष्ठा करन म थी। जो लाग जन्म स बडे होकर आन है, वे बडप्पन की रक्षा म ही सारी शक्ति लगा देते ह और इस प्रकार एक मीडियाक्रिटी का ही निमाण करते ह। निराला म इस प्रकार की काई मीडियाक्रिटी नही थी। हिंदी साहित्य क उस युग म निराला का जो उत्कट विरोध हुआ उसका मुख्य कारण उनकी स्पष्टभाषिता और निर्भीकता थी। उनके इन गुणा न जहा अनक लोगा म उनके प्रति भ्रातियो और विरोधा को जन्म दिया वहा हिंदी क नए युग के लिए व्यक्तित्व के एक नए क्षितिज का उन्मीलन भी किया। निराला न कितन नवयुवका साहित्यिका और कविया को अपन खुले हुए व्यक्तित्व स प्रभावित किया इसकी गणना नही की जा सकती। इतना तो निश्चय है कि दो प्रकार की चारित्रिक और व्यवहारमूलक भिन्नताओ के बीच निराला न एक ऐस व्यक्तित्व की झलक दिखाइ जो वतमान युग म अभूतपूव ही कही जाएगी।

इस खुले व्यक्तित्व के सभी सभावित सकट निराला को उठान पडे परतु उनक हृदय की निमलता और द्वेषहीनता अतत लागा की दृष्टि म आई। निराला क व्यक्तित्व के प्रति हिंदी ससार म निरतर सम्मान बढता गया है और अतिम दिना म वह एक महापुरुष क रूप म स्वीकार किए गए थ। इसी स्वीकृति के मूल म निराला क व्यक्तित्व की वे विशेषताए हैं जि ह हम सरलता, उदारता और निर्भीकता आदि शब्दा स अभिहित करन है। सत्य का छिपा रखन क जो अनक कौशल समाज म प्रचलित हैं वैयक्तिक उन्नति और सासारिक स्वार्थसाधन के लिए जो आवश्यक समझे जान हैं, निराला उनम अपरिचित थ। उनकी आखा म एक तरलता थी। उनके आठा म मुस्कान का छिपान की शक्ति नही थी। किसी भी कृत्रिमता के परद को उनकी हसी की धार चाक चाक कर दन म समथ थी।

निराला इस अथ म भी एक विशिष्ट पुरुष थ कि उनम साहित्यिका क प्रति एक अपार स्नह और सदभावना थी। अपने मित्रो के प्रति उनका स्नह और सौजन्य ता प्रख्यात था ही अपरिचित साहित्यिका के लिए भी उनका हृदय सदैव खुला रहता था। किसी की काई रचना पढी, कोई विशेषता देखी, उनके मन म बठ जाती थी। उनकी स्मतिशक्ति साहित्यिक रचनाओ को ग्रहण करन मे अप्रतिम थी। रवीद्रनाथ के काव्य का उन्होंने समग्र अध्ययन किया था। उनकी सहस्रा कविताए उन्ह कठाग्र थी, परतु अन्य कवियो की रचनाए भी उन्हे बडी मात्रा म याद रहती थी। गुणग्राहकता निराला म बडे विशाल पमान म प्रतिष्ठित थी।

उनका मानस एक एसे श्वेतपत्र की भाति था जिसमे अशेष साहित्यिक कृतियो का सौदय प्रतिच्छादित होता रहता था।

करुणा और सहानुभूति के भाव निराला म सहजात थे। वह स्वय ऐसे परिवार मे आए थे जो क्रमश विपन्न होता जा रहा था। एक एसी महान दुघटना का उन्हें सामना करना पडा था जिसमे उनके परिवार के अधिकाश व्यक्ति और उनकी प्रियतमा पत्नी देखते ही देखते चल बसे थ। सहसा एक भरा पूरा परिवार छिन्न भिन्न हो गया था। इन्ही घटनाओ ने निराला के व्यक्तित्व म अपार सवेदना भर दी थी। सवेदना का यह विस्तार थोडे से व्यक्तियो और परिचितो तक सीमित नही था पर समस्त भारतीय समाज और उसकी हीन स्थितियो तक पहुचा हुआ था। निराला ने कई वर्षो तक किसानो का पक्ष लेकर जो राजनीतिक काय किया और अपनी कविताओ में पत्थर तोडनवाली श्रमजीविनी से लेकर 'दुरित दूर करो नाथ नर को नरक त्रास से तारो तक' जो विस्तृत मानवीय सवेदना व्यक्त की वह निराला की विशाल सहानुभूति की साक्षी है। उनके काव्य और उनके व्यक्तित्व म करुणा का तत्व बहुव्याप्त है। उनकी व्यग्यरचनाओ – 'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा'—म यद्यपि चरित्ररेखाए हास्यास्पद बनाई गई हैं परतु उनके मूल में करुणा का एक अतरपट आदि से अत तक फैला हुआ है।

कुछ लोग निराला को अव्यावहारिक और उच्छृखल भी समझते रहे है परतु मेरी दृष्टि म यह एक बडी नासमझी का परिणाम है। उन्होने एक बडे परिवार का भार सभाला था जीवनभर उसके भरण पोषण की व्यवस्था करते रहे थ। प्रतिमास किसको कितना देना है इसकी धारणा उनके मन मे बनी रहती थी। जब वह स्वस्थ और सक्रिय थ तब बाजार से सामान लाना गृहस्थी का हिसाब रखना, वह अच्छी तरह किया करते थे। आगे चलकर जब वह अस्वस्थ रहने लगे तब भी अपने परिवारवालो का ध्यान उन्हें बना रहता था। यदि उनमे किसी प्रकार की अव्यावहारिकता थी तो उसका कारण उनका उदार स्वभाव था उपेक्षा की वत्ति नही। स्वभाव की इस उदारता से उन पर कभी कभी कज हो जाता था जिसकी वापसी वह शीघ्र ही कर देते थे। जिससे कज या उधार लेत उसके प्रति उदार अवश्य थे। उनके बारे म जो किवदतिया हैं—कभी किसी फलवाले या चाटवाले को जेब से रुपया निकालकर दे देना और पैसे वापस न लेना यह उधार लेने की कृतज्ञता मात्र थी। कभी किसी रिक्शे या तागेवाले को जेब म पडे हुए सारे पैसे दे देना भी इसी प्रकार की उदारता थी। इस उदारता को अव्यावहारिकता नही कह सकते। विक्षिप्तावस्था के दिनो म उन्होने अपनी चादर दुशाला या रजाई किन्ही को दे दी और स्वय पुरानी रजाई से काम चलाया, यह उनका तोलस्ताय की पद्धति का मानव प्रेम था। वह सारे परिवेश

का ज्ञान रखत थ। और फलाफल की जानकारी के बिना कोई काम नही करते थे। उन्हें उच्छृखल कहना तो और भी अनभिज्ञता का परिणाम है। निराला आमिषभोजी थ और यदाकदा मदिरापन भी करत थे, परतु वह जिन परिवारो म रहन थे उनकी भावना का उल्लघन उन्होंन कभी नहीं किया। वर्षों तक वह सामान्य भोजनपान से सतुष्ट और प्रसन्न रहा करते थे। उन्हें कोई लत न थी, व्यसन न था। कभी कभी सावजनिक स्थाना पर किसी कविसम्मेलन म या अन्यत्र जब वह उत्तम कोटि की मदिरा की माग करत थे तब उनका मुख्य लक्ष्य लागा को यह जता दना होता था कि छिपे हुए व्यसनो स यह खुला व्यसन फिर भी अच्छा है। यहा भी वह इस बात का ध्यान रखन थ कि वह ऐसे ही लोगो के बीच उस प्रकार का खानपान करें जो स्वय उन चीजा से परहेज नही करत। आज निराला की इन आदता का उल्लेख कर लोग उन्हे उच्छृखल ठहरात हैं पर उन्हे क्या यह भी नात है कि निराला सामाजिक और पारिवारिक जीवन मे कितन शालीन और स्थितिसापेक्ष थे। हिंदी के कितन नए लखक और कवि इन आदता से मुक्त हैं यह भी एक ज्ञातव्य बात होगी। निराला की उच्छृखलता उन लोगो के लिए एक प्रतिवाद थी जो उनके गुणा को न दखकर केवल उनकी दुबलताओ को देखना चाहत थे।

जहा तक मेरी जानकारी है निराला म दो एक दुबलताए भी थी। वह कई बार लबी आत्मचर्चा करन लगते थे। अपनी कविताओ की विशेषताए बताने म वे कई बार घटा लगा देत थे। यह प्रवत्ति उनम आरभ में नही थी प्रौढ होने पर आई थी। उन्हें ऐसा भासित होता था कि उनकी रचना तभी समझी जा सकेगी जब वह स्वय उस सपूण विवरण के साथ समझाएगें। यह निराला की ऐसी दुबलता थी जो परिस्थितिजन्य कही जा सकती है। इसे उनका मौलिक दुगुण नहीं कहा जा सकता। एक और भी दुबलता उनमें यदा कदा देखी जाती थी। उनमें थोडा सा आत्महीनता का भाव भी विद्यमान था। अपने से अधिक सपन्न, सुदर और सुवण व्यक्तियो को देखकर वह कभी कभी उत्तेजित हो जाते थे। इस हीनताभाव की क्षतिपूर्ति वह अनेक उपायो स किया करत थ। कदाचित यह उनकी ऐसी वृत्ति थी जो उनके सामान्य और अपक्षाकृत साधनहीन परिवार मे उत्पन्न होन की प्रतिक्रिया में निर्मित हुई थी। अपन स्वस्थ वर्षों में तो वह इस प्रतिक्रिया को विनापित नही होन देत थ, पर आगे चल कर जब उनमे अस्वास्थ्यकर विक्षेप आया तब उनकी यह वत्ति प्रकाश म आई। ससार के विशिष्ट पुरुषा से अपना निकटतम सबध बताना इसी हीनताभाव की एक अनियत्रित प्रतिक्रिया कही जा सकती है। कहा जा सकता है कि निराला के असाधारण और उदात्त व्यक्तित्व म य ही दो एक वत्तिया अपना सतुलन नही प्राप्त कर सकी थी। परतु इन वत्तिया

से दूसरो का अपकार नही होता था, इसलिए उन्हे चारित्रिक दोष कहना अनुचित होगा। यह ऐसी असगतिया थी जिन पर निराला अधिकार नही कर पाए थे। उनके मानसिक विक्षेप के मूल मे इन वत्तियो का कितना स्थान था, यह कहना कठिन है।

निराला के असाधारण व्यक्तित्व म उनकी ये छोटी मोटी दुबलताए भी चम त्कार की ही सष्टि करती थी और चद्रमा की क्षीण काली रेखा की भाति अनक बार आकषक भी प्रतीत होती थी। यह भी स्मरण रखना होगा कि निराला का समस्त जीवन सघर्षो मे बीता था एक। प्रकार से उन्होन शू य से आरभ कर जीवन के सारे सोपान पार किए थे और ऐसी ऊचाइया का आरोहण किया था जो आश्चय जनक है। निराला का जीवनदर्शन यद्यपि रामकृष्ण आश्रम की छाया मे निर्मित और विकसित हुआ था परतु आश्रम जीवन की अपर्याप्तता को भी उन्होन खुले तौर पर व्यक्त किया है। यद्यपि उनकी तारुण्य काल की काव्यचेतना पर रवीद्रनाथ का प्रभाव देखा जाता है परतु इसम सदेह नही कि उन्होन अपने स्वतत्र का य व्यक्तित्व का निर्माण किया जिसम रवीद्रनाथ का यह प्रभाव वाष्प बनकर उड गया है। श्र गार की तरलता और स्वच्छता प्रार्थनाभाव की गहनता, औदात्य की प्रखरता और महज करुणा की ममस्पर्शिता म निराला अपने उदाहरण आप ही हैं। अपनी प्रियतमा पत्नी की स्मति म उन्होने प्रेमतत्व को सपूण आध्यात्मिक ऊचाइ प्रदान की है। अपनी पुत्री के अभाव म उन्होने सामाजिक जीवन के सपूण वषम्या को रूपायित किया है। निराला सवप्रथम एक मानव है, युगीन परि सीमाओ स ऊपर उठे हुए मानव। इसके पश्चात व एक उत्कृष्ट और महान कवि हैं। उनकी मानवता ही उनक का य की प्राणशक्ति है। उनके जसे व्यक्ति से साक्षा-त्कार होना और घनिष्ठ सपक म आना – उनके स्नह सौज य और आत्मीयता का अधिकारी होना किसी क भी लिए सौभाग्य की वस्तु हो सकती थी। मेरे लिए तो उनका साहचय केवल सौभाग्य ही नही एक दवी सयोग और उपलब्धि रही है। उनक प्रति सपूण कृतज्ञता व्यक्त करना सभव नहा है। ज्ञान और आत्मलाभ की भूमिका पर कृतज्ञता भी एक बाधा ही है। यदि निराला होते तो वह स्वय इस कृतज्ञता का उपहास ही करत।

आरंभिक काव्य

यदि सामयिक हिंदी म कोई ऐसा विषय है जो अन्य विषयो की अपक्षा अधिक क्लिष्ट और दुरूह समझा जा सके ता वह कवि सूयकात त्रिपाठी 'निराला' का काव्यविकास है। इस कवि के व्यक्तित्व और काव्य के निर्माण म ऐसे परमाणुओ का सन्निवश हुआ है, जिनका विश्लेषण हिन्दी की वतमान धारणाभूमि म विशेष कठिन काय है। हिन्दीभाषी जनता क साहित्यिक ज्योतिषियो ने कहानी वाले सात अध भाइयो की भाति, भाति भाति म हाथी की हास्यविस्मयभरी रूपरेखाए बखान की, जिसमे निराला की अपेक्षा समीक्षका की निराली सामुद्रिक का ही परिचय मिला। जहा तक हमारी जानकारी और अध्ययन है, हम निराला के विकास के मूल म भावना की अपक्षा बुद्धितत्व की प्रमुखता पाते हैं। यह उनके दाशनिक अध्ययन का परिणाम है या उनक मानसिक सगठन का नसर्गिक स्वरूप, यह हम नही कह सकत। जयशकर प्रसाद की कविता मे भी यह बौद्धिक विशेषता पाई जाती है परतु निराला के साहित्य म ता यह स्पष्टत एक बडी मात्रा मे है। प्रसाद की जिन जिज्ञासाओ का उल्लेख हम चित्राधार' 'प्रेमपथिक आदि की समीक्षा के प्रसग मे कर चुके है उनमे केवल बुद्धि घम ही नही, कल्पना आदि भी उपस्थित है, पर निराला की अनक कविताओ मे कवल बौद्धिक उत्कष अपनी पराकाष्ठा तक पहुचा हुआ मिलता है। निराला की कुछ रचनाओ म तो सपूण वणन और वातावरण ऐसा है जो परिपाटीवद्ध काव्यालोचक की आस्वादसीमा स बाहर है। यह आलोचक की त्रुटि है, या निराला की व रचनाए साहित्य की परिभाषा म ही नही आती, यह निणय कौन करेगा ?

यदि हम निणय करना हो तो हम साहित्य कला का विस्तार कदापि सकुचित करन को सहमत न होग। काव्य मे बुद्धितत्व के लिए भी स्थान है भावना के लिए भी कल्पना के लिए भी। जिस किसी कृति म ओजस्विता हो प्रवाह हो, जिसका प्रभाव हम पर पडे उसमे काव्य की प्रतिष्ठा मानी ही जाएगी। यदि रससिद्धात के व्याख्याताओ म आज इतनी व्यापकता नहा है तो उन्ह व्यापक बनना होगा। आधुनिक युग प्रत्यक दिशा में नई काव्यसामग्री का सग्रह करन को कटिवद्ध है। निराला का एक अत्यत बुद्धिविशिष्ट का यचित्र दखा जाए

प्रथम विजय थी वह—
भेद कर मायावरण
दुस्तर तिमिर घोर जडावत—
अगणित तरग भग—
वासनाएँ समल निमल—
कदममय राशि राशि
स्पृहाहत जगमता —
नश्वर ससार—
सृष्टि पालन प्रलय भूमि
दुदम अनान राज्य --
मायावत्त मैं' का परिवार
पारावार केलि कौतूहल
हास्य प्रेम क्रोध भय—
परिवर्तित समय का
बहु रूप रसास्वाद—
घोर उन्माद ग्रस्त
इद्रियो का बारम्बार बहिरागमन
स्खलन, पतन, उत्थान एक
अस्तित्व जीवन का—
महामोह,
प्रतिपद पराजित भी अप्रतिहत बढ़ता रहा
पहुँचा मैं लक्ष्य पर

इस रचना म शुष्कता चाहे जितनी हो, पर हम यह कहे बिना नही रह सक्त कि एक विशेष उदात्त चित्र हमारे सामन आता है। इसम दाशनिक तथ्य की प्रधानता अवश्य है पर काव्यालकारा से सजाकर उसे उपस्थित किया गया है। इसका स्थायीभाव उत्साह है और यह वीर रस की रचना है।

प्राचीन काव्यसमीक्षा क शब्दा म निराला की उक्त कविता व्यजनाविशिष्ट नही है वरन अभिधाविशिष्ट है। इसम रस व्यग्य नही है बल्कि वाच्य है। प्राचीन शास्त्र कहते हैं कि ध्वनिमूलक काव्य श्रेष्ठ है पर इस आग्रह को हम हद के बाहर लिए जा रह हैं। नवीन काव्य जिस नसगिक अदम्यता को लकर आया है उसम यह सभव नही कि वह परपराप्राप्त ध्वन्यात्मकता का ही अनुसरण करता चल। प्रचलित प्रणाली को तोडन म नवीन युग का सदेश सुनान म काव्य अपनी क्रम प्राप्त मर्यादाओं को भी उखाड फेंकता है। यह ध्वनि और अभिधा काव्य वस्तु क

भेद नही है, केवल व्यक्त करने की प्रणाली का भेद है। हम प्रत्यक प्रणाली का प्रश्रय दना चाहिए न कि किसी एक को। अभिधा की प्रणाली इस स्पष्टवादी युग की मनोवत्ति के विशेष अनुकूल है। जहा तक हम समझ सके है, व्यजना की प्रणाली म यदि कुछ विशेषता है ता यही कि उसम काव्य का मूत आधार अधिक प्राप्त होता है। व्यजना का अथ ही है सकेत प्रतीक आदि। परतु अभिधा म स्पष्टता अधिक है। व्यजना के अतिशय से काव्यचातुरी बढती है जो प्रत्यक अव सर पर अभीष्ट नही कही जा सकती। सबसे बडी बात तो यह है कि ये अभिव्यक्ति की प्रणालिया मात्र है जो काव्य वस्तु को देखते हुए छोटी चीज है। निराला न अपनी बुद्धिविशिष्ट रचनाआ को अभिधाशली म और स्वच्छद छद म लिखा है। काव्य के मूल्याकन म हम अभिव्यक्ति की शैली को ही सब कुछ नही मान सकते। विशेषत एक विद्राही कवि जब नवीन प्रवाह को काव्य म प्रसारित करता है वह अभिव्यक्ति की प्रणाली का गुलाम होकर नही रह सकता। निराला ही नही, प्रसाद सरीखे साहित्यशास्त्र क अध्यता भी रचनात्मक साहित्य म बराबर नियम-भग करत रहे हैं। यह अनिवाय है और साहित्यिक विकास के लिए उपयोगी भी है।

मुक्तछद म निराला ने जहा एक ओर 'जूही की कली' जैसी कोमल कल्पना विशिष्ट रचना दी है, वही 'जागो फिर एक बार' जैसे उदात्त वीर रस का काव्य भी दिया है। इतना हम अवश्य कहग कि उनक मुक्त काव्य म स्वच्छद कल्पना का अति स्वाभाविक प्रवाह है। काव्य का चिर दिन से चल आते हुए छद बध से छूटना हिन्दी म एक स्मरणीय घटना है। इस श्रेय के अधिकारी निराला ही हैं।

यह निराला का प्रथम विकास था। इसके अनतर निराला छदाबद्ध सगीतात्मक सष्टि की आर झुके। यह उनका दूसरा चरण है। परिमल' की छन्दोबद्ध अधिकाश रचनाए इसी प्रकार की है और 'पतजी और पल्लव' की समीक्षा भी इसी के आस पास प्रकाशित हुई। कविता म भावना की प्रमुखता हो चली, पर निराला की बौद्धिक प्रक्रिया भी उसके साथ साथ रही। निराला द्वारा पटेट किया हुआ 'काव्यनिर्वाह' शब्द इसी बुद्धितत्व का सकेत है। इसका निराला न सदैव आग्रह किया। पत की रचनाओ म उन्ह इसी के अभाव की सबस अधिक शिकायत है। यह बुद्धितत्व आधुनिक भावनाविजडित कविता मे निस्मगता लान म और कारी भावुकता या कल्पना प्रवणता को सग्रथित कलासृष्टि का स्वरूप दन म समथ हुआ। एक दूसर स असपृक्त या टूटी हुई कल्पनाओ को एकतानता मिली। बुद्धि और भावना के इस सयोगकाल का स्वरूप सक्षेप म उनकी इस 'अधिवास' कविता म दखिए

उसकी अश्रुभरी आखो पर
मेरे करुणाचल का स्पश
करता मेरी प्रगति अनन्त
किन्तु ता भी है नही विमश
छूता है यद्यपि अधिवास
किन्तु फिर भी न मुझे कुछ त्रास।

यही स्वरूप उनकी पतजी और पल्लव समीक्षा म भी दखा जा सकता है, जिसम उन्हान 'विश्ववाद' क बौद्धिकतत्व स श्र गारी कविया के लघु चित्रा का प्रतिपादन किया है पर भावनाभूमि म आकर नवीन भाषा और व्यापक भावो के लिए पत की प्रशसा की है।

इस द्वितीय चरण म जहा कही निराला बुद्धि और भावना का रमणीय योग करन म समथ हुए है कविताए विशेष उज्ज्वल और निखरी हुई हैं। अनक छोटी रचनाआ म ही नही 'यमुना' 'स्मति', 'वासन्ती वसन्त समीर' 'बादल राग' आदि लम्बी कृतिया म भी यह सुयोग सफलतापूवक सिद्ध हुआ है। इसम बुद्धितत्व भावना क साथ सन्निविष्ट होकर अधिकाश म अपना स्वतन्त्र अस्तित्व छोडकर मिल गया है जिसस तल्लीन वातावरण बनकर काव्यवभव का विशेष विकास हो सका है।

द्वितीय चरण क उपरात निराला का ततीय चरण गीतरचना का है जिसकी प्रतिनिधि पुस्तक 'गीतिका' है। गीता म कुछ तो दाशनिक हैं पर अधिकाश प्रम और श्र गारविषयक है। इनम मधुर भावा की व्यजना हुई है। विराट बौद्धिक चिन्ता क स्थान पर उज्ज्वल रम्य आकृतिया अधिक है। यह परिवतन निराला द्वारा बुद्धितत्व क रचनात्मक परिपाक की दिशा म एक सीढी और आग है। जहा 'परिमल' की अनक कविताओ म बुद्धिजन्य प्रक्रिया माधुय क साथ दूध मिश्री क स मिश्रण स नहीं मिल सकी, वहा गीता म एसा प्राय सभव हुआ है। किंतु साथ ही परिमल का स्वच्छन्द काव्यप्रवति की अपक्षा इन गीता म आलकारिक बधन अधिक है।

निराला का वास्तविक उत्कष अपन युग म भावना और कल्पनामूलक काव्य म सयम बुद्धितत्व का प्रवश है। इसस काव्यकला का बडा हितसाधन हुआ। कविता [illegible] उसकी सीमा पार कर रही थी और कोर भावनात्मक उद्गार काव्य क नाम पर [illegible] थ। निराला न इस विषय म नया चिन्तन कराया। आधुनिक कविता म इस चिन्तना का नितृत्व निराला [illegible] है। इस दिशा म काम करत हुए उन्हान [illegible] मुक्तछन्द की सष्टि की जो [illegible] विशष अनुकूल सिद्ध हुआ। मुक्तछन्द क अतिरिक्त उन्हान हिन्दी [illegible] को अधिक प्रौढ तथा अधिक [illegible] बनान का सफल प्रयास

किया । अत्यत सार्थक शब्दसृष्टि द्वारा निराला न हिंदी को अभिव्यक्ति की विशेष शक्ति प्रदान की है। सगीतज्ञ होने के कारण शब्दसगीत परखन और व्यवहार म लान म व आधुनिक हिंदी के दिशानायक हैं। अनुप्रास के व आचार्य हैं।

निराला के काव्य म करुणा की अथवा श्रृगार की दुबल भावनामूलक अभिव्यक्ति हम नही मिलती। वे एक सचेत कलाकार है इसलिए उनके काव्य म असयम और अति कही नही है। उनमे एक अनोखी तटस्थता है जो उनके काव्य की भावधारा के ऊपर अपना व्यक्तित्व स्थिर रखन की क्षमता प्रदान करती है।

निराला के श्रृगारिक वणनो म दाशनिक तटस्थता है

पल्लव पयक पर सोती शेफालिके
मूक आह्वान भर लालसी कपोलो के व्याकुल विकास पर
झरते हैं शिशिर से चुम्बन गगन के ।

यह रूपक एक दाशनिक कवि ही बाध सकता था। इसी प्रकार पतिप्रिया कामिनी को रात्रिजागरण के उपलक्ष्य मे यह उपाय कौन दे सकता था वासना की मुक्ति-मुक्ता त्याग म तागी।'

'निराला न अपनी दाशनिकता के द्वारा अनकश एसी पक्तिया की सृष्टि की है, जो आधुनिक हिन्दी मे अप्रतिम हैं। यह उद्धरण के लिए उपयुक्त स्थल नही है।

निराला छायावादी कवि कह जाते है। उनका छायावाद कहा है? मुक्त छदो म उनका दाशनिक छायावाद विराट सत्ता और शाश्वत ज्योति' के रूप म व्यक्त हुआ है। कितन ही स्थानो पर निराला इसे अमर विराम (जागरण) माता (पचवटी प्रसग) श्यामा (एक बार बस और नाच तू श्यामा) आदि पदो म व्यक्त करत हैं। यमुना म उसे वह कही श्याम' और कही 'अतीत कहत हैं। इसके द्वारा कवि उसी 'शाश्वत ज्योति की व्यजना करता है। यह उनके छायावाद का एक पहलू है। दूसरा पहलू है 'जड जीव जगत म सवत्र उसी शाश्वत ज्योति का प्रकाश देखना। यदि वह दाशनिक छायावाद है तो इसे उनका प्रयोग समझना चाहिए उसमे एक ज्योति है इसम अनक शब्दचित्र उसी एक ज्योति स ज्योतित दिखाए गए है। यही निराला का निवाह है। इसका अथ यह है कि प्रत्येक दृश्यवस्तु का पयवसान एक ही 'अदृश्य' अनत म होता है। छोटी बडी मानवीय वासनाए भी 'बुद्ध शरण गच्छ' के उपरात शुद्धस्वरूप प्राप्त करती है। वासना की मुक्ति-मुक्ता' के पद म कामना की भी परिष्कार द्वारा मुक्ति म परिणति की गई है। यही परिष्कार (निखार) निराला के छायावाद की विशेषता है। प्रसाद मानवीय माध्यम द्वारा रहस्यात्मक अनुभूतिया प्राप्त करत और व्यक्त करत है। वे मनुष्यता स (अर्थात मानवीय वृत्तिया स) इतन आकर्षित है कि मनुष्य ही उनक चैतन्य की इकाई बन गया है, पर निराला की इकाई वही 'शाश्वत ज्योति है जो

कीमत पर पहुच चुका था, मैं नही कह सकता। गुरुजी का 'ब्लैकवस' वीरागना काव्य भी पत की मण्टिया स पहले 'सरस्वती' म निकला। आपका शायद मतलब है पत न भावना का प्रसार किया, और तभी से जब व 'मुसक्याना से उछल उछल' लिखत थे।

आपका
निराला

इस सबध मे हम यही कहना है कि यह तो हमारे प्रसाद, निराला, पत' शीपक से ही प्रकट है कि हम हिंदी के क्षेत्र म निराला' का प्रवेश पत से पहले मानत है। दो एक रचनाओ के आगे पीछे निकलने की बात दूसरी है। जहा हमने ऐतिहासिक प्रसग का उल्लेख किया है वहा हमारा आशय उस वातावरण का चित्रण करना है जिसम निराला का मुक्तकाव्य प्रकट होकर हिंदी म आत्मविश्वास की उमग उत्पन्न कर सका। निराला के बुद्धि और भावनातत्वा के विकास पर लिखते हुए हम सन सवत की चर्चा नही कर रहे थे, हम तो काव्यकला की दष्टि स विकास देख रहे थे। ऊपर उनके 'गीता' की चर्चा करते हुए हमने यह बात स्पष्ट भी कर दी है। यह तो हमने कही नहीं लिखा कि पत ने हिंदी काव्य मे भावना का प्रथम प्रसार किया अथवा निराला पर उसका प्रभाव पडा—वरन हम तो दाशनिक काव्य के भीतर से निखरे हुए निराला के व्यक्तित्व को हिंदी के लिए अप्रतिम मानते है और नवीन प्रगीतात्मक (लिरिकल) काव्यशैली मे की गई उनकी अनक रचनाआ का बेजोड समझते है।

[1931]

गीतिका

निराला नवीन कविताकामिनी के रत्नहार के एक अनुपम रत्न हैं, यह हिन्दी के काव्यपरीक्षका की परीक्षा का निष्कप समय की गति क साथ अधिकाधिक लोक प्रचलित हो रहा है। आज से कुछ वप पहले जब मैंने 'भारत' क लेखो म इनक उच्च पद का निर्देश किया था तब बहुत स व्यक्तिया न इस सबध म अपनी शकाए प्रकट की थी और कुछ ने उस मेरा पक्षपात समझ कर उस समय तरह दी थी पर पीछे प्रकारातर स वे उन्ही स्वरा का आलाप करत हुए सुन पडे थे, जो हृदय म दबी अभिलापा के असामयिक प्रकाशन से उदभूत होत है। उनम से किसी म अनुचित अस्पष्टता किसी म लज्जाहीन आत्मप्रशसा और किसी म निराला क पति व्यथ की कुत्सा तथा मरे प्रति आक्षेप भरे हुए थे, किंतु प्रसन्नता की बात है कि कवि की प्रतिभा क प्रति मेरा आरभिक विश्वास कभी स्खलित नही हुआ न कभी मुझ उसकी कृतियो क कारण हिंदी के सम्मुख सकुचित होना पडा। साथ ही मुझे उन महानुभावो का हार्दिक दुख है जो साहित्य क क्षेत्र म ऐसी कुटिल नीतियो का प्रश्रय लेत और सात्विक बुद्धिसपन्न वाणीव्यापार का बहिष्कार करते हैं। क्या कारण है कि लोग ज्ञान और प्रकाश की इस भूमि म भी अपने हृदय का अधकार भरना चाहत है ?

काव्यसाहित्य की इन साफ सुथरी पगडडियो मे सौंदय ही जिनकी रूपरेखा है कुटिल कटको क लिए स्थान ही कहा है ? हमारी परिष्कृत दष्टि यदि इन चिर सुरम्य निकेता म भी मलिनता का प्रवेशनिषेध नही करती तो हमारे युग की साहित्यिक साधना अपूण और हमारी जीवनधारा त्रुटिपूण ही रह जाएगी।

ऊपर के कथन का न तो यही आशय है कि साहित्यसमीक्षा का काय किसी एक ही व्यक्ति के स्वायत्त कर लिया जाए और शेष सभी मौन रहकर अपनी स्वीकृति प्रकट किया करें और न यही प्रयाजन है कि किसी कवि का वास्तविक उत्कप समीक्षका की समीक्षा अथवा जनता की रुचि पर ही एकमात्र आश्रित है। यद्यपि मैं यह पसद करता हू कि साहित्यिक आलोचना सबधी जितनी निम्न कोटि की सष्टिया हो रही है और 'छोट मुह बडी बात' स कहा अधिक बडे मुह छोटी बात का जितना प्रसार हो रहा है उस देखत हुए उन कथित समालाचका का नियत्रण किया जाए, तथापि मैं एकदम जबानबदी क पक्ष म नही हू और सहृप दूसरा को

बातें सुनना चाहता हू। परतु जसा ऊपर कह चुका हू, किसी प्रकार की कुटिल अभिसधि को, वह अपने लिए हो या दूसरे के लिए, सद्य बहिष्कार्य समझता हू। इसके साथ ही अत्यधिक ओछी और साहित्यिक विषय का स्पश तक न करने वाली समीक्षाओ का स्थगित करा देन के पक्ष म हू। पुराने और कीर्तिलब्ध समीक्षक, जो समय या स्थिति के अभाव से प्रगतिशील साहित्य के साथ नही चल सकते तत्काल विश्राम ले ल। इसके साथ ही मैं निराधार अतिशयोक्तिपूर्ण कोरी भावना के उदगारो को समीक्षा की सीमा से पृथक कर देना चाहता हू, क्योकि इसस पनी दृष्टिवाले नवागतुक काव्यपारखियो के काय म बाधा पहुचती है जो कलाकृतियो क सूक्ष्म उत्कर्षो और रहस्यो क भेद जानना चाहत हैं। किसी के व्यक्तित्व को लेकर अप्रामाणिक रूप स आपक्ष करना उसकी किसी पूव रचना के सस्कारो को लेकर प्रस्तुत रचना की परीक्षा करना किन्ही सामाजिक रीतियो स अनुरक्त होकर काव्यालोचन का तात्विक विचार धो देना अथवा प्रिय आचार का सप्रमाण समथन न करके काव्य क प्रति तत्सबधी अनुकूल प्रतिकूल धारणा बना लेना, य सभी निवाय और त्याज्य वस्तुए है। इनके त्याग से परिमार्जित हुए काव्यप्राण समीक्षक की प्रत्यक बात मैं ध्यान और धैय स सुनन को उत्सुक हू।

दूसर शब्दो म शुद्ध और सूक्ष्म बुद्धि से उद्भावित समीक्षा वह चाहे जिसकी लिखी हो, मुझे प्रिय है, यद्यपि मैं जानता हू कि वह सबकी लिखी नही हो सकती। वह परिष्कृत स्वस्थ और पुष्ट मस्तिष्क की ही उपज हो सकती है—उसकी जिसन जीवनतत्व का अनुसधान किया है। वह दृष्टि शब्दो पर, वाक्यो पर कल्पनाओ और उपमाओ पर रीझती है परतु पृथक पृथक नही। उक्त जीवनतत्व की परख, उसकी ही समुज्ज्वल आह्लादिनी अभिव्यक्तियो पर मुग्ध होती है। काव्य के इन समस्त उपकरणो का यही प्रयोजन है कि वे उक्त जीवनसौंदय की कला हमारे हृदयो म खिला दें। यदि वे एसा करने म अक्षम है, तो उनकी सपूण सुघरता और विन्यास व्यथ है। कहना तो यह चाहिए कि उनकी सुघरता और उनका विन्यास तभी है जब वे उक्त जीवनसौंदय स उपेत है। यही काव्यकला और जीवनसौंदय की अनन्यता है। इसका सम्यक परिचय हम होना चाहिए।

सौन्य ही चेतना है, चेतना ही जीवन है अतएव काव्यकला का उद्देश्य सौदय का ही उन्मेष करना है। मनुष्य अपने को चेतनासपन्न प्राणी कहता है, पर वास्तव मे वह कितन क्षण सचेन रहता है? कितने क्षण वह चतुर्दिक फली हुई सौदयराशि का अनुभव करता है? वह तो अधिकाश आखें मूद कर ही दिवसयापन करने का अभ्यस्त होता है। कविता उसकी आखें खोलन का प्रयास करती है। इसका यह अथ नही कि काव्य हम केवल अनुभूतिशील या भावनाशील ही बनाता है। यह तो उसकी प्राथमिक प्रक्रिया है। उसका उच्च लक्ष्य तो सचेतन जीवनपरमाणुओ

को सघटित करना और उन्हे दृढ बनाना है। इसके लिए प्रत्येक कवि को अपने युग की प्रगतियो से परिचित होना और रचनात्मिका शक्तियो का सग्रह करना पडता है। जिसने देश और काल के तत्वो को जितना समझा है उसने इन दोनो पर उतनी ही प्रभावशाली रीति से शासन किया है।

उच्च प्रशस्त कल्पनाए परिश्रमलब्ध विद्या और कार्ययोग्यता उच्च साहित्य सृष्टि की हेतु बन सकती है, किंतु देश और काल की निहित शक्तियो से परिचय न होने मे एक अग फिर भी शून्य ही रहेगा। हमारी दार्शनिक या बौद्धिक शिक्षा तथा साधना भी काव्य के लिए अत्यत उपयोगिनी हो सकती है किंतु इससे भी साहित्य के चरम उद्देश्य की सिद्धि नही हो सकती। इन सबकी सहायता से मूर्तिमती होने वाली जीवनसौदर्य की प्रतिमा ही प्रत्येक कवि की अपनी देन है। इसी से उसके व्यक्तित्व का निर्माण होता और शताब्दियो तक स्थिर रहता है। इसके बिना कवि की वास्तविक सत्ता प्रकट नही होती।

निराला की कल्पनाए उनके भावो की सहचरी है। वे सुशीला स्त्रियो की भाति पति के पीछे पीछे चलती हैं। इसलिए उनका काव्य पुरुषकाव्य है। उनके चित्रो मे रगीनी उतनी नही जितना प्रकाश है। अथवा यह कहे कि रगो के प्रदर्शन के लिए चित्र नही है, चित्र के लिए रग है। काव्यसौदर्य की वे बारीकिया जो आजीवन काव्यानुशीलन से ही प्राप्त होती हैं उनकी विविधताए और अनोखी भगिमाए निराला की काव्यरचना का मुख्य प्रयास नही है। वे मुद्राए जो सप्रदाय विशेष के कवियो मे दिखाई देकर उनकी विशिष्टता का निर्माण करती है अभ्यास द्वारा जिन्हे पुष्ट करना ही उन कवियो का लक्ष्य बन जाता है, निराला का लक्ष्य नही है, परतु उनका एक व्यक्तित्व जिसमे व्यापक जीवनधारा के सौदर्य का सन्निवेश है जिसमे आज के साथ (जो इस युग की मौलिक सृष्टि का परिचायक है) एक सुकोमल सौहाद (जो सहानुभूति का परिचायक है) का समाहार है उनके काव्य मे सुस्पष्ट है। इन उभय उपकरणो के साथ, जो एक साथ अत्यत विरल है कवि की दार्शनिक अभिरुचि कविता की श्रीसपन्नता मे पूर्ण योग देती है। गद्य पद्य की शाब्दिक सुघरता, सक्षेप मे विस्तृत आशय की अभिव्यक्ति सुदर परिसमाप्ति और प्रकाश निराला के काव्य को दर्शन द्वारा उपलब्ध हुए हैं। और मैं यह कह चुका हू कि सौन्दर्य की प्रतिमाए निराला ने व्यक्तिगत जीवनानुभव से सघटित की हैं।

निराला मे पूर्ण मानवोचित सहृदयता और तन्मयता के साथ उच्चकोटि का दार्शनिक अनुबंध है। अतएव उनके गीत भी मानवजीवन के प्रवाह से निथरे हुए फिर प्रकाश मे चमकते हुए हैं। उनमे क्लिष्ट कल्पनाओ और उडानो का अभाव है, किंतु यही उनकी विशेषता है। हमारे एकाग्र नवयुग प्रवर्तको की भाति

समय समय पर पटपरिवतन कर कई बार जीवन म मरण देखन की नौबत उन्हें नहीं आई। वह आरभ से ही एकरस है और सभवत अत तक रहेंगे। यही उनकी नैसर्गिकता है, यही मानवोचित विशिष्टता है। सभव है, कविता म कल्पना के इद्रजाल देखन की अधिक कामना रखन वाला को इन गीता से अधिक सतोष न हो, किंतु उनम जो गुण है, कला की जो भगिमाए, प्रकाशरेखाओ की जसी सूक्ष्म अथच मनोरम गतिया है वह इन्ही म है और हिंदी म य विशेषताए अयत्र कम उपलब्ध होती है। इन गीता म असाधारण जीवन परिस्थितिया और भावनाओ का अधिक प्रत्यक्षीकरण नहीं है, इसका आशय यही है कि इनम जीवन के किसी एक अश का अतिरेक नहीं है। इनम व्यापक जीवन का प्रखर प्रवाह और सयम है। गति के साथ आनद और विवेक के साथ भी आनद मिला हुआ है। दोना के सयोग से बना हुआ यह गीति काव्य विशेष स्वस्थ सष्टि है।

परतु इस विश्लेषण का यह अथ नहीं है कि निराला रहस्यवादी कवि नही हैं। रहस्यवाद तो इस युग की प्रमुख चिंताधारा है। परोक्ष की रहस्यपूण अनुभूति से उनके गीत सज्जित हैं। रहस्य की कलात्मक अभिव्यक्ति की जो बहुविध चेष्टाए आधुनिक हिंदी म की गई हैं उनम निराला की कृतिया विशेष उल्लेखनीय हैं। कुछ कविया ने रहस्यपूण कल्पनाए ही की हैं, किंतु निराला के काव्य का मरुदड ही रहस्यवाद है। उनके अधिकाश पदो म मानवीय जीवन के ही चित्र है सही किंतु वे सबके सब रहस्यानुभूति से अनुरजित हैं। जसे सूरदास के पद अधिकाश श्रीकृष्ण की लोकलीला से सबद्ध होते हुए भी अध्यात्म की ध्वनि स आपूरित है वसे ही निराला के भी गीत है। इस रहस्यप्रवाह के कारण कवि के रचित साधारण जीवन के गीत भी असाधारण आकषण रखते है, किंतु उनके अनेक पद स्पष्टत रहस्यात्मक भी हैं। 'अस्ताचल रवि जल छल छल कवि' जस पदो मे रहस्यपूण वातावरण की सृष्टि की गई है। 'हुआ प्रात प्रियतम तुम जाओगे चले' जैसे पदो मे परकीया की उक्ति के द्वारा प्रेम रहस्य प्रकट किया गया है। 'देकर अन्तिम कर रवि गए अपर पार' जस सध्यावणन के पद म भी प्रकृति की सौम्य मुद्राए और भाव भगिमा अकित कर रहस्यसष्टि की गई है। इनसे भी ऊपर उठकर उन्होंने शुद्ध परोक्ष के भी ज्योतिचित्र उपस्थित किए हैं जस 'तुम्ही गाती हो अपना गान व्यथ मैं पाता हू सम्मान' आदि पदो म। एसे गीता मे कतिपय प्राथनापरक और कतिपय वस्तुनिर्देशपरक है। कही शुद्ध अमूत प्रकाशमात्र और कही मूत कामिनी या मा आदि रूप हैं। निराला की विशेषता इसी अमूत पकाश की अभिव्यक्तिकला का अनुलेखन है। यदि उनका कोई विशेष सप्रदाय या अनुयायी वग माना जाए तो वह यही है और वास्तव म निराला के अनुयायी इसी का अभ्यास भी कर रहे हैं। मूत रूप मे प्रकट होने वाले प्रकाशचित्र भी निराला की

तूलिका की विशेषता लिए हुए है। वह विशेषता यही है कि रूप रंगो में प्रकट होकर भी वे अमूर्त का ही अभिव्यंजन करते हैं। इन पदों में प्रेमाभक्ति की परा काष्ठा प्राप्त हुई है। प्रिय यामिनी जागी जैसे पदों में इस युग के कवि के द्वारा भक्तों की श्री राधा की ही अवतारणा हुई है। इस स्थिति में एक सीढी नीचे उतरने पर या इस पर से ही निराला के मानवीय चित्रण आरंभ होते हैं, जिनके संबंध में मैं ऊपर कह चुका हूं। इनमें अनहोनी परिस्थितियां नहीं हैं नर्यामत जीवनसौंदर्य का आलेखन है। यद्यपि इनमें कोई रहस्य प्रकट नहीं, तथापि रहस्य वादी कवि का स्वर सर्वत्र व्याप्त है। इसी से पदों में असाधारण आकर्षण आया है। कला की दृष्टि से भी इन गीतों में लौकिक की अवतारणा अलौकिक स्तर से ही हुई है। इससे सिद्ध है कि निराला के इन गीतों में भी रहस्यवाद की साहित्य साधना का ही विकास हुआ है।

यदि कोई पूछे कि ऐसी साहित्यसाधना का इस युग में क्या प्रयोजन है अथवा दूसरे शब्दों में, निराला प्रभृति कवियों का जीवनोद्देश्य या संदेश क्या है तो यह एक अतिशय गभीर प्रश्न होगा। यों तो साहित्यसाधना का प्रयोजन स्वयं उस साधना में निहित सौंदर्य या आनंद ही है परंतु किसी विशेष युग में किसी विशेष प्रकार की काव्यसृष्टि का कुछ विशेष प्रयोजन भी होता ही है। इस स्थान पर मैं इस समस्या पर कोई विशेष विचार न कर सकूंगा। स्थानाभाव और समयाभाव के अतिरिक्त भी इसके कई कारण हैं। अपने युग की निगूढ विचार धाराओं या साधनापरिपाटियों का उद्घाटन प्राय अप्रासंगिक होता है और उद्देश्य की सिद्धि करने में असफल रह जाता है। मतभेद और उत्तेजना की भी कम संभावना नहीं रहती। प्रत्येक व्यक्ति का पृथक व्यक्तित्व होने के कारण अधिक इच्छा यही है कि अपनी अपनी लेखनी से सबके अपने अपने मर्म प्रकट हों। यद्यपि इन कारणों से मैं अभिभूत नहीं हूं, तथापि इस अवसर पर मौन रहना और समय की प्रतीक्षा करना उचित समझता हूं।

किंतु आधुनिक काव्य के कुछ ऐसे स्पष्ट लक्ष्य, जो सबकी दृष्टि मे आ गए हैं लिख देने में कोई हानि भी नहीं है। विशेषकर निराला की काव्यधारा उनके जीवन से अनुप्रेरित होने के कारण और भी सुनिर्दिष्ट और स्पष्ट सी है। व्यापक जीवन से सहानुभूति प्रत्येक स्थिति की स्वीकृति और उसी में सौन्दर्यान्वेषण का लक्ष्य रखते हुए निराला का काव्यभाव प्रकट हुआ है। आनंद की सार्वत्रिक खोज और अभेद भाव से इंद्रियों की परितृप्ति का पथ स्वीकार करते हुए भी वे मन बुद्धि की सात्विक प्रेरणाओं से अधिक परिचालित हुए हैं। नवयुग की नवीन साधना में दत्तचित होने के कारण प्राचीन रूढियों और नियमों की अमान्यता नई काव्यकला के ऐतिहासिक अध्ययन और समदर्शी विचार में बाधक हो रही है।

पाश्चात्यकला परिपाटी स्वर तथा सगीत का अभ्यास भी इन रचनाओ म लक्षित है, किंतु न तो मैं यहा उन सबका उद्धरणसहित प्रमाण द सकता हू, न उनकी मीमासा का प्रयत्न कर सकता हू। मेरी इच्छा थी कि इन गीतो म काव्य कला की जो सुदर स्फुरणाए और अभिव्यक्तिया है, उनका भी उल्लेख करू और परिचय दू। किंतु उसका भी अवकाश न मिला। इन पद्यो मे भाषा सबधिनी कुछ नवीनताए भी हैं जिनम एक यह है—सम्मान के लिए तुम से आरभ होन वाले वाक्य के क्रियापद के साथ अनुस्वार जैस तुम जाती थीं' और समानता के लिए अनुस्वारहीन 'जाती थी।' ऐसे ही कुछ अन्य प्रयोग हैं, जो पाठका को आप ही दिखाई देंगे।

\

काव्यविकास

कवि और उसके काव्य का विवचन और मूल्याकन कई स्तरा पर किया जा सकता है और यह भी सच है कि विभिन समयो और युगप्रवृत्तिया के प्रभाव स उक्त विवेचन और मूल्याकन म परिवतन भी हाने रहत हैं। परतु इन अनिवाय परिवतनो के रहत हुए भी कवि की मूल वस्तु के स्वरुप और उनके कार्योंकष के सवध म कुछ स्थाई और अपरिवतनीय धारणाए भी रहा करती हैं। इन धारणाआ की पुष्टि करना आवश्यक होता है अयथा किसी भी कवि क सवध म राष्टीय प्रतिक्रियाओ का स्थिरीकरण नही हो पाता। इस प्रकार प्रतिक्रियाआ का स्थिरीकरण प्रत्यक युग क समीक्षका का आवश्यक दायित्व है।

हिंदी के आधुनिक युग के कुछ विशिष्ट कविया के सवध म हिंदी समीक्षका न जो विवेचन किए हैं उनके फलस्वरूप उन कवियो की एक विशिष्ट मानरखा हिंदी साहित्य म वन चुकी है। यद्यपि विभिन विचारभूमियो स काव्य की परख करन वाल समीक्षका की कमी हिंदी म नही है परतु यह सतोष की वात है कि इन विभिन समीक्षादृष्टियो क रहन हुए प्रमुख कविया क विवेचन म एक समरसता का निर्माण भी हा चुका है। यह उपलब्धि जहा एक ओर हिंदीसमीक्षा की सतुलित गतिविधि की परिचायक है वहीं, दूसरी ओर यह कविया के अपन विशिष्ट प्रदय से भी सवध रखती है।

कवि निराला के काव्य के सवध म भी युगीन समीक्षका की प्रतिक्रियाए बहुत कुछ परिणत स्थिति मे पहुच चुकी हैं परतु कदाचित व उतनी परिणत नही हैं जितनी अपेक्षित है। निराला का कवियक्तित्व इतनी वहुमुखी सष्टियो का आधार है, और उनक काव्य म इतनी अनकरूपता है कि उनका समग्र समीक्षण उतना आसान नही रहा है। इसके अतिरिक्त निराला के व्यक्तित्व म इतना वविध्य और विलक्षणताए रही हैं कि समीक्षको को उन्हे ठीक स पहचानने म कठिनाई होती रही है। और ज्या ही वे प्रतिक्रियाए समाप्त हुइ निराला क कविव्यक्तित्व को दूसरे प्रकार की, और वहुत कुछ अतिरजित आशसाए और स्तुतिया मिलन लगी हैं। इन परस्परविरोधी वक्तय समुच्चयो क बीच निराला काव्य का सतुलित विवेचन यदि परिस्फुट नही हुआ है तो इसम अकले समीक्षका का दोष नही है।

केवल पाठकसमाज म ही नही अनेक बार जानकार क्षेत्रो म भी निराला-काव्य के सबध मे अपरिनिष्ठित धारणाए व्यक्त की जाती है। वास्तव म इन धारणाओ से ही निरालाकाव्य के वास्तविक आकलन म सबसे अधिक अवरोध की स्थिति आया करती है। उदाहरण के लिए हम यहा कुछ ऐसी धारणाआ का उल्लेख करेंगे जिनका स्पष्टीकरण हमारी दृष्टि म आवश्यक है। निराला का युग प्रमुखत प्रगीतयुग रहा है और इस युग का काव्योत्कष वस्तुत प्रगीतकाव्य का उत्कष ही कहा जा सकेगा। परतु प्रगीत सबधी धारणाए आज भी अधूरे और अपर्याप्त रूप म विज्ञापित होती हैं। इग्लैंड म प्रगीतकाव्य के लिए वैयक्तिक सवेदन और उच्छवास की इतनी महत्ता बता दी गई है कि चित्राकनप्रधान वस्तु-मुखी प्रगीता को प्रगीतकाव्य की सीमा म लेना भी लोगो को स्वीकार नही होता। प्रगीत का अथ व्यक्तिवेदना के प्रकाशन तक सीमित हान के कारण दश विदश की अनक प्रगीतसष्टिया अपना यथाथ मूल्य प्राप्त नही कर पाती परतु इस आर इन वेदनामूलक पारिभाषकों का ध्यान भी नही जाता।

निराला वस्तुमुखी और चित्रणात्मक विशेषताओ के प्रगीत कवि हैं। उनके प्रगीता मे वैयक्तिक प्रतिक्रियाए अत्यत विरलता स प्राप्त होती है परतु जहा कही वे मिलती हैं वहा वे शृ गारमूलक न होकर करुण रस की प्रतिक्रियाओ स समन्वित होती है और गभीरतम भावप्रक्रिया उत्पन्न करती है

दु ख ही जीवन की कथा रही
क्या कहू आज जो नही कही।

इन और ऐसी पक्तिया का लेखक यदि प्रगीतभूमिका पर नही माना जाएगा तो दूसरे कौन कवि हागे जिन्ह यह भूमिका दी जा सकगी?

निराला कोई आत्मलीन कवि नही थे। उनकी मनस्विता वैयक्तिक वेदना-भूमिया को पार कर गई थी। वे कुशल कलाकार भी थ और काव्यनिर्माण के दायित्व को बहुत अच्छी तरह समझत थे। आधुनिक प्रगीतकवि अपन भावात्मक उदगारो के उद्वेग मे पडकर प्रगीत के कलासौष्ठव को विस्मत कर जात हैं किंतु निराला इस सबध म सदैव सजग रह हैं। कला की दृष्टि से उनके प्रगीतों मे जो रूपविन्यास मिलता है वह अन्यत्र बहुत कुछ विरल है। रूप या आकृति का यह विन्यास यद्यपि क्लासिकल काव्य की परपरा स उपलब्ध हुआ है, परतु वह आधु-निक प्रगीत क लिए भी पूणत उपादेय है। इसी प्रसग म निराला की प्रगीत-सष्टिया म तथाकथित तल्लीनता या आत्मलीनता का गुण न पाकर लाग उन्ह 'राम की शक्तिपूजा और 'जागो फिर एक बार' का वीर गीतकार ही मानन हैं। परतु उन्ह यह दखना चाहिए कि इन वणनात्मक वीरगीता की अपक्षा निराला की रुचि 'बादल राग' जसी कविताओ की सष्टि की ओर कम नही रही है।

की सीमित भूमि से बाहर खीच रही थी। आचाय रामचद्र शुक्ल से लेकर परवर्ती अनक समीक्षका ने निराला के काव्य म स्वच्छदतावाद का वास्तविक प्रसार देखा है। छायावाद की काव्यचेतना सन 1936 तक अपन पूण विकास पर पहुच कर कमश क्षीण और विरल होन लगी तब एक ओर छायावाद की भावभूमि अधिक अतमु ख होकर महादवी क रहस्यकाव्य म परिणत हुई और दूसरी ओर निराला के काव्य म अधिकाधिक बहिमु खता प्राप्त करती हुई स्वच्छदतावाद के समस्त सीमातो का परिस्पश करन लगी। इस प्रकार छायावादी काव्य की समस्त व्याप्ति निराला और महादवी क काव्य के दो छोरा के भीतर देखी जा सकती है। सन 1936 के पश्चात निराला की कविता मे छायावाद की स्वीकृत परिधिया और भी क्षीण होती गई यद्यपि तुलसीदास और राम की शक्ति पूजा' म भी छायवाद क स्मतिचिह्न विद्यमान है। व्यग्यात्मक कविताओ के उन्मेष के पश्चात निराला को कुछ लोग प्रगतिवादी या प्रगतिशील भी मानन लगे और कुछ लोगा ने उसी प्रकार की रचनाओ मे निराला के प्रयोगवाद की झलक भी देखी। निराला के काव्य म प्रगतिशील और प्रयोगशील तत्व तो आरभ से ही विद्यमान थे, तब इन विशेष रचनाओ को इस प्रकार का नामकरण क्या और कस दिया गया, समझना कठिन है। हमारी दृष्टि में निराला के स्वच्छदतावादी काव्यविकास की य दो एसी आशिक परिणतिया हैं जिनके आधार पर स्वतत्र नामकरण नही किया जा सकता यद्यपि यह स्वीकार किया जा सकता है कि अपन विक्षेपकाल म निराला मे हल्के प्रयागा की मात्रा बढन लगी थी। सन 1950 क पश्चात निराला के आत्मनिवदनात्मक अतमु खी काव्य को कुछ लोग अतश्चेतनात्मक और अतियथायवादी भूमिका पर परखना चाहत हैं। परतु निराला की कविता इस प्रकार की ऐकातिक भावभूमियो पर कभी नही गई। उनका मूल स्वच्छदतावादी स्वर किसी भी समय तिरोहित नहीं हुआ। अपनी इन धारणाओ के स्पष्टीकरण के लिए हम निराला के काव्यविकास का एक धारावाहिक चित्र उपस्थित करना आवश्यक समझते हैं।

निराला की काव्यसृष्टि के प्रथमोन्मेष क्षण से लेकर जब तक मतवाला' म उनकी कविताए निकलती रही तब तक की अवधि को उनका प्रथम काव्य चरण कहा जा सकता है। तिथि की दृष्टि स सन 1916/17 और 1927 इस अवधि के सीमात हैं। प्रथम अनमिका (1923) और 'परिमल (1930) म प्राप्त सारी रचनाए निराला न इस काव्यचरण म प्रस्तुत की हैं। इस युग मे निराला काव्य की सबसे बडी विशेषता उसका स्वच्छद स्वरूप है। इसी काल म उन्होन काव्य की बाह्यशृ खला—छदो क बधन—को ताडन का उपक्रम किया था और मुक्तछद म काव्यरचना की थी। कतिपय रचनाए छन्दोबद्ध भी हैं।

किंतु उनमे भी निराला के विद्रोही और मनस्वी उत्साह का व्यक्तित्व व्याप्त है। इसी समय जहा बादल राग' और जागो फिर एक बार' जैसी रचनाए एक क्रांति का आवाहन करती हैं, वही अतीत का एक स्वर्णिम स्वप्न उपस्थित करने वाली यमुना के प्रति जैसी कविता भी है जिसम वियोगस्मति की प्रधानता हान हुए भी इतना उद्दाम वेग है कि सारे छद और बध एक दूसरे म विन्यस्त हो गए हैं। भावाद्वेग की स्थिति मे जिस प्रकार की असयमित समृद्धि, जिस प्रकार की अन गल प्रखरता, उन्मप पाती है उसका पूरा परिचय 'यमुना के प्रति म मिल जाता है। भावावग व्यवस्था और वि यास की सीमाओ का अतिक्रमण कर गया है। इस कविता म बधा को यदि हम अदल बदल कर पढें, तो भी प्रभाव मे कोई बडा अतर नही आयगा। सयमित अर्विति की यह कमी क्षीण काव्यक्षमता की नही, भावाद्वेग के आतिशय्य की सूचना दती है।

इस समय की निराला की तुम और मैं शीपक कविता बहुख्यात है। उसम उपमाना का सप्लव है, किंतु विशुद्ध तारतम्य की दृष्टि से विशुद्धरूप से सग्रथन की दृष्टि म एक असबद्धता भी है। अर्थात उसम तुम और मैं' के जितन सबध है प्रिय और प्रिया के जितन विनियोग सकेत हैं ईश्वर और जीव की अनकविध अन्योन्याश्रयी जितनी निगूढ भगिमाए है कल्पना की प्रखरता और मनागति के अजस्र वग ने उनका सहयाग सहज किया है। परवर्ती रचनाओ का सा भावप्रसार का सुनिश्चित माग उनम नही दिखाई देता। जूही की कली' म जा उद्वेग है आलोचको ने उसकी चर्चा भी की है। स्नेह स्वप्न मग्न सोती हुइ जूही की कली पर निपट निठुराई करत हुए निदय नायक 'पवन उच्छ खल हो गया है। इस आरोप को आरोप न मानकर निराला की उस यौवनकाल की अबाध भावप्रवणता का स्मतिचिन्ह मानना चाहिए। प्रखरता' और पौरुप' इस युग की काव्य रचना के लिए दो विशेपण दिए जा सकन हैं।

अनामिका' म 'पचवटी प्रसग शीपक जा काव्यरूपक है वह उतना अभि नेय नही, क्योकि उसम अतिशय प्रवहमानता धारावाहिकता वेग है। इतनी वेग-वती वस्तुओ को सुनिश्चित नाट्यभूमिका नही दी जा सकती। अत साहित्यिक नाटय की अपक्षा यह कति लोकनाटय के अधिक समीप है। साहित्यिक नाटक म, चाह वह गीतनाटय हो या काव्यरूपक भावसतुलन सवादा की उपयुक्तता, वाक्या म विपयानुरूपता के तत्व हान हैं। इसके विपरीत लोकनाटय कलात्मक योजना और अभिव्यजना के सौन्य पर उतना आश्रित नही रहता, जितना तथ्य कथन या वस्तुकथन पर। इस दृष्टि म पचवटी प्रसग एक स्वच्छन्तावादी काव्यकति है जिसम सवादा की शली अपना रखी है काव्यरूपक के वाह्यरूप को अपना लिया है। वास्तविक काव्यरूपक बनन क लिए उसे कुछ अधिक सश्लिप्ट,

व्यवस्थित नाटयकला की आवश्यकता थी।

अनक कवियो क प्रारभिक काव्यो मेप म कलापक्ष की सापेक्षिक विरलता क साथ भावो मेप की अजस्रता मिलती है। फिर नमश सयम और सतुलन का आगमन होता है। विशेष साहित्यिक युगा के क्रमिक विकास म भी ममानातर स्थितिया लक्षित होती हैं। दृष्टातस्वरूप प्राचीन ग्रीक नाटयकला के तीन विख्यात प्रतिनिधि एस्काइलस साफोक्लीज और यूरीपाइडीज है। एस्काइलस ग्रीक नाटय के प्रथमोत्थान का प्रतिनिधि था अतएव उसके नाटको मे भावतत्व अत्यत मबल और पुष्ट हैं किंतु रखाकन उतना ही ऊरड खाबड है। सोफोक्लीज के नाटका म माधुय की वद्धि के साथ भाव और कलापक्ष का एक सम वय हुआ है। अत समीक्षको न उन्हें अधिक उत्तम कोटि का नाटककार माना है। उनकी कला मे सौदय निम्सदह अधिक है किंतु एस्काइलस के प्रसगो के अनुसार पुरुपत्व का अपना अलग सौदय होता है पौरुप शक्तिमता स्वय काव्य का अभीप्सित गुण है। यूरीपाइडीज म कलापक्ष का वशिष्टय है किंतु भावपक्ष के निर्माण की मूल क्षमता मे जीवनतत्वा के मूल सजन म वह उक्त दानो कलाकारो की समता नही करता। स्वच्छदतावादी काव्य के अतगत वड्सवथ, कीट्स और टनिमन लगभग अनुरूप भूमिका उपस्थित करते है। प्रश्न है कि हम व्यक्तित्व को प्रधानता दें और भावपक्ष की मशक्तता का मुरय मानें अथवा अभिव्यजना के कौशल या सौदयप्रसाधन को अधिक महत्व दें? *सतुलन का मध्य माग सत्य के अधिक* समीप है। यह सतुलन निराला न अपने काव्यविकाम के द्वितीय चरण म प्राप्त किया। प्रथम चरण पूण स्वच्छन्तावादी, विद्रोही भूमिका पर अकित है। इसका साहित्यिक सौष्ठव भावपक्ष को लकर वडी ऊचाई तक जाता है। किंतु कलानियो-जना की आवश्यकता का परखने पर सीमाआ का परिचय मिलता है। यह कहना होगा कि भावपक्ष की प्रखरता कलापक्ष की यूनता को पूर्ण कर दती है।

सन 1927 28 म निराला के का य का द्वितीय चरण प्रारभ होता है, जो सन 1935 37 तक चलता है। इस अवधि म उन्हाने अधिकाशत गीतो की सष्टि की। गीतका (1936) के समस्त गीता के अतिरिक्त कुछ स्फुट गीत भी हैं जो अनामिका (1938) की द्वितीय आवत्ति म प्रकाशित हुए हैं। प्रारभिक प्रगीत *रचनाओ की तुलना म ये परवर्ती रचनाए अधिक सयत और प्राय छदोवद्ध हैं।* उदाहरणाथ उनकी वास ती' नामक कविता उनके सामा य प्रगीतो स अधिक लबी होन के अतिरिक्त अधिक सयमित भी है। उसम उद्दाम प्रवग नही है किंतु इमीलिए उसकी आलकारिक योजना अधिक सुदर हो सकी है। भाव की दष्टि से इस ममय के गीत अधिकाश शृगारिक है। शृ गार के अतगत मानवीय शृ गार और प्राकृतिक शृ गार दोनो आत हैं। प्रथम म नारी अनक रूपा म चित्रित है,

पारिवारिक जीवन की अनक छवियां अंकित हैं। प्राकृतिक शृंगार क पक्ष म यह सम्यक ऋतुगीत है। यह शृंगारिकता, नारी और प्रकृति की अनुरागमयी सौम्य भूमिकाओं का यह सघन चयन निराला के काव्य के द्वितीय उत्थान का केंद्रीय तत्व है जबकि प्रारभिक रचनाओं म वीर रस की कविताए भी है। शृंगार रस स भिन्न भावभूमि की रचनाए भी 'गीतिका' मे अप्राप्य नहीं है। भाव की दृष्टि से इन रचनाओं का दूसरा पक्ष प्रार्थनापरक गीतो का है। जननी को सबोधित करत हुए बहुत स विनय और प्रार्थना के गीत लिखे गए हैं। इन गीतो म भी मुख्यत उल्लास का बोध करत हुए कर्तव्य माग पर चलन के लिए शक्ति की याचना की गई है। 'दे मैं करू वरण जननि! दुखहरण पद राग रंजित मरण!' जैसी सुविन्यस्त और सशक्त कविताए इस श्रेणी के अतगत आती है। ततीय श्रेणी दाशनिक गीतों की है जिसका एक सुन्दर दृष्टात 'कौन तम के पार' (र कह) है। सूक्ष्म तत्व के लिए भी रूपयोजना का कौशल इनम दर्शनीय है। शेष स्फुट गीतो म 'भारति जय विजय करे' जसा चुस्त विन्यास वाला राष्ट्र गीत भी सम्मिलित है।

निराला को छायावादी और रहस्यवादी कवि कहा गया है। प्रश्न उठता है कि उनके इस युग के शृंगारिक गीतो म छायावाद और रहस्यवाद किन रूपो म उपस्थित हुआ है? शृंगारिक वणनो म आध्यात्मिक आभा दो रूपो म आ सकती है, एक तो शृंगार इतनी गहराई और व्याप्ति का बोध करे कि उसम आध्यात्मिकता का आभास उत्पन्न हो जाए, और द्वितीय शृंगारिक भावना का पयवसान किसी आध्यात्मिक भूमिका पर किया जाए। निराला न दोनो ही प्रक्रियाओं का प्रयोग किया है। उनके शृंगार म जो परिष्कृत भूमिकाए है मार्मिक चित्रण हैं व मात्र वस्तुवणन स, रूपचित्रण से, ऊचे उठे हुए हैं। अन्य कविताओ मे ससीम की असीम म परिणति है जिसके द्वारा लौकिक चित्रो के साथ उनके पयवसान म दार्शनिक तथ्य का सकेत मिल जाता है। यह दूसरी पद्धति पुरान गीतकारो स मिलती-जुलती है। सूरदास आदि कवि कृष्ण की शृंगारिक लीलाओ का वणन करते हुए समापन म उनके प्रति प्रणति निवेदन करत हैं। निराला न साकार तत्व को न लेकर बहुधा एक विराट रूप म रचना का पयवसित किया है। शृंगार वणन के सीमित चित्रो को विराट रूप म परिणत करना प्राचीन कवियो की तुलना म उनकी विशेषता है। कहा जाता है कि रवीद्र क काव्य म भी यह वस्तु मिलती है अर्थात वह लौकिक सौंदय को अलौकिक उत्थान देत हैं, दार्शनिक समापन देन है। यह काव्य की अद्वतवादी भूमिका है यही निराला का अद्वतवादी दशन है यही उनकी रहस्योन्मुखी सष्टि है और उनक इन गीतो का कलाशिल्प है।

गीतसष्टि की दृष्टि से निराला विद्यापति सूर और मीरा की श्रेणी मे आते हैं।

यह स्मरणीय है कि गीत वास्तव म काव्यकला और सगीतकला के योग होते है। इसीलिए उनका सौदय सौष्ठव, उनकी भाषागत विशेषताए और उनके भावगत स्वरूप तथा प्रकार स्वतत्र रूप स अध्ययन करन योग्य है। उनकी ये विशेषताए सामान्य प्रगीत की भूमिका पर नही परखी जा सकती। गीत प्राचीन काव्य है जबकि प्रगीत अधिक आधुनिक है। गीत की पुरानी परपरा का नए गीता पर क्या प्रभाव पडता है? नए गीत ऐसे उपमाना का आधार लेकर चलत है जो परपरा से प्राप्त है। नइ कल्पनाछवियो का गीता मे प्राधान्य नही होता क्योकि उनमे सीधे रस की सष्टि होती है। गीत सामूहिक मडलिया म गाए जात हैं। सगीत का सपक पाकर ही उनका सौदय खिलता है। चूकि गीत सावजनिक गाष्ठिया की वस्तु है, अत श्रोतामडली का उनके साथ दढ सबध है। वह केवल पाठ्य वस्तु नही, गायन के द्वारा सामाजिको के आनद की वस्तु है। साकाजिक पक्ष की इस प्रधानता के कारण ही सुपरिचित अलकार उनम अधिकतर रहत हैं। अलकार ही क्यो सुपरिचित विभाव अनुभाव और सचारी भाव के विन्यास का उल्लेख भी गीतो म तात्कालिक प्रभाव की दष्टि स किया गया है।

सगीत की दष्टि से गीतयोजना के अनेक रूप होत है। कुछ गीत शास्त्रीय राग रागिनिया म बधे रहत है। निराला के अनक गीत इसी शास्त्रीय सगीत का अनुवतन करत है। दूसरा है एक स्वच्छद सगीत, जिसकी धारा आधुनिक काल मे चल पडी है। इसम कतिपय भारतीय लया, पाश्चात्य लया ग्राम्य गीतो का समन्वय मिलता है। निराला के अनक गीत इस स्वच्छद शली म लिखे गए हैं। शास्त्रीय भूमिका स दूर रहकर महादवी और प्रसाद के गीत अधिकाशत इसी भूमिका पर विरचित हैं। सगीत मे अधिक निष्ठित होन के कारण निराला के गीत मूलत गय है, जबकि प्रसाद और महादवी के गीत मूलत पाठ्य हैं। तीसरा आधार लोकगीतो, जनगीतो का है। इनकी अलग ध्वनिया और अलग छद और लय योजनाए हैं। उनमे निरतर अभिवद्धि भी होती रहती है। इन जनगीतो म फारसी-उर्दू की कव्वालिया, उत्तरप्रदेश का बिरहा, कजरी इत्यादि अनक प्रकार हैं, जो शास्त्रीय सगीत के बाहर है। उनम विशेष लोकाकषण रहता है और लोकभूमिका पर उन्ह पढा और गाया भी जाता है। ऐसे गीत भी निराला न लिखे हैं। उर्दू और फारसी की बह्र को भी उन्हान गीतिका म अपनाया है। विविधता और प्रयोग की दष्टि स निराला इस समय के सवश्रेष्ठ गीतकार हैं।

गीत के छद और कविता के छद पृथक पृथक होते है। मात्राओ की गणना दोना म समान रूप स नही की जा सकती। गीता का छदविधान सगीत क आराह-अवरोह पर आश्रित है। अनक बार स्वरसाधना के अनुरूप गीत की मात्राआ को किसी स्थान पर अधिक विस्तार दना पडता है और किसी स्थान पर सक्षिप्तीकरण की

आवश्यकता पडती है। सफल गीतकार वह है जो संगीत की मात्राओं के अनुरूप अपने गीतछदों का निर्माण करे। या तो संगीत के विशेषज्ञ किसी भी रचना को स्वरों में बाध सकते है, किंतु उनमें कृत्रिम रूप से खींचतान करनी पडती है। निराला के गीतों में स्वाभाविक स्वर संधान की क्षमता है। इस प्रकार उनमें संगीत और काव्यकला के दोहरे प्रयोजन सिद्ध होते हैं जिनका अन्य कवियों में सापेक्षिक अथवा संपूर्ण अभाव है।

गीतों की भाषा पदयोजना, सरल, स्वाभाविक और परंपरानुमोदित होनी चाहिए। क्लिष्ट अस्पष्ट और गढ़े हुए अप्रचलित शब्द उसकी सार्वजनिकता में व्याघात पहुचाते हैं। गीतों की भाषा स्वभावत श्रुतिमधुर होती है। कर्कश टूटे हुए खंडित शब्दों का समावेश उनमें नहीं हो सकता। इसका एक श्रेष्ठ उदाहरण 'गीत गोविन्द' है। इसमें सामासिक शब्दावली का सचेत प्रयोग है। सामासिक पदावली का अर्थ लोग उसी समय समझ लेंगे या नहीं इसकी चिंता गीतगोविन्दकार ने नहीं की। कविता में अर्थ की प्रधानता होती है किंतु संगीत में स्वरसवेदन से भावनिर्माण होता है। उसमें एक अपनी विशिष्ट साकेतिकता होती है जिसकी निष्पत्ति के लिए अर्थ की अपेक्षा स्वरमैत्री शब्दयोजना पर अधिक ध्यान दिया जाता है इसलिए गीत न सरल है न कठिन क्योंकि वह अर्थगत उतना नहीं जितना मधुरोच्चार और स्वरारोह से संबद्ध है। निराला के गीतों पर सामासिकता का आरोप लगाया गया है। यह कविता का दोष हो सकता है किंतु गीत का नहीं। समासबहुलता काव्य के भावों को समझने में बाधक हो सकती है किंतु वही पदावली के गायन में सहायक हो सकती है। निराला के गीतों पर आक्षेप करने वाले इस अंतर को भूल गए है जिसका स्मरण रखना गीतों के समीक्षाकार के लिए आवश्यक है।

उक्त विशेषताए निराला को जयदेव विद्यापति और सूर जैसे संगीतज्ञ कवियों की पंक्ति में प्रतिष्ठित करती है। आधुनिक काल में इस श्रेणी के वे अकेले प्रतिनिधि है। प्रसाद महादेवी के गीत काव्य अधिक हैं, गीत कम। कहीं कहीं वे अधिक लंब हो गए हैं। यही कारण है कि 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' जैसी रचनाए गीत के रूप में अधिक प्रचलित और ख्यात नहीं हो सकी जबकि निराला के 'भारति जय विजय कर' जसे गीत संपूर्ण राष्ट्रीय क्षेत्र तक पहुच गए हैं। निराला के गीत जिस प्रकार सार्वजनिक गायन के रूप में आस्वाद्य हैं, वही बात इस युग के अन्य श्रेष्ठ कवियों की गीत रचनाओं के संबंध में नहीं कही जा सकती। उनके द्वारा यत्र तत्र नए विषयों के साथ नए प्रकार की भावाभिव्यजना का प्रयोग किया गया है। प्रसाद के गीतों का स्वरूप अधिक काल्पनिक और रोमाटिक है। उनकी उल्लिखित रचना अधिक कल्पनासंपन्न और सौंदर्य प्रधान है। निराला के गीतों

के समान भावप्रधानता और विन्यस्त संगीत का मणिकांचन योग उसमें नहीं है। प्रसाद और महादेवी की गीतरचनाओं में यह विशेषता विरल है क्योंकि सामूहिक गान का अवतरण करना उनका लक्ष्य नहीं था। ये गीत अधिक वैयक्तिक हैं जबकि निराला में वैयक्तिकता और कल्पनावैचित्र्य का पक्ष गौण है। अपने आरंभिक काव्य में निराला ने यदि भावावेग की प्रबलता से उत्कर्ष की सीमाओं का अनुधावन किया था तो इस द्वितीय उत्थानकाल में ऐसी रचनाएं उन्होंने प्रदान की जो काव्य की भूमिका पर भावपक्ष और कलापक्ष का संतुलन और सामंजस्य तो उपस्थित करती हैं साथ ही अस्खलित संगीतविन्यास के द्वारा उनके रूपायन को अधिक संश्लिष्ट और सघन बनाती है। आरंभिक रचनाओं की उल्लासमयी अंतर्धारा के क्रम में 'गीतिका' के समस्त गीत उल्लास, आस्था, शक्ति और परिष्कार से समन्वित है।

निराला के काव्यविकास का तृतीय चरण सन 1935 से सन 1942 तक माना जा सकता है। इस अवधि में निराला के कविव्यक्तित्व की दो धाराएं परिलक्षित होने लगती हैं। एक ओर तो वे औदात्य की भूमि पर जाकर महाकाव्योचित शैली का प्रयोग करते हुए दीर्घ आख्यानों की प्रवृत्ति प्रदर्शित करते हैं और इसी युग में दूसरी ओर एक भिन्न प्रकार की, हास्य और व्यंग्य की प्रवृत्ति का भी उन्मेष करते हैं। एक ओर गांभीर्य और दूसरी ओर हल्कापन—ये दोनों प्रवृत्तियां सामान्यतः परस्पर विरोधिनी हैं और इस द्वैत को देखकर ही शंका होती है कि निराला का व्यक्तित्व विघटन की ओर उन्मुख है। सन 1934 तक उनका जो धारावाहिक समाहित व्यक्तित्व सामने आता है जिसमें भावपक्ष और कलापक्ष पूर्णतया संयोजित और अविच्छिन्न हैं उसमें क्रमशः अब विच्छिन्नता प्रकट होने लगती है। ये नए दीर्घ प्रगीत आयाससाध्य कविता के उदाहरण हैं जबकि पूर्ववर्ती गीत और प्रगीत अव्याहत प्रवाह गति के सूचक हैं। इन नई रचनाओं में एक प्रयत्नसाध्य आलंकारिक भाषा की कृत्रिम सामासिकता के माध्यम से औदात्य की सृष्टि की गई है। यह सच्चा औदात्य है या नहीं यह प्रश्न विचारणीय है। दूसरी ओर यह भी देखना चाहिए कि इस युग में निराला ने जो व्यंग्यात्मक काव्य लिखे और जिनके द्वारा उन्होंने अपने युग के प्रति अनास्था व्यक्त की वह भी उनके व्यक्तित्व का रचनात्मक संगठन है अथवा कुछ और है? यह भी टूटा हुआ नजर आता है। इस प्रकार व्यंग्य और औदात्य दोनों ही दृष्टियों से विघटन का स्वरूप सामने आने लगता है।

कतिपय समीक्षकों ने 'राम की शक्तिपूजा' और 'तुलसीदास' को निराला की सर्वश्रेष्ठ कृति कहकर विज्ञापित किया है। किंतु महाकाव्योचित औदात्य निराला के अंतरंग की उपज नहीं। एक तरह से वह अपेक्षाकृत अधिक पांडित्य

और परिश्रम का परिणाम है। यह कहा जा सकता है कि निराला के प्रौढ़ व्यक्तित्व के अनुरूप ये कविताएं हैं किंतु यह भी स्मरण रखना होगा कि इस प्रौढ़ता में विघटन के तत्व भी मौजूद हैं। पांडित्यपूर्ण कविताएं अपने में महान होती हैं और उस दृष्टि से ये कविताएं भी महान हैं, परंतु पांडित्य के बल पर विश्व की उत्तम कविता का निर्माण नहीं हुआ, पांडित्य एक साधन के रूप में प्रयुक्त होने पर अपना आलोक कविता में बिखेरता है, परंतु साध्य रूप में हुआ तो कविता की स्वाभाविकता मार्मिकता, विरल होने लगती है। इस प्रकार उक्त दोनों पांडित्यपूर्ण निर्मितियां भाव सवेदन और मार्मिकता की दृष्टि से 'बादल राग' और 'यमुना के प्रति' जैसी रचनाओं की तुलना में कमजोर पड़ती हैं।

इस काल के जिन व्यंग्यात्मक प्रयोगों में निराला सामाजिक जीवन की बहुत सी विकृतियों पर आक्षेप करते हैं उनमें भी उनका निजी असतोष झांकता रहता है। उनकी जो महत्वाकांक्षा अधूरी रह गई है वह प्रतिबिंबित हो जाती है। व्यक्तित्व के विकास की दृष्टि से निराला का यह चरण विभाजित व्यक्तित्व का है। इस तृतीय चरण का काव्य प्रथम दो चरणों की भावभूमि तक नहीं पहुंच पाया। उसमें क्षतिपूर्ति की गई है नए रस का आविष्कार किया गया है तथा महाकाव्योचित औदात्य भी एक नया आविष्कार है। इस प्रकार नवीनता उनके काव्य में हमेशा बनी रही पिष्टपेषित वह नहीं है परंतु नवीनता आने रहना पिष्टपेषण न होना नकारात्मक गुण है। निराला के काव्य को ये गुण आकर्षण देते रहे हैं किंतु सृजनशीलता के गुण से समन्वित आरंभिक दो चरणों का जो काव्य है उसकी सक्रिय, संपन्न काव्यभूमि आहत और क्षत हो चली है।

किंतु निराला के इस द्विधात्मक काव्यप्रयास के मध्य सन 1935 की लिखी उनकी 'सरोजस्मृति' शीर्षक कविता उनके समस्त काव्य के शीर्ष पर संस्थित दिखाई देता है। एक ओर जहां उनके व्यक्तित्व का विघटन हो रहा था और वे औदात्य और व्यंग्यात्मकता के बीच अनिर्दिष्ट गति से अग्रसर हो रहे थे, पुत्री के निधन ने उनकी समस्त भावचेतना को पुनः एक केंद्र में लाकर एकाग्र कर दिया। यह सीमित क्षण ही क्यों न हो, निराला की काव्यसृष्टि में अतिशय महत्वपूर्ण है। दीर्घ प्रगीत के असाधारण प्रसार में इतना समाहित सघटन निराला की किसी दूसरी रचना में शायद ही मिले। जान पड़ता है कि इस दुख के अवसर पर निराला की समस्त टूटती हुई वृत्तियां पुनः एकान्वित हो गई हैं और करुणा की भूमिका पर एक ऐसे काव्य की सृष्टि की जा सकी है जो समस्त हिंदी काव्य में अपना सानी नहीं रखता। निराला के पूर्ववर्ती दीर्घ प्रगीत या तो वीर रस के थे (शिवाजी का पत्र आदि) या तो वे शृंगार और व्यंग्य के समन्वय से बने थे (बनबेला)। वे रचनाएं वर्णनात्मक अधिक थीं और विशुद्ध प्रगीत की भावभूमिका से अंशतः हटी

हुई थी। वयक्तिक शोक और विषाद की प्रतिक्रिया म प्राय कविगण भावनात्मक (सेंटीमटल) हो उठन है, परतु निराला की सुपरिचित तटस्थता यहा भी विद्यमान है, जिसक परिणामस्वरूप वे न केवल रचना का बाह्य सगठन निर्दोष बना सके है बल्कि वणनीय वस्तु म सपूण भावोत्कष भी ला सके है। इस रचना मे आए हुए समस्त स्मतिचित्र ऊपर मे पृथक पृथक दीखते हुए भी एक मार्मिक समन्वयसूत्र म पिराए हुए हैं जिस कारण इस रचना मे कही भी स्वतत्र वणनात्मकता नजर नही आती। दीघ प्रगीत के सवश्रेष्ठ उदाहरणो मे यह कविता हिंदी की स्थाई निधि बन चुकी है और चिर दिन तक बनी रहेगी।

निरालाकाव्य के इस ततीय चरण म व्यग्यात्मक और उदात्त कृतियो की द्विधात्मकता के बीच समरसता की एक ततीय भूमिका भी है जिसे हम उनके दीघ, प्रगीतो के रूप मे देखते है। निराला के अधिकाश दीघ प्रगीत सन '35 और '38 के बीच लिखे गए हैं। निराला के काव्यविकास का यह एक स्वतत्र प्रस्थान है।

सन 1942 से '50 तक निराला के काव्य का चतुथ चरण है इसम प्रयोगा की बहुलता देखते हुए इसे निराला का प्रयोगचरण भी कहा जा सकता है। 'कुकुरमुत्ता' आदि लबी कविताए 'मास्को डायलाग आदि छोटी कविताए 'बेला' की गजलें इसी समय लिखी गई है। 'अणिमा' म कुछ पुरानी कविताए भी जुडी हुई हैं परतु साथ ही कुछ व्यग्यात्मक कविताए और महादेवी विजयलक्ष्मी पडित प्रभति पर कुछ प्रशस्तिया भी हैं। इन सभी रचनाओ की पद्धति प्रयोगात्मक है। आशय है कि कोई आश्रय लेकर कवि अभिव्यजना को नया रग देता है। वस्तुनिरूपण की शैली म एक उपक्षाजन्य बाहुल्य है। निराला का यह शलीप्रधान युग है।

'कुकुरमुत्ता' उनकी व्यग्य रचनाओ के शीष पर विद्यमान है। उनकी प्रयोगात्मक रचनाआ म कदाचित वह सबस अधिक प्रचलित और सफल भी है। वह हिंदी और उदू की बालचाल की भाषा म व्यग्यात्मक तौर से लिखी गई है। इसका आशय समझन म लोगा को अनक प्रकार की भ्रातिया हुई हैं। सामान्यत गुलाब सामतवादी सभ्यता का और कुकुरमुत्ता सवहारावग का प्रतीक है। प्रगतिशील आदश इसम यह है कि सामतवादी प्रतीक गुलाब के उपहास के साथ कुकुरमुत्ता की प्रशसा की गई है इस आधार पर कुछ समीक्षक इस प्रगतिवादी कविता मानते हैं। किंतु यह भी दखना चाहिए कि इसमे गुलाब का ही परिहास नही, स्वय कुकुरमुत्ता का भी उपहास है। वह अपन मुह से अपनी जिन विशेषताआ का उल्लेख करता है और जिस पद्धति स स्वय को ससार की श्रेष्ठतम वस्तुआ का जनक कहता है, व व्यजना के द्वारा स्वय उस उपहास के केंद्र म उपस्थित कर दती है। यह बात कतिपय प्रगतिवादियो को या तो दिखाई नही दती है या लक्ष्य हान पर उन्हें उलझन म डाल देती है। प्रगति का सीधा माग त्यागकर उसकी सभावना

निर्मित करके सहसा इस उलझन म डाल देन के लिए उ निराला की ओर क्षोभ और आरोप से भरी दृष्टि स देखन लगत है।

गुलाब के साथ कुकुरमुत्ता को भी उपहास की स्थिति म रख दन क कारण कतिपय अ य समीक्षक कहत हैं कि इस कविता म निराला का व्यग्य प्रत्यक वस्तु पर है सवतोगामी है। व्यग्य की तलवार म धार ही धार है मूठ नहीं। यह सम्मति नकारात्मक और उद्देश्यरहित है तथा रूप की भूमिका पर है। किंतु वस्तुत इस कविता का स्वरूप इतना ही नही। गुलाब और कुकुरमुत्ता का परिहास करत हुए निराला यह व्यजित करत है कि न तो प्राचीन समाज व्यवस्था का प्रतीक गुलाब हमारा आदश है और न कुकुरमुत्ता ही आधुनिक सस्कृति का प्रतीक बन सकता है। इसका आशय कोइ नकारात्मक निष्कप नही है। आशय है कि गुलाब का स्थान गुलाब ही ले सकता है कुकुरमुत्ता नही। पुरानी सस्कृति का स्थान नई सस्कृति ही ग्रहण कर सकती है वह नही जो कुकुरमुत्ता की तरह 'उगाए नही उगता अर्थात जिसका कोई पूर्वापर नहीं है। निराला के दाशनिक आदर्शो स जा लोग परिचित हैं व जानत है कि निराला सास्कृतिक उत्थान क प्रतिनिधि है। यही कारण है कि वे कुकुरमुत्ता को आदश नही रखत। उनका प्रगतिवाद सास्कृतिक प्रगति का आदश है। आरभ से ही उनका यह लक्ष्य रहा है कि मानव सस्कृति अपन पुरान बधनो को तोडकर नए विकास म अग्रसर हो। उनक साम्य स्वप्न म केवल आर्थिक साम्य नही, वह सावनिक साम्य है जिसम सास्कृतिक विश्व मानव की झलक हो—न गुलाब की भाति सपन्न और न कुकुरमुत्ता की तरह विप न।

कुकुरमुत्ता' का कवि न दो खडो म निर्मित किया है। प्रथम अधिक नाटकीय और चमत्कारपूण है जबकि दूसरे खड म वणनात्मकता अधिक है और व्यजना कम है। परिणामत प्रथम खड द्वितीय की अपेक्षा अधिक काव्यात्मक और प्रभाव शाली है। दूसरे खड म नवाब साहब क पूर परिवेश का चित्रण है। नवाब की अल्हडता का उल्लेख गाली और उसकी मा क स्वभावो का अकन कुकुरमुत्ता का कबाब बनान का वणन य सारे के सारे प्रसग इतिवृत्तात्मक है। यद्यपि परिवश निर्माण की क्षमता इनम है तथापि पूवाध क समान व्यग्य और विनाद की भावना उभर कर नही आई।

शली की दृष्टि स कुकुरमुत्ता म टी० एस० इलियट के वेस्टलट की भाति सदभ प्राचुय है। कही मदिरा का उल्लेख है कही सुदशन चक्र क फलक का कही राम के धनुप का और कही बलराम के हल का। य अनकानक सदभ कविता को एक विशिष्ट भौतिक भास्वरता प्रदान करत है। जो भाषा निराला न कुकुरमुत्ता म प्रयुक्त की है, वह हिंदी और उर्दू के मेलजोल से बनी है। बोलचाल की सजीवता के साथ नए मुहावर उसम बडी सख्या म व्यवहृत हुए हैं। छायावादी काव्य

म प्राय लोकप्रचलित भाषा और मुहावरो का प्रयोग नही हुआ जिसस एक गाभीय तो उसम आया है पर सहज तरलता नही है। वह विशेषता 'कुकुरमुत्ता' म मिलती है।

'बेला' और 'नय पत्ते म निराला की प्रयागात्मक रचनाए है। 'बेला म उन्हान उदू शैली की गजला का प्रयाग किया है किंतु इसम उनकी सफलता आशिक ही है। भाषा की दृष्टि म इसम उदू, हिंदी और सस्कृति का सम्मिश्रण मिलता है, जो इस रचना के साहित्यिक उत्कष म सबस बडी बाधा है। हिंदी के जिन कवियो न उदू क छदा का प्रयोग किया है उन्होन प्राय सवत्र उदू पदावली और मुहावरे भी अपनाए हैं या फिर हिंदी की अपनी पदरचना रखी है और उदू के केवल छद लिए है। निराला न इनम से किसी एक पद्धति का प्रयाग न कर जो मिश्रित सृष्टि तयार की है, वह न ता उदू क पाठका के गले सुगमता से उतर पाती है और न हिंदी के। परिणामत यह काव्यपुस्तक शुद्ध प्रयोग बनकर रह गई है। जहा तक भावा और विचारा का प्रश्न है वहा भी इस रचना म कोई सश्लिष्ट भाव या विचार नही आए हैं।

'नय पत्ते' इस दृष्टि स अधिक सफल कृति है। इसम निराला के यथार्थोन्मुख प्रयोग अधिक स्पष्टता से व्यक्त हुए है। कुकुरमुत्ता के हास्य और व्यग्य म तो सामाजिकता साथ लगी हुई है किंतु इसके आग की रचनाआ म निराला का हास्य और व्यग्य समाजनिरपक्ष, यहा तक कि वयक्तिक भी हो गया है। एक दृष्टात खजोहरा' है। इसम कवल नारी की दुदशा का वणन है जो स्नान कर रही ह। रवींद्र की महिमामयी 'विजयिनी की तरह एक एक सीढी उतरत हुए उसका जल म पठना और वहा खजोहरा क सपक म खुजली का प्रसाद पाकर नीलगाय की तरह भागना इसम अकित ह। खुली हुई ग्रामीण प्रकृति के साथ यह खजोहरा की घटना आइ ह और वह उम सार सौंदय को कुरूपता म परिणत कर देती हैं। उदात्त स उपहासास्पद म सहसा विपयय का लक्ष्य हैं एक विद्राह की स्थिति का वणन करना, नारी की गरिमा और शालीनता पर एक आक्षेप की स्थिति लाना। कदाचित निराला न अपनी रामैंटिक सौदय कल्पना म जितने सुदर ढग से नारी-छवियां का चित्रण किया ह, उसी की प्रतिक्रिया म यह व्यग्यात्मक रचना उनके द्वारा प्रणीत ह और माथ ही वह रवींद्र की विजयिनी का विद्रूप सस्करण भी ह। यह स्पष्ट ह कि इस व्यग्य का काई सामाजिक उद्देश्य नही हैं, वह विशुद्ध व्यक्तिगत व्यग्य हैं। सौदयप्रियता का यह ऐंटी क्लाइमेक्स' हैं जो अश्लीलता की सीमा तक पहुचता ह। यह हास्य और व्यग्य शालीनता से विरहित हैं, उसम निमलता की कमी है। निराला कुछ समय तक वयक्तिक अवरोध बधन स ग्रस्त एक ऐसी अनुदारता मे पहुच गए थे जो अगरेज लेखक जोनाथन स्विफ्ट म विद्यमान थी।

'स्फटिक शिला (चित्रकूट प्रसग) म भी निराला ने यथार्थवादी भूमिका को अपनाया ह। इसम चित्रकूट की प्रकृति तक पहुचन का व्यग्यात्मक आख्यान है। बलगाडी पर मदाकिनी दशन के लिए जाना उसम उठाए कष्ट और तीर्थस्थान पर एक रमणीय सौंदय का उद्दाम चित्र इसम सम्मिलित हैं। य स्वस्थ व्यग्य की सीमा म प्राय नही आत। चित्रकूट क प्रति भारतीय समाज की जा पूज्य भावना ह उसे मिटान का प्रयत्न यह कविता करती है। इसे एक प्रतिक्रियात्मक यथाथ कह सक्त ह। विद्रूप क लिए विद्रूप क वणनो म निराला न जो चित्र खीच हैं वे काफी चित्रो पम (ग्राफिक) है, लेकिन व उद्देश्यरहित है।

सन 1950 स सन 1961 म उनके सूर्यास्त तक निराला के काव्य का पचम और अतिम चरण है। यह उनके जीवन की एक अपक्षाकृत दीघकालव्यापी सध्या है। इन दिना भी उ होन काव्यसृष्टि की जिसका परिमाण स्वल्प है किंतु जो एक नए सौदय और सात्विकता स मडित है। कवि न कठोर सघष से अपनी प्रतिभा क योग्य सम्मान जय किया था। जीवन की इस सध्या म व काव्य और साहित्य प्रेमिया क मडल का अतिक्रमण करके निखिल जन के हृदयसम्राट बने। उनके कविरूप के बदले उनकी मानवीयता अधिक उभरकर सामन आई। न जान कितने झूठे सच्चे चुटकुल और वत्तात उनका नाम लेकर चल पडे। निराला अपन यश के शिखर पर जनसमाज म जितनी अभिरुचि और चर्चा के विषय बने थे, उतन ही कदाचित वह स्वय समस्त से निरपेक्ष और वीतराग तथा आत्मलीन थे। जनसमाज के साथ उनके सपक विनियोग की कदाचित अतिम विराट घटना सन 1947 म मनाई जान वाली उनकी स्वण जयती थी।

यह स्वण जयती एक नाटकीय ढग मे उनके परिणति काल के शीष पर विद्य मान है। उस अवसर पर निराला की ख्याति समस्त हिंदीभाषी प्रदशा म बडी ऊचाई पर पहुची हुई थी और उनका देशव्यापी सम्मान करने की इच्छा हिंदी जगत म प्रबल थी। उस अवसर पर अनकानक साहित्यिका का सगम काशी कद्र म हुआ था। आचाय नरेंद्रदव न उसका उदघाटन किया था और उसकी विभिन्न गाष्ठिया म डा० सम्पूर्णानद, श्रीप्रकाश जसे राजनीतिक नेताओ के अतिरिक्त बडी सख्या म साहित्यिका का आगमन हुआ था। रात्रि म एक बडा कवि सम्मेलन हुआ था जिसम तत्कालान सभी वडे कविया न भाग लिया था। कोई भी कवि वहा अथलाभ के लिए उपस्थित नही हुआ था, जा कविसम्मेलना के लिए नई बात कही जा सकती है। निराला न भी अपनी कुछ कविताए सुनाई थी यद्यपि उ होने भूमिका दी थी कि अब उनका गया कविता सुनान योग्य नहा रहा और नए कवियो क गव क सामन वह अपनी पराजय स्वाकार करत हैं। उन स्वाभाविक बनलात हुए उ होन आगामी पीढिया क प्रति शुभाशीष प्रकट किया था। दिनकर और

बच्चन आए हुए कवियो मे मुख्य थे। दूसरी धाराओ के कवि, कवित्त और सवैया सुनाने वाले तक, सभी उपस्थित थे। कदाचित निराला के जीवन म कवितापाठ के बडे सम्मेलनो का यह अतिम अवसर था।

इसके बाद प्राय वह कवि सम्मेलनो म नही जाते थे। स्वागतसमिति की ओर से जो द्रव्य एकत्रित किया गया था, उसम मे उपहाराथ डेढ हजार रुपया उन्होंने सौ और दो सौ के हिसाब से नए कवियो को भेंट किया था। दूसरे दिन निराला का अभिनदन काशी विश्वविद्यालय म हुआ था जिसम नए कवियो को उपहार दिए गए थे। ऐसे कवियो मे शिवमगल सिंह सुमन सुमित्राकुमारी सिन्हा जानकीवल्लभ शास्त्री, शम्भूनाथसिंह जैसे नवोदित कवि सम्मिलित थे। इस अवसर पर निराला को एक अभिनदन ग्रथ भेंट करने की योजना थी, परतु तब तक मुद्रित न होने के कारण वह नही दिया जा सका। उसके स्थान पर बच्चनसिंह न 'क्रातिकारी कवि निराला नामक अपना प्रबध समर्पित किया था। महादवी, सुभद्राकुमारी चौहान जैसी कवयित्रिया, शिवपूजन सहाय रामविलास शमा जसे अनेकानेक साहित्यकार इस अवसर पर उपस्थित थ। हिंदी साहित्यकारो के अभिनदन म इस समारोह का एक विशिष्ट स्थान है। न केवल सख्या की दृष्टि से, वरन प्रबध व्यवस्था की दृष्टि से भी, यह एक स्मरणीय आयोजन था। दूसरे दिन रात्रि को प्रसाद का 'कामना' नाटक प्रदर्शित हुआ था जिसम काशी के कलाकारो के अतिरिक्त उस समय के विश्वविद्यालय के छात्रो ने सुदर अभिनय किया था।

निराला की मानसिक स्थिति उन दिनो यद्यपि अनियन्त्रित हो चली थी, तथापि उस समय तक वह पर्याप्त सचेत भी थे। अपने धन्यवाद भाषण म वह यद्यपि थोडा बहुत बहक गए थे, कुछ चीजें उन्ह स्मरण नही रह गई थी, तथापि वह फिर स्वस्थ भूमिका पर आ गए थे। इस समय निराला न विवेकानद जैसा साफा बाधा था और कौशेय वस्त्र धारण किए थे। इस जयती न उनकी मन स्थिति को कुछ समय के लिए प्रसन्न और स्वस्थ बना दिया किंतु सन्निपातिकान की यह स्थिति अधिक दिन नही ठहरी। निराला की मनोदशा क्रमश विक्षेप की ओर बढती चली गई। दो तीन वर्षों तक वे यत्र-तत्र अपन मित्रो के साथ रह। कुछ दिना तक उन्होंने महादेवी के आग्रह पर साहित्यकार ससद, प्रयाग म निवास किया। कुछ दिना तक दारागज म स्वतत्र मकान लेकर भी वह रह परतु अत म अपन चित्रकार मित्र कमलाशकर के घर पर आ गए और उनके आग्रह पर उन्ही क साथ रहन लगे। कमलाशकर और उनके बडे भाई उमाशकर निराला के प्रति गहरा सम्मानभाव रखन थे अतएव निराला को वहा रहन म अधिक सुविधा और प्रसन्नता हाती थी। पास ही प० श्रीनारायण चतुर्वेदी की कोठी थी जहा व चार पाच महीन रह भी थे किंतु वहा से हटकर उसी मुहल्ले मे उन्होंने कमलाशकर के यहा निवास किया।

जयती के समय तक निराला की अध्यात्मक कविताओं का दौर समाप्त हो रहा था। एक दो अधूरे उपन्यास 'चोटी की पकड़' और 'काले कारनामे' सन 1950 के आसपास उन्होंने लिखे किंतु उनकी मनःस्थिति ऐसी नहीं थी कि उन्हें उचित समापन दे पाते। फलत वे अधूरे ही रह गए।

इसके पश्चात निराला का काव्य अपने अंतिम मोड़ पर पहुंचता है और वे आध्यात्मिक भावना से अनुप्राणित होते हैं। इन दिनों वे पुन गीत लिखने लगे। इन गीतों में यद्यपि सामाजिक जीवन की विशृंखलता, अव्यवस्था और वैषम्य के संकेत भी मिलते हैं परन्तु निराला की केंद्रीय भावना किसी परम शक्ति का आश्रय चाहने की थी, और उसीके प्रति समर्पित होकर उन्होंने अपने उद्गार व्यक्त किए हैं। इन दिनों गीतों के बड़े भाग लिए जा सकते हैं। कुछ तो उनकी अपनी रुग्णता और वेदना से संबंधित गीत हैं कुछ सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की विकृतियों का उल्लेख करते हैं और कुछ विशुद्ध धार्मिक भावना से संबंधित हैं जिन्हें भक्तिकालीन कवियों के पदों की अनुवृत्ति कहा जा सकता है। इनके अति रिक्त प्रकृतिसंबंधी ऋतुगीतों की रचना भी उन्होंने की। इन ऋतुगीतों में निराला के आरंभिक ऋतुगीतों का सा शृंगारिक भाव नहीं है बल्कि शांतरस की भूमिका अपना ली गई है। इस अवधि में रचित कतिपय शृंगारी गीत भी हैं परंतु प्रकृति की रमणीयता में घुलमिलकर यह शृंगार अपने वासनात्मक संस्कार त्याग चुका है। निराला ने यद्यपि उद्दाम शृंगार की रचनाएं कभी नहीं कीं तथापि इन परवर्ती शृंगारिक गीतों में आकर तो उन्होंने न केवल शृंगार के बहिर्मुख पक्ष को, बल्कि उस सारी आलंकारिकता को छोड़ दिया जो उनकी आरंभिक कविताओं में प्रमुख रूप से विद्यमान थी। निराला के ये शृंगारिक गीत शांतरस के अत्यधिक समीप हैं।

इन गीतों में निराला की भाषा भी आरंभिक गीतों की भाषा से भिन्न हो गई है। वह सरल तथा मुहावरदार भाषा का प्रयोग करने लगे थे। संस्कृतगर्भित सामासिक भाषा का जो सौंदर्य उनके आरंभिक गीतों में है उसके स्थान पर एक नए सौंदर्य की सृष्टि निराला ने इन गीतों में की है। इससे प्रकट होता है कि भाषा के विभिन्न प्रकार के प्रयोगों में निराला कितने कुशल और सिद्धहस्त थे। यह बतलाना कठिन होगा कि निराला के आरंभिक और परवर्ती गीतों की भाषा में कौन अधिक प्रभावशालिनी है। हम इतना ही कह सकते हैं कि दोनों का सौंदर्य पृथक पृथक है दोनों ही अधिकारी कवि की लेखनी से निःसृत हैं।

इस अवधि में कतिपय प्रयोगात्मक गीत भी उन्होंने लिखे जिनमें उर्दू शैली की प्रमुखता है परंतु ये निराला के श्रेष्ठतम गीतों के समकक्ष नहीं पहुंचते। इस संपूर्ण अवधि में रचित लगभग तीन साढ़े तीन सौ गीतों में दस पांच ऐसे भी हैं

जिनमे अतिरजना का अटपटापन प्रकट होता है। इस प्रकार की अभिव्यक्ति निराला के मानसिक विक्षेप की साक्षी कही जा सकती है। किंतु इसे स्वीकार कर लेने पर उत्कष की ओर अग्रसर गीतराशि की साक्षी और भी महत्वपूण हो जाती है। वह प्रमाणित करती है कि निराला की सज्ञा विलीन नही हुई थी और काव्य सृजन के द्वारा व अपनी अतरग आध्यात्मिकता का आवाहन कर लेते थे और बहिरग असतुलन पास नही फटकता था। विक्षेप का क्षुब्ध घटाटोप भी प्रतिभा की ज्योतिशिखा को क्षीण या मलिन करन म समथ नही हो सका था।

विक्षेप की वह स्थिति जो लगभग सपूण है और जिसमे स्वस्थ चेतना के क्षण कदाचित केवल सजन के क्षण है विशेषज्ञो के अनुशीलन के योग्य स्थिति है। इस विक्षेप के निर्माण मे किन मूल तत्वो का योगदान है इसका निणय करना तो कठिन है, किंतु उसकी प्रक्रिया म सहयोगी होने वाली कतिपय भूमिकाओ का सकेत किया जा सकता है। व भूमिकाए इस सयमी किंतु परम सवदनशील कवि के व्यक्तिगत जीवन से लेकर युग क वषम्य तक विस्तत है। पहले हम इनमे से प्रथम को लेत हैं। निराला के जीवन म शाक के दो बडे अवसर आए थे — एक, पत्नी के निधन पर और द्वितीय पुत्री के निधन पर। य दोना ही घटनाए निराला को अत्यत क्षुब्ध, किसी अश तक हतचेत, करने म सहायक हुई थी। पहली घटना के समय निराला अपक्षाकृत युवक थे, शारीरिक मानसिक दृष्टि से सशक्त थे। इसीलिए पहली विपत्ति को व सह गए, यद्यपि उसी समय (सन 1922 23) से उनके काव्य में तटस्थता निर्लेपता व एक प्रकार के उच्च वैराग्य का आविर्भाव हुआ। कोई मनोवज्ञानिक यदि खोज करे तो कदाचित पत्नी के वियोग और निराला की शृगारिक रचना म एक तटस्थता निर्वैयक्तिकता के आविभाव मे सबध जोड सकेगा। सन 1935 म 'सरोजस्मति' लिखी गई थी। सरोज की मत्यु ने उनके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को खडित कर दिया था। हम कह सकते हैं कि उनकी विक्षेपावस्था का इसी घटना ने उभार दिया। कदाचित इसके बाद निराला न विशुद्ध शृगार की रचना नही की। वे व्यग्यमूलक कटाक्षपूण कविता करन लगे अथवा विनय प्राथनामूलक उदात्त गीत लिखने लगे, अथवा उदात्त सास्कृतिक भूमि की रचना करने लगे —जैसे 'विक्रम की द्विसहस्राब्दि । ये दो घटनाए निराला के व्यक्तित्व की निणायक घटनाए हैं।

सन 1938 म निराला न एक कविता लिखी थी जिसम उन्हाने अपनी बदली हुई भावचेतना का परिचय दिया था। उसमे उन्होन कहा है कि मरा मुक्त गगन चला गया, आकाशगामिनी कल्पनाए चली गइ, अब तो मैं समुद्र का अधिवासी बन गया हू। ठास जलाय नमक का जा रूप हा सकता है और निरभ्र आकाश का— दोना निराला के काव्य के दा प्रतिमान है। सन 1938 स पूव का काव्य उज्ज्वल,

निरभ्र आकाश के समान हैं और उस मुक्त मनोदशा के स्थान पर मन को बाधने वाली, अस्वादुकर जीवनस्थितियों का प्रतिनिधि परवर्ती काव्य का प्रतीक समुद्र हैं।

निराला की काव्यसृष्टि कला के प्रति उनके निःशेष समर्पण (टोटल डेडीकेशन) से निःसृत है। एक वृहत् परिवार के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हुए भी साहित्यरचना से पृथक् विशुद्ध जीवनयापन के लिए उन्होंने कभी कोई कार्य नहीं किया। वर्तमान युग के दायित्व को हृदयगम कर उसकी पूर्ति के लिए उन्होंने उन समस्त बंधनों से छुटकारा पा लिया था जो किसी भी प्रकार बाधक बन सकते थे। कोई कवि अपनी आत्मिक प्रेरणा के अनुरूप काव्यसृष्टि तब तक नहीं कर सकता, जब तक अपने व्यक्तित्व को उसने जनजीवन के प्रति समर्पित न कर दिया हो। इसके लिए ऐसा व्यक्ति आवश्यक है जो निर्भीक और निर्बंध हो, इसीलिए निराला को सामाजिक भूमि पर अनेक कठिनाइयाँ उठानी पड़ी हैं। उनके काव्य और उनके व्यक्तित्व का निरादर भी हुआ है। कोई व्यक्ति जानबूझ कर पागल नहीं होता। एक बहुत गहरे अर्थ में उनके परवर्ती व्यक्तित्व का अंतर्विरोध और विभक्त अस्तित्व युग में आदर्श और यथार्थ के वास्तविक अंतर्विरोध और विभाजन को प्रतिबिंबित करता है। यदि अपने इस अंतर विभाजन के समाधान का सूत्र वे निर्मित न कर सके तो युग में भी समाधानयुक्त अंतर्विरोध साथ साथ विद्यमान हैं। युग की विषमताओं को देखकर, अनैतिक तत्वों से खिन्न होकर, उन्होंने उनसे मुँह नहीं मोड़ा। सांसारिक जीवन में अभेद्य दीवारों से टकराकर उनकी मानसिक चेतना आहत हुई। वह निराला ही थे जो सुख का जीवन व्यतीत करने के लिए उत्पन्न नहीं हुए थे। आज के सामान्य कवियों से उनका व्यक्तित्व एकदम भिन्न था। उनका व्यक्तित्व दुहरा नहीं था। कहने और करने के दो स्तर नहीं थे। निराला की काव्यरचना उनके अदम्य साहस उनकी निर्बाध जीवन अभिलाषाओं से संबंधित है। समस्त युगीन दायित्वों को अपने अंदर समेटकर रख लेने की तैयारी उनके सिवा किसी अन्य आधुनिक कवि में नहीं पाई जाती। यह उनकी कविता के उत्कर्ष का अजस्र स्रोत है।

आज यूरोप में ऐसे कवि भी हुए हैं और हैं जो पूर्णतया समाजनिरपेक्ष, जीवन निरपेक्ष और व्यक्तिवादी या अस्तित्ववादी हैं। निराला को ऐसे संकीर्ण अनुभवों में जाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। उन्होंने मनुष्यता पर विश्वास नहीं खोया, कविता को वैयक्तिकता या खंडदर्शन की भूमिका पर लेकर जाकर आत्मविच्छेद नहीं किया। अपने आदर्श और विश्वास नहीं खोए। निराला के व्यक्तित्व में एक ऐसा तत्व है जो युग की समस्त जीवनभूमिका पर एक समन्वय स्थापित कर सका है। यह विरोध पर प्रतिभा की विजय है। पहले वह आशा के स्वर को लेकर चले हैं

ता पीछे आक्रोश के स्वर को, और अत म परमसत्ता के आवाहन के स्वर का। अपन व्यक्तित्व और वैयक्तिक साधना के बल पर उनके काव्य मे एक सामजस्य है। यह सामजस्य की भूमिका मानवतावादी और वेदाती स्तर पर है जीवन व प्रति आस्था पर निर्मित है। यही निराला का मूल्यवान और अप्रतिम प्रदेय है।

काव्यरूप

निराला मूलत प्रगीत कवि है, प्रगीत की भूमिका पर उन्होंने अनकानेक प्रयोग किए है। भारतीय काव्यपरपरा से अधिक आकृष्ट होने के कारण निराला न प्राचीन पदसाहित्य की भूमिका पर बहुसख्यक गीत लिखे हैं। इन समस्त गीता की सख्या प्राय 400 है, जिनम से कुछ अप्रकाशित भी है। इन गीता मे निराला ने क्रमागत गेय तत्व को प्रमुखता दी है, जिसके कारण उनके गीत राग और रागिनियो मे बधे हुए हैं अथवा बाधे जा सकते हैं। वतमान समय के अय गीत कारो की तुलना म निराला क गीत शास्त्रसम्मत और रसानुशायी है। आधुनिक गीतो मे प्राय वैयक्तिकता अधिक रहती है, निराला के गीत वस्तुमुखी और चित्रात्मक हैं। इस विशेपता के कारण हिंदीकाव्य म निराला के गीत एक अप्रतिम स्थान रखते हैं और उनकी समता की सतुलित गीतसप्टि आधुनिक हिंदी मे अधिक नही है। इन गीतो म शृगार, करुण और शात रसों की योजना है। यो तो विनयभावना के गीत निराला प्रारभ से ही लिखते रहे है पर अपन जीवन के अतिम दस वर्षों मे उन्होंन प्राय शात और करुण रस के गीतो का ही प्रणयन किया है। उनके आरभिक गीता म शृगार की प्रमुखता है जो दो भूमिकाओ पर निर्मित हुए हैं—पहली भूमिका प्राकृतिक सौदयनिरूपणो की है और दूसरी मान वीय सौंदयचित्रो की। प्रकृतिवणन के गीतो मे निराला की पद्धति प्राकृतिक दृश्यो को मानवीय रूपाकारो म प्रस्तुत करने की है जिसस शृगार रस की निष्पत्ति मे विशेप सहायता मिलती है। मानवीय सौंदय गीतो म प्राकृतिक उपमाना की बहुलता है। इस प्रकार य दोनो ही शृगारिक भूमिका के गीत प्रकृति की रमणी यता और मानवजीवन की सौंदयरेखाओ स अनुरजित हैं। निराला के गीता म लघुता के साथ साथ एकतानता या समग्रता का गुण विशेप मात्रा मे मिलता है। उनके चित्रो म पुनरावृत्तियो का अभाव है और गतिशील चित्रा का सुदर समा हार है। इस दृष्टि मे महादवी वर्मा और बच्चन के गीतो स उनकी पृथकता स्पष्ट दिखाई दती है। जब कि महादेवी और बच्चन के गीता म प्रत्यक परवर्ती बध पूव बध का अनुसरण करता दिखाई दता है निराला क बधा म इस प्रकार के अनुसरण या पुनरालेखन की प्रवत्ति नही है। उनक सार बध मिलकर चित्र को पूण बनाते हैं। इसी कारण निराला के गीता म गतिशीलता और समग्रता का तत्व भी देखा

जाता है।

गीतो के अतिरिक्त निराला की प्रगीतसष्टि को हम लघुप्रगीत और दीघ प्रगीता मे विभाजित कर सकते हैं। 'जूही की कली', 'विधवा' 'भिक्षुक' सध्या-सुदरी' जैसी रचनाए लघु प्रगीत की सीमा म आती है। इन लघु प्रगीता मे निराला का काव्यसौदय सर्वाधिक प्रस्फुटित हुआ है। इनमे दृश्याकन के साथ साथ भावालेखन का तत्व समाहित है। अतएव य प्रगीत विशेप प्रभावक्षम और सुसपन्न बन सके हैं।

निराला के दीघ प्रगीता म उतना सुदर सगठन नही है— उदाहरण के लिए यमुना के प्रति कविता म जो दीघ प्रगीत की श्रेणी म आती है, बिखराव काफी बडी मात्रा म है। इसी प्रकार उनके अन्य प्रगीत या तो वणनात्मक हो गए है जैसे 'मेवाग्रहण अथवा उनकी अन्विति बाधित हो गई है। परतु इसके अपवाद भी मिलते हैं जैसे सराज स्मति सहस्राब्दि' 'प्रेयसी' आदि। दीघ प्रगीत होती हुई ये भी अत्यत सुसमन्वित काव्यरचनाए हैं।

निराला के प्रगीता की तीसरी धारा हास्य व्यग्य विनोद और विद्रूप की है, जिनके अतगत परवर्ती काल की कविताए आती हैं। इनम 'कुकुरमुत्ता खजोहरा और स्फटिक शिला' आदि अधिक प्रसिद्ध है। अन्विति की दृष्टि से य प्रगीत काफी समृद्ध कह जा सकते हैं परतु कल्पनाछवियो के निर्माण म कुकुर मुत्ता' जितनी सफल रचना है उतनी कदाचित अन्य रचनाए नही। इस ततीय प्रकार की प्रगीत सृष्टि म निराला की पदावली भी बहुत बदल गई है और वे हास्य और व्यग्य की सष्टि के लिए दैनिक प्रयोग की भाषा या बोलचाल के अधिक समीप आ गए है। जिस प्रकार हल्के ये प्रगीत हैं उन्ही के अनुरूप इनकी भाषा है।

निराला ने अपने प्रगीता म उर्दू की गजलो और बह्रो की भी योजना की है। 'बेला' की समस्त रचनाए उदू की शली की हैं। इन प्रगीता म निराला न उदू का चमत्कार लाने की चेष्टा की है परतु उदू फारसी पर पूण अधिकार न होने के कारण उन्ह टकसाली उदू शैली की काव्यरचना करने म अधिक सफलता नही मिली। उदू शली के इन गजला के अतिरिक्त, निराला न 'नये पत्ते' शीषक सग्रह म मुक्तछद म भी उर्दू के प्रयोग किए हैं। ये रचनाए आकार मे छोटी हैं और अधिक सघटित बन सकी है। 'गरम पकौडी रानी और कानी 'महँगू महँगा रहा' आदि रचनाए इसी शली की उदाहरण हैं।

इस प्रगीतसष्टि के अतिरिक्त निराला न दो आख्यानक काव्य भी लिखे हैं। 'राम की शक्तिपूजा' और 'तुलसीदास' दोनो ही आख्यानक रचनाए हैं जो वीरगीतो की भूमिका पर लिखी गई हैं। यद्यपि इनम आख्यानक की सस्थिति है परतु

वीरगीत या बलेड काव्य का प्रवाह और समग्रता इनम पाई जाती है। सामान्यत वीरगीत लोकजीवन म प्रचलित गीतो के आधार पर बनते हैं, अतएव उनकी भाषा म गभीरता का पुट भी आया है, परतु निराला की आख्यानक रचनाए अतिशय सस्कृतनिष्ठ भाषा म प्रणीत है। इस कारण इनम उतनी सरसता नही आ सकी है जितना एक महाकाव्योचित औदात्य आया है।

इन आख्यानक सष्टियो के अतिरिक्त निराला न 'पचवटी प्रसग' नामक एक काव्यरूपक भी प्रस्तुत किया था जो उनकी प्रारभिक रचनाओ म से है। यह अपन ढग की अनुपम कृति है। इसमे प्रकृति के स्वच्छद परिवेश म राम-लक्ष्मण और सीता के चित्र वडी ही सुदर भूमिका पर उभारे गए हैं। स्वच्छन्तावाद का सच्चा साहित्यिक स्वरूप अपनी सपूण विशेषताओ के साथ पचवटी प्रसग' म देखा जा सकता है, यद्यपि इसका प्रवाह और प्रवेग इसे सतुलित गीतिनाटय का स्वरूप प्रदान करने म बाधक भी हुआ है। इनम नाटकीयता कम, प्रगीतत्व अधिक है।

अब हम उनके इन विभिन्न काव्यरूपा पर कुछ विस्तार से विचार करेंगे।

गीत

सबसे अधिक सख्या म निराला ने गीत लिखे है और उनम छन्दो, रागो, कल्पना चित्रो और रसो का बडा वविध्य है। इनके कुछ गीत तो विशुद्ध शृगारिक है 'परिमल और 'गीतिका म शृगार रस के गीत हैं—मानवीय और प्राकृतिक वणनो म प्रकृति की मानवानुरूपता की प्रवत्ति दिखाई देती है।

> किसलय वसना नव वय लतिका
> मिली मधुर प्रिय उर तरु-पतिका,
> मधुप वन्द व दी—
> पिक स्वर नभ सरसाया।

इसमे लता को नायिका और तरु को नायक कहा है। मानवीय शृगार के गीता म मिलन और विरह के चित्रो की प्रधानता है। उनम प्राकृतिक पृष्ठभूमि सवत्र अप नाई गई है। इसी से ये गीत स्वस्थ, सशक्त शृगार के प्रतिरूप बन सके हैं भावना गत दुबलता के नही। प्राचीन काल स शृगार के असख्य चित्र खीचे गए हैं परतु उनके निर्माणात्मक भावभेदा पर समीक्षको ने अधिक ध्यान नही दिया।

उदात्त शृगार अपनी लौकिक भूमिका पर सबसे अधिक कालिदास मे मिलता है। शृगार धार्मिक या रहस्यवादी भूमिका पर भी मिलता है जसे राधा कृष्ण का शृगार। इसका सवम सुदर स्वरूप सूरदास के पदा म प्रस्फुटित हुआ है। उनम शृगार आध्यात्मिक स्तर पर पहुच गया है। परमपुरुष कृष्ण और परमप्रकृति राधा का शृगार अशेष भावात्मक गहराइयो का स्पश करता है।

रीतिकालीन कवियो ने भी राधाकृष्ण के चित्र खाचे है, पर उनम वह मनोहरता नही। सूरदास की राधा और कृष्ण की कल्पना अतिशय प्रोज्ज्वल और मनोहारिणी है। कृष्ण के प्रति तथा राधा क प्रति सूर क आराध्यभाव का मनोवैज्ञानिक प्रभाव उनके काव्य म व्याप्त है। आराध्यभाव के कारण उनका शृगार तल्लीन ताकारी है। शृगार का वाह्यपक्ष, आगिक हावभावा का छोडकर वह राधाकृष्ण की अभिन्नताजन्य शृगारभावना को रूपायित करत है। दूसरी परिशोधक वस्तु उस शृगार की प्राकृतिक रूपछटा है। वृदावन की रमणीय पृष्ठभूमि पर उनका शृगार और भी निखर उठा है। गोपिया असख्य हैं, उनकी प्रतिनिधिरूप राधा हैं। इससे सूरदास के काव्य म एक रहस्यमूलकता भी आ गई है, विशेषकर रास लीला के प्रकरण म रहस्यात्मक वातावरण सुदर रूप म व्यक्त हुआ है। उस समय का शृगार सामान्य लौकिक शृगार से बहुत ऊचा है। वह शृगार के उदात्तीकरण या आध्यात्मीकरण का स्वरूप है। चौथा—सूरदास कृष्णचरित्र म जा निस्सगता ले आए हैं, अनन्य प्रेमी होत हुए भी वे जिस अनासक्त भाव स गोपिया का छाड कर मथुरा चले जाते हैं और सूरदास ने इस भास्वर सयोग वियाग की मनोदशाओ का जो व्यापक चित्रण किया है वह भी उनके शृगार का गभीर और परिशुद्ध बनाने म सहायक है। समस्त वियोग शृगार की ममस्पर्शिता मिलन की नैसर्गिक छवियो के साथ मिलकर एक हो जाती है और 'सूरसागर' का नाम साथक हो जाता है, जिसम गोपिया न मिलनोल्लास और वियागव्यथा का पूरा समुद्र ही निर्मित किया गया है। अत म उसम मुहर लगान का निर्मित 'भ्रमरगीत' की दाशनिकता की नियोजना की गई है। सगुण निगुण की भूमिका पर सगुण उपासना का पक्ष लेकर कृष्ण क दिव्य स्वरूप की वदना की गई है। इन कारणो से सूर का शृगार भक्तिभावापन्न माना जाता है जिमम लौकिक शृगार के अकुश निरस्त कर दिए गए है।

तीसर प्रकार का शृगार जयदव और विद्यापति जसे कविया का है, जिसमे राधा और कृष्ण के अनुरागवणना म सयोग पक्ष की वहुलता है और शृगार का विलाप की सीमा पर पहुचाया गया है। इस कारण कुछ समीक्षक इसे अपवाद योग्य और वजनीय मानने हैं। राधाकृष्ण का आधार लेन पर भी व इस अनिशयता को अक्षम्य कहते हैं। कुछ दूसरे समीक्षक इसे सच्ची भक्ति का उद्गार मानत हैं। साहित्यिक भावभूमिका पर जयदेव और विद्यापति का शृगार वासनात्मक स्तर से एकदम मुक्त नही है फिर भी इनका वणन रीतिकालीन शृगारिक वणना से भिन्न है। इनमे प्रेम के अत पक्ष, उसके आत्मिक अखड स्वरूप का चित्रण है जबकि रीतिकालीन कवियो की फुटकल रचनाओ म उस तरह के भाव नही हैं। भाषा के अप्रतिम माधुय और गेयता के गुणा से युक्त ये गीत अपनी

शृगार के समीप पहुच जात हैं। 'नूपुर के सुर मद रहे चरण जब न स्वच्छद रहे' मे नारी के प्रगल्भ सौंदय को दिखाया गया है परतु अधिकाश रूप से वणन प्रसन्न सुसयत दाशनिकता से ओतप्रोत है।

अय आधुनिक गीतकारो की तुलना म निराला के गीत किसी सीमा तक प्राचीन परपरा के अधिक समीप है, प्राचीन रस की भूमिका पर लिखे गए है और राग रागिनियो म बधे हुए हैं। निराला के गीत भी रसकेद्रित है और उनमे भी राग रागिनियो का सम्यक योग किया गया है। इस दृष्टि स यहा आशय यह है कि वैयक्तिक मनोदशाओ को प्रधानता न देकर तटस्थ भावात्मक चित्रण की नियोजना की गई है। यदि किसी कवि न आत्मपक्ष (वैयक्तिक पक्ष) का प्रमुखता दी है तो उसके गीतो म सावजनिक गेयता के गुण कम आएग। निराला क गीत सावजनिक उपयोग म आने लायक हैं क्योकि उहान अपन गीतो म तटस्थता और वस्तुमुखना का पूण उपयाग किया है। उनम कही भी वयक्तिक या अतमुख पक्ष का लगाव नही है। कदाचित यही कारण है कि उनके अनकानक गीत सावजनिक अवसरा पर राष्ट्रीय गीतो के रूप म गाए जात ह। हिंदी म अय किसी आधुनिक कवि के गीता को यह गौरव इतनी मात्रा मे प्राप्त नही हुआ। इसका कारण यह है कि प्राय अय सभी गीतकार वयक्तिक मनोभावो के प्रकाशन म अधिक सलग्न रहे हैं। व गीत रसात्मक न होकर अवसरविशष की मनाभावना के प्रकाशन के आधार हैं।

निराला के गीता की एक अय विशेषता उनकी कल्पना की भास्वरता है। व एसे चित्र देत है और ऐसे उपमानो से सज्जित करते है कि वे सहज ही सवजन ग्राह्य बन जाते है। उनकी कल्पना उनके भावों की अनुयायी है। इसी कारण उनके गीत अधिक सावजनिक भूमिका पर प्रतिष्ठित हैं।

निराला के गीता म शब्दो का लेशमात्र भी अपव्यय नही है। अभिव्यक्ति की दृष्टि से सभी सधे हुए हैं। इसी कारण उनके गीता क रसास्वाद मे सघनता रहती है और बिखराव का अश नही रहता। शब्दो की इतनी अधिक मितव्ययिता किसी अय गीतकार म दिखाई नही देती। गीतकला की इस विशेषता को निराला की अपनी साधना और अपना कौशल मानना पडेगा। अनक गीता म उहान छोटी छोटी सहज पदावली का भी प्रयोग किया है। यह सामाजिकता भी वास्तव मे उनकी शाब्दिक मितव्ययिता का ही एक परिणाम है। जिन कवियो न सामाजिक पदावली के इस पक्ष पर ध्यान नही दिया उनके गीता मे उतनी स्वाभाविकता नही आ सकी है। इस सबध म प्रसाद और महादवी से भी निराला के गीत अधिक समद्ध हैं। इन गीतो की भाषा खडी बोली का परिष्कृत स्वरूप है जिसम उ ही लोगो को दुरूहता दिखाई देती है जो अशिक्षित या अधशिक्षित हैं। निराला के

निराला के गीतों के प्रकार और भेद

शृंगारिक गीत निराला के गीत इतन वविध्यपूर्ण हैं कि उन सबका सबद्ध करना आसान नही है फिर भी रस की भूमिका पर हम उन्ह शृंगार, करुण और शातरस के गीत कह सकते हैं।

शृगारिक गीतों मे प्रकृति के शृगारी चित्र और मानवशृगार के चित्र समाहित किए गए हैं। इन शृगारिक गीता म सयोग और वियोग की अनेकानेक भावदशाए और रूपाकृतिया आई हैं। निराला म रूपचित्रण की भी प्रवत्ति पाई जाती है। रूपचित्रण से आशय नायिका के सौदय चित्रण स है। रीतिकालीन कविया की भाति रूपचित्रण मे निराला न न तो अतिशयोक्तिया का सहारा लिया है और न नारी को अलकारा स सज्जित और वाचिल बनाया है। अधिकाश छायावादी कवि वस्तुमुखी रूपचित्रण स दूर रहे है सौंदय की व्यजना मात्र करते रह है, परतु निराला के अनक गीता म नारी आकृति और रूप का स्पष्ट आलेखन है। जहा कहीं निराला न मिलनशृगार का वणन किया है वहा व स्वच्छदतावादी भूमि पर ही सस्थित रहे हैं। शारीरिक मिलन की अपेक्षा आत्मिक मिलन की रेखाए ही अधिकतर प्रस्तुत की गई है। प्रकृति क सौदयचित्रण म भी निराला उद्दीपन विभावा की पद्धति स बहुत दूर है। प्राकृतिक सौदय की उनकी छविया उत्तेजना और स्थूल आकषण की नही, उल्लास और आनद की अभिव्यजना करती हैं। इस प्रकार निराला के शृगारिक गीत उच्चतर भावसवदन के आधार हैं।

विनय और प्राथना के गीत

प्राकृतिक और मानवीय शृगार क अतिरिक्त निराला आरभ से ही विनय और प्राथना के गीत लिखत रह है। अपन आरभिक विनयगीता म निराला न जीवनसघर्षों म अडिग रहन और विजय प्राप्त करन की याचना की है। इसके साथ ही व्यक्ति की अहभावना, उसके मानसिक विकारा के निवारण की प्राथना भी की गई है। इन गीतों से निराला की आदर्शो मुख प्रवत्तिया का परिचय मिलता है, जो उन्ह विवकानद के विचारो और भारतीय अद्वत दशन की प्रेरणा स प्राप्त है। अपन परवर्ती विनयगीतो म निराला अधिक आत्मा मुख हो गए है। उनम सघष और विजयाकाक्षा के स्थान पर करुण स्वरा की प्रधानता हो गई है। वत-मान सासारिक जीवन की विषमताए और विकृतिया भी उनक परवर्ती काल के विनय के गीता के वण्य विषय है। जहा एक ओर इन गीता म शाति और रोग निवारण की आकाक्षाए व्यक्त की हैं, वही दूसरी ओर आधुनिक मानवसमाज

की स्वार्थपरता के प्रति ग्लानि के भी भाव अभिव्यक्त किए गए हैं। नि
विनयगीत अशत सूर और तुलसी के विनयगीतों के समकक्ष रखे ज
यद्यपि इनमे आत्मविगर्हणा के भाव नही है। उनकी साधना पारलौकि

ऋतुगीत

प्राकृतिक वर्णनो के अतिरिक्त निराला ने अनेक ऋतुगीत भी लिखे
कर वसत, वर्षा और शरदकालीन सौंदर्य के प्रति उनकी भा
उन्मुख है। उनके आरभिक ऋतुगीत उल्लासपूर्ण और स्वच्छ मान
की भूमिका पर लिखे गए हैं जबकि परवर्ती गीतो मे प्रकृति के वस्
का अधिक सीधा सादा और तथ्यपूर्ण वर्णन प्राप्त होता है। इन गीत
भाषा भी दो प्रकार की है। आरभिक गीत अधिक संस्कृतनिष्ठ हैं।
की सामासिक पदावली और पदगुफन का परिचय देते हैं। परवर्ती गी
सरल उक्ति कौशलप्रधान और भावव्यजक हो गई है। इस प्रकार
गत परिवर्तन निराला के आरभिक काव्य और उनके परवर्ती काव
विभाजक रखा है। इन्ही ऋतुगीतो मे निराला के होलीवर्णनसबधी
जिनमे लोकगीतो की प्रणाली अपनाई गई है। होलीसबधी गीतो मे
शृगारिक भावना अधिक मुखर है जो कि इस पर्व की प्रकृति के अनुरू

राष्ट्रीय गीत

कुछ थोडी सख्या मे निराला ने राष्ट्रीय गीतो का भी निर्माण किया
'भारति जय विजय करे' गीत अत्यधिक प्रचलित है और देश के भि
मे राष्ट्रीय समारोहो मे गाया जाता है। इस गीत को भारतीय राष्ट्री
ख्याति प्राप्त है। राष्ट्रगीतो के अनुरूप राष्ट्रीय उत्कर्ष और गौर
गया उसके गौरव और ऐश्वर्य का प्राचीन सास्कृतिक प्रतीकों के माध
[illegible] किया गया है। राष्ट्रगीतो के सभी मूलतत्व इन गीतो मे प्रा
[illegible] मे निराला की दृष्टि केवल राष्ट्रीय जीवन के उत्कर्ष
[illegible] उनमे राष्ट्र की अधोगति, उसकी भौतिक दरिद्रता, [illegible]
[illegible] है। इससे स्पष्ट होता है कि निराल
[illegible] भूमिका पर ही नही बल्कि सार्वत्रिक भूमिका पर
[illegible] राष्ट्रीय गीतो मे निराला की प्रणाली ही
[illegible] है। अन्य गीतकारो के गीतो मे सामूहि

माता ग्रामवासिनी' की तरह लंबी कविता राष्ट्रीय नहीं हो सकती। राष्ट्रगीतों के लिए आकार सीमित और प्रभाव एकतान होना चाहिए। जो गीत राष्ट्रीय अवसाद और दैन्य को लेकर चलते हैं, वे राष्ट्रगीत नहीं बन सकते। उसमें विजय उल्लास और सौंदर्य की झाकी आवश्यक है। एक अन्य विशेषता राष्ट्रीय प्रतीकों की योजना की है। भारत में गुलाब का पुष्प नहीं वरन कमल का पुष्प राष्ट्रीय प्रतीक माना जाता है। इसी प्रकार ओंकार शब्द समस्त देश में एक ही भावाभिप्राय का चिरपरिचित प्रतीक है। राष्ट्रगीत की ओर योजना सामूहिक गायन के योग्य ही नहीं सामूहिक संवेदना को सक्षम करने में सक्षम भी होनी चाहिए। भाषा, छंद ओजस्विता के परिचायक और संस्कृतनिष्ठ होने चाहिए। कवि के मानस में राष्ट्रमूर्ति के प्रति अटूट श्रद्धा का भाव आवश्यक है। निराला के राष्ट्रगीतों की संख्या कम है पर उनमें ये सब तत्व पाए जाते हैं। प्रसाद के 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' को कल्पनाधिक्य और चिरस्वीकृत राष्ट्रीय प्रतीकों की विरलता के कारण राष्ट्रगीत के पद का अधिकारी नहीं माना गया, यद्यपि यह एक सुंदर गीत है। पंत के 'भारत माता ग्रामवासिनी' में राष्ट्रीय दैन्य की व्यंजना है। यह समारोहों के योग्य गीत नहीं है।

प्रगतिशील या सामाजिक गीत

निराला के कुछ गीत वर्तमान सामाजिक विशृंखलता से संबंधित हैं और समस्त राष्ट्र के उत्थान और समता का संकेत और आग्रह करते हैं। मानव जहां बैल घोड़ा है, कैसा तन मन का जोड़ा है में मनुष्य संसाररूपी गाड़ी में बैल घोड़े के समान जुते हुए चित्रित हैं। बैल और घोड़ा का जोड़ा कैसा विलक्षण है। एक पीछे खींचेगा और दूसरा आगे दौड़ेगा। ऐसी अनेक सामाजिक विडंबनाओं, वैषम्य के रूपचित्र निराला के सामाजिक या प्रगतिशील गीतों में आए हैं।

प्रयोगात्मक गीत

शृंगारिक, आत्मनिवेदनात्मक, ऋतुसंबंधी और राष्ट्रीय सामाजिक गीतों के अतिरिक्त निराला के कुछ गीत उर्दू की गजलशैली का आधार लेकर बने हैं। इनमें निराला ने कई प्रकार के प्रयोग किए हैं। इन्हें प्रयोगवादी गीत कह सकते हैं। बिना परिणाम को आत्मसात किए बिना परंपरा का अनुसरण किए नई अपरिचित लीक पर अपरिचित उपमान उपमेयों को लेकर जो काव्यरचना की जाती है वह प्रयोगात्मक होती है। प्रयोग में भावात्मकता की न्यूनता और बाह्य विधान का अनगढ़पन भी होता है। कुछ प्रयोग सफल हो सकते हैं और कुछ असफल भी होते हैं। निराला के उर्दू शैली के गीतों के दो तीन प्रकार हैं। कुछ उर्दू-

फारसी शैली की गजला का उर्दू फारसी शब्दावली म निर्माण किया गया है। निराला का इन भाषाओ पर पूण अधिकार नही था इसलिए य गीत सुव्यवस्थित नही है। उर्दू कवियो से तुलना करने पर इनका कच्चापन दिखाई दता है। फिर भी एक बडे कवि की कलम कुछ न कुछ चमत्कार दिखाती ही है। यद्यपि उनम बडे कवि की कला है पर प्रौढता नही है। कुछ गजलें सस्कृत शब्दावली को उर्दू के छदा मे रखने की चेष्टा करती है। शब्दावली विशुद्ध हिंदी सस्कृत की है, छद केवल गजला के हैं। यह उनके उर्दू फारसी के गीतो की दूसरी सीमा है जो हिंदी सस्कृत शब्दावली की प्रमुखता लेकर रचे गए है। य गीत भी उर्दू के गजला का सपूण सौंदय नही दिखा सकत। कुछ मध्यवर्ती गीत हैं, जिनमे सामान्य उर्दू और सामान्य हिंदी के शब्दा का प्रयोग है। जस

हसी के तार के होन हैं य बहार के दिन
हृदय के हार के होत है य बहार के दिन

इस तरह के गीतो म वे अधिक सफल हुए है। इसस यह सूचित होता है कि भाषा की प्रवत्ति का ज्ञान और भाषा पर अधिकार सफल काव्यसृजन के आवश्यक उपादान है। जब तक भाषा की प्रवत्ति और परपरा का ज्ञान नही होता तब तक किसी भाषा म प्रयाग करना सशयास्पद ही होगा। सस्कृत पदावली को उर्दू छद साचे म रखन पर दाना की प्रवत्ति भिन्न होने के कारण सफलता आशिक ही होगी। निराला की गजलो म साधारण हिंदी उर्दू का मिश्रण सफल है, क्योकि भाषा पर अधिकार भाषा की प्रवत्ति की पहचान मुहावरो की पहचान आदि वहा सहज ही उपलब्ध है।

लघु प्रगीत दीघ प्रगीत

निराला के आरभिक काल की रचनाआ म लघु प्रगीता की एक अच्छी सख्या मिलती है। इस प्रकार की रचनाआ म निराला न भावतत्व और रूपतत्व भाव व्यजना और वस्तु अकन दोना का उत्तम सयोजन किया है। एक ओर कल्पना या रूपचित्र हैं और दूसरी आर उन कल्पनाचित्रो का भाव भी सुविन्यस्त है जस— सध्या सुदरी' आदि म। इनम कमी है न आधिक्य है। प्रगीत का जो उच्चतम प्रातिमानिक स्वरूप है उसकी पूरी सस्थिति इन प्रगीता म मिलती है।

यमुना के प्रति' शिवाजी का पत्र' 'स्मति, वासती' आदि उनक दीघ प्रगीत हैं। दीघ प्रगीता म प्राय वीरगीत का निर्माण होता है या शोकगीत का क्योकि वीरत्व और शाक के भाव दीघता को वहन कर सकत हैं आख्यानक के अशा को स्वीकार कर सकत हैं। इसीलिए दीघ प्रगीता म वीरगीत के लक्षण रहा करते हैं। विशुद्ध रूप स शृगारिक पदा म दीघ प्रगीतविन्यास तभी हो सकता है जब कवि

प्राकृतिक दृश्यों का वणन विस्तार से कर रहा हो। इसम एक उच्छ्वास मात्र नही रहता बल्कि बहिजगत का चित्र प्रस्तुत किया जाता है। दीघ प्रगीतो के लिए करुण, वीर आदि रस अधिक उपयोगी हैं। निराला का दीघ प्रगीत 'सरोजस्मति' उत्तम शोकगीत है। यमुना के प्रति' स्मतिमूलक भावगीत है, जो प्राचीन जीवन सादय को प्रकाशित करने वाली वृहत्तर रचना है। जब तक किसी मनोभावना के उदगार मात्र को छोडकर किसी वस्तु का सपक नही होता तब तक लबे प्रगीत सफल नही होते। विशुद्ध प्रगीत नवीन समीक्षका के मत म छोटे आकार का ही होता है। अतर के निगूढ सवेदन कवि के वडे प्रगीता मे समाहित नही हो पाते, वे वहिर्मुखी होन लगते ह, जिसस प्रगीत का सौदय और मार्मिकता घटने लगती है। आधुनिक प्रगीत की मूल प्रवत्ति यह है कि उसम एक क्षण विशेष की प्रतिक्रिया का एक स्वप्निल चित्र मात्र होता है। उन्ह लघु आकार मे ही सफलतापूवक व्यक्त किया जा सकता है। दीघ और लघु प्रगीत का अतर यही है। निराला का प्रसिद्ध प्रगीत 'बादल राग' खडश लिखा गया है। यद्यपि उनके लिखे छ 'बादल राग हैं, शीपक एक ही है, पर उनका निर्माण पथक पृथक हुआ है। ये एक लघु प्रगीत के रूप म आए है। जो 'बादल राग को दीघ प्रगीत समझते है व इसके साथ अयाय करते है और इसक वास्तविक प्रगीत सवदन से वचित रह जाते है। 'जागो फिर एक बार' के भा दो खड हैं। पहला शृगारिक भावना का है और दूसरा वीर-भावना का। दो भागो म विभक्त होन और दो समयो म लिखे जान के कारण ये दोना लघु प्रगीत हैं। सवाग्रहण' दीघ प्रगीत है। इसमे आशिक रूप से आख्यान भी आ गया है। दीघ प्रगीत का झुकाव आख्यान और वणनात्मकता की ओर हो जाता है जब कि लघु प्रगीत म आख्यान लेशमात्र भी नही रहता।

व्यग्य प्रगीत

'कुकुरमुत्ता', 'खजोहरा', 'स्फटिक शिला' को भी दीघ प्रगीत कह सकते हैं यद्यपि य व्यग्यात्मक हैं। व्यग्यात्मक प्रगीतो की अलग ही विधा है जो प्रगीत के सामान्य स्वरूप से भिन्न है। कुकुरमुत्ता' को रस की दृष्टि से हास्य रस की रचना कहा जाएगा। 'स्फटिक शिला म रौद्र की प्रधानता है तथा 'खजोहरा' व्यग्यमिश्रित हास्य रस की सृष्टि है। इस प्रकार के प्रगीत हिंदी म कम लिखे गए हैं, इसलिए इनका रूपविधान निधारित करना कुछ कठिन है। भारतीय काव्यशास्त्र के विचार स काव्य का पयवसान किसी न किसी रस म हुआ करता है इसलिए जब तक किसी रस की परिपुष्टि न हो तब तक किसी रचना का श्रेष्ठ काव्य कहना कठिन हो जाएगा। जिन रचनाओ म रस की स्थिति गौण होती है, उनको भारतीय विचारणा के अनुसार गुणीभूत व्यग्य काव्य कहते हैं। गुणीभूत काव्य का

अथ है ऐसी रचना जिसम रस का स्थिति गौण हो। इसे मध्यम काय भी कहते हैं। आधुनिक यथार्थवादी रचनाओ को, जिनम रस की अपेक्षा वस्तुचित्रण की या व्यग्यात्मकता की प्रधानता रहती है, गुणीभूत व्यग्य कहा जा सकता है। इनम किसी वस्तु का यथातथ्य चित्रण किया जाता है, सौंदय और कुरूपता के चित्र साथ साथ रहते है। कुल मिलाकर वस्तुसत्ता का बोध होता है। इनम रस की स्थिति गौण रहती है क्योकि रस के लिए किसी न किसी स्थायीभाव की आवश्यकता होती है। यदि स्थायीभाव का योग नही हुआ तो रचनाए रसात्मक नही होगी। व्यग्यात्मक का य म रस की स्थिति गौण होती है, क्योंकि उसम कोइ सक्रिय स्थायीभाव नही रहता। केवल रौद्र या भयानक चित्र ही रहते हैं। व्यग्यात्मक चित्र प्राय रौद्र रस के होते है, क्योकि उनम वत्तियो की अनुकूलता नही होती प्रतिकूलता होती है। कवि कुरूप, विडबनात्मक चित्र का चित्रित करता है, इसलिए सामा य रीति स उसम कवि की वृत्ति रमती नहीं। परतु जब इन कुरूप दृश्यचित्रणो म कवि की वत्ति भावात्मक गहराई म पहुच जाती है तब उनमे रसात्मकता आ जाती है। श्रृगार और करुण आदि अनुकूल रस कहे जा सकते हैं, क्योकि कवि की वत्ति उनम डूबी रहती है। कवि की वत्ति जिन वस्तुओ के प्रति विशेष वजना करती है ऐसी वृत्तियो का प्रकाशन रौद्र, भयानक या वीभत्स रस की सीमा म होता है। कभी कभी य रस यथाथ रूप से उन्मेषित नही हो पाते। पर कभी कभी जब कवि का सवदन तीक्ष्ण और गभीर होता है तब इन यथार्थो मुख चित्रणो म भी रस की सस्थिति हो जाती है। व्यग्यात्मक रचनाओ के सबध म कहा जा सकता है कि य प्रगीत की श्रेणी म आती ही नही, क्योकि प्रगीत म कवि के कोमल भावो का, जिनम उसकी अतरग वृत्ति रमती है, *निर्देश होता है। व्यग्यात्मक या हास्यमूलक का य म वर्णित वस्तु के प्रति कवि* की आत्मीयता नही होती विरोध का भाव होता है। परतु भारतीय चिंतना म रौद्र और भयानक भी रस माने गए है। युद्धवणना म वीर रस और रौद्र रस आते हैं। कवि यदि रौद्र भाव का अनुभव नही करता तो वह रसात्मक काव्य नही बना सकेगा। इसलिए यह मानना होगा कि जितने भी भाव हैं, वे प्रतिकूल सवेदन के हो या अनुकूल सवदन के कवि के मानस म अनुभूत होने चाहिए, तभी काव्य की रचना हो सकती है। जहा जहा कवि की अनुभूति रमी है और उसकी काव्यरचना म जहा जहा प्रेरणात्मक स्थायीभाव का योग है वहा वहा तो रसात्मक काव्य होगा परतु ऐसे अनेक प्रसग आते हैं जिनम कवि रमता नही है *तटस्थ होकर चित्रण करता है। एम चित्रण गुणीभूत व्यग्य की सीमा म आते हैं।* प्रगीतकाव्य भावो और रसो की प्रगाढता का का य है। प्रगीतरचना उसे भी कहा जा सकता है जिसमें कवि की अनुभूति किसी मार्मिक प्रसग, या मार्मिक

मानमप्रतिक्रिया को लेकर व्यक्त हुई हो। जिन प्रगीतो म इस प्रकार का भावोन्मेष नही होता उ ह प्रगीत की सना दना भी सभव नही है। भारतीय दृष्टि से बहुत से यथातथ्य चित्रण और व्यग्यात्मक उल्लेख रस की भूमि म नही आते, अतएव ऐसे वणनो को प्रगीत का य की सना नहीं दी जा सकती।

पश्चिमी विचारणा म प्रगीतो का वर्गीकरण करत हुए सामाजिक प्रगीत या व्यग्यात्मक प्रगीत का भेद किया गया है। इसकी चर्चा हडसन ने अपनी पुस्तक 'इट्रोडक्शन टु दि स्टडी आफ लिटरेचर' म की है। हडसन का उद्देश्य यह नहीं है कि प्रगीत के गुणो स रिक्त होने पर भी हम किसी रचना को किसी व्यग्यात्मक या सामाजिक कविता को, प्रगीत कहन लगें। उसका आशय यही है कि प्रगीत या अतरग अनुभूति का तत्व तो उस रचना म होना ही चाहिए। रचना म कवि की आत्मीयता या अतरग भावसवदन का जब तक अभाव रहता है, उसका अपना व्यक्तित्व मुखर नही होता, तब तक प्रगीत या व्यग्यात्मक प्रगीत का निर्माण नही हो सकता। विशुद्ध व्यग्य और व्यग्यात्मक प्रगीत कदाचित दो भिन्न वस्तुए हैं। विशुद्ध व्यग्य म तटस्थता रह सकती है या आक्रोश रह सकता है। कवि की अपनी मार्मिक सवदना नही भी रह सकती। जब कभी व्यग्य मे कवि की वह मार्मिक सवेदना मुखरित हो सकेगी तभी वह व्यग्यात्मक प्रगीत का निर्माण कर सकेगा। इस दृष्टि से देखने पर व्यग्यात्मक प्रगीत के मूल म क्रोध या करुणा के भाव का होना आवश्यक है। इनम भी करुणा या सहानुभूतिमूलक व्यग्य ही प्रगीतकाव्य के अधिक उपयुक्त है। किसी रचना को व्यग्यात्मक प्रगीत मानने के पहले यह भी देखना पडेगा कि कवि की करुणा का सचार, जगत की कुरूप वस्तुओ और व्यव हारो के प्रति उसकी मार्मिक सवेदना का भाव, उत्सर्जित हुआ है या नही। जब इस बात का प्रमाण मिल जाए कि वह रचना कवि के गहरे सवेदनो से निर्मित है तभी हम उसे प्रगीत कह सकेंगे, इसलिए कुकुरमुत्ता', 'खजोहरा' 'स्फटिक शिला' आदि रचनाए अपने आप ही भिन्न कोटि की हो जाती है। इनकी तुलना 'सरोज स्मृति', *शिवाजी का पत्र जस वास्तविक भावापन्न काव्य से नही की जा सकती।* इनकी अलग ही विधा होगी। जहा तक 'कुकुरमुत्ता का सबध है उसम व्यग्य और हास्य की प्रधानता है। इसलिए इसे हास्य रस क प्रगीत के रूप मे ले सकते है, लेकिन 'स्फटिक शिला' और 'खजोहरा' आदि रचनाए विशुद्ध व्यग्यात्मक हैं। व्यग्य का किसी रस विशष से सीधा सबध नही होता व्यग्य का कोई अपना स्थायीभाव नही होता। अतएव इन्ह किसी स्पष्ट प्रगीत श्रेणी म लेना सभव नही हैं। ये प्रगीत स भिन्न भावस्तर की कृतिया हैं। भारतीय विचारणा के अनु सार रसात्मक श्रेणी म न आन के कारण ये मध्यम कोटि की कविताए हैं। इन्ह प्रगीत कहना 'प्रगीत' के वास्तविक स्वरूप और अथ की उपेक्षा करना है।

उदू शली के प्रगीत

उदू काव्य की परपरा भि न प्रकार की है। उदू की गजलें मुक्तक काव्य की श्रेणी म आती है। उनकी दा ो पक्तियो म आशय पूरा हो जाता है। जब एक ही भाव को कई मुक्तका म बाधा जाता है और जब एक ही भाव का यहा आदि से अत तक विकास होता है तो उस नज्म (लिरिक) कहते हैं। चूकि निराला मूलत प्रगीत कवि रह है इसलिए उनकी उदू शली की गजला म एक समाहित भाव की योजना मिलती है। गजल की दो पक्तियो म चमत्कारपूणता की जो परपरा चल रही थी उसे निराला न कुछ अश तक बदलन का प्रयत्न किया है और गजलो को प्रगीतात्मक रूप दिया है। परतु गजला म पूणत प्रगीत का आना कठिन है क्योंकि उनम उक्तिचमत्कार की विशेषता होती है। उदू गजल जब तक इस चमत्कारपक्ष का प्रयोग नही करती तब तक पूण प्रभावोत्पादक नही होती। चम त्कार प्रगीत का विरोधी तत्व है। निराला के सामने समस्या थी कि गजला के चम त्कार को रक्षा करें या प्रगीत की प्रतिष्ठा करें। इन दानो आग्रहा को पूरा करन का प्रयत्न प्राय निराला की इस शली की रचनाओ म पाया जाता है। परतु परि णाम यह निकला है कि न तो गजल के परपरागत चमत्कारपक्ष और अति शयोक्तियो का निर्वाह किया जा सका न प्रगीत की समाहित भावयोजना ही पूरी तरह उन्भावित हो सकी। उदू शली के इन पद्यो को पूरे अर्थो म प्रगीत कहना सभव नही है। कुछ ही गजलो म निराला न सफल प्रगीतात्मकता की सृष्टि की है। सस्कार से निराला प्रगीत की ओर उन्मुख है, परतु उदू परपरा के आग्रह से भी व पराङ मुख नही है। अत दोनो म से किसी म सपूण सफलता बहुत कम अश म मिल पाई है। निराला के साथ इन उदू शैली के गजला के प्रणयन म एक और कठिनाई थी। हिंदी म उदू शैली की इस काव्यशली की कोई स्पष्ट परपरा नही है। यद्यपि हिंदी क अनेक कविया न उदू छदा का प्रयोग किया है, परतु गजल की प्रामाणिक पतिष्ठा हिंदी म हो सकी है यह एक विवाद का विषय है। इतना तो स्पष्ट है कि उदू के इतिहासलेखकों ने हिन्दी कविया के इन गजल सबधी प्रयोगो पर न ता काई विचार किया है और न स्थान दिया है। दूसरी बात यह है कि इस प्रकार के प्रयोग किसी एक धारा म न होकर अनक धाराओ म विभक्त दिखाई पडन हैं। पहली धारा तो केवल उदू छन्दा को स्वीकार कर सरल हिन्दी भाषा म उनका प्रयोग करन की है। इस शली म हिंदी के कविया को अपेक्षाकृत अधिक सफलता मिली है। भारतेंदु हरिश्चद्र बालमुकुन्द गुप्त, लाला भगवानदीन और हरिऔध इस शली के मुख्य प्रयोक्ता हैं।

दसरी धारा है उदू छन्दा या हिंदी के सस्कृतगर्भित साचे म ढालन की।

निराला ने अपन अधिकाश प्रयोग इस शैली के गीता म किए है। इस प्रणाली से उर्दू गजलो का सौदय सस्कृत शब्दावली के माध्यम मे निखर नही सका है।

तीसरी धारा वह है जिसमे उर्दू छदो को हिंदी और उर्दू की मिश्रित शब्दावली द्वारा अभिव्यक्त किया गया है। ऐसी रचनाओ म यदि सरल हिंदी और सरल उर्दू की एकात्मकता हाती तो ये गजलें अधिक सफल हो सकती थी, परतु निराला ने इस प्रकार का प्रयत्न करते हुए भी क्लिष्ट सस्कृत शब्दो का मोह एकदम छोड नही दिया है। सरल उर्दू शब्दा का बाहुल्य हाते हुए भी दो चार कठिन सस्कृत शब्द आ ही जाते हैं।

चौथी धारा वह है जिसम उर्दू के छद उर्दू माध्यम से निर्मित किए गए है। परतु ऐसा करते हुए उर्दू भाषा पर जो अबाध अधिकार चाहिए इसका दावा निराला नही कर सकते। फलत उनके उर्दू भाषाप्रयोगो म वह टकसालीपन जो उर्दू कवियो की सामान्य विशेषता है, नही है। उर्दू के मुहावरे और उक्ति चमत्कार, उनकी अतिशयोक्तिया और ऊहात्मक प्रेमव्यजना हिंदी म ज्यो के त्यो नही आ सकन। फिर भी इस चौथी धारा की गजलो मे निराला उर्दू का अपना चमत्कार ला सके हैं।

कुल मिलाकर दखन मे ऐसा प्रतीत होता है कि उर्दू शली के ये प्रगीत निराला की प्रयागात्मक अभिरुचि के ही परिचायक है। इनम निराला की अपनी भावधारा और अपना शब्दविन्यास अधिकारपूवक प्रयुक्त नही हुआ है। उन्हे हम निराला का प्रयोग इसलिए कहते हैं कि इनमे प्रयोग से आगे बढ कर सफल निमाण की योग्यता आशिक रूप से ही आ पाई है। यहा प्रयोग शब्द का अथ है अपरिनिष्ठित रचना अर्थात ऐसी रचना जिसमे लेखक का व्यक्तित्व और काव्यकौशल स्वीकृत सीमा तक न पहुचा हो।

इनकी अपेक्षा मुक्तछद मे निराला ने उर्दू शैली का जो प्रयोग किया है उर्दू शब्दावली की जो अधिकता बरती है वह अपेक्षाकृत अधिक सफल है। मुक्तछद मे तुका की आवश्यकता नही पडती। उसम सामान्य प्रवाह से काम चल जाता है और विशेषकर व्यग्यात्मक रचनाओ के लिए इस भाषा का हल्कापन भी बाधक नही होता। इन कारणो से निराला की मुक्तछद की उर्दू शली की कविताए अधिक सुदर बन पडी है। उदाहरणाथ 'मास्को डायलाग्स 'महँगू महँगा रहा, 'रानी और कानी, 'गम पकौडी' जैसी रचनाओ का नामोल्लेख किया जा सकता है। जब तक उर्दू भाषा पर सपूण अधिकार न हो तब तक परिनिष्ठित उर्दू काव्ययोजना कठिन होती है। निराला ने छदो के बधन को छोडकर उर्दू शली की मुक्तक रचनाओ मे अधिक सफलता प्राप्त की है।

उर्दू शैली के प्रगीत

उर्दू काव्य की परपरा भिन्न प्रकार की है। उर्दू की गजलें मुक्तक काव्य की श्रेणी म आती ह। उनकी दो दो पक्तियो म आशय पूरा हो जाता है। जब एक ही भाव को कई मुक्तको म बाधा जाता है और जब एक ही भाव का यहा आदि से अत तक विकास होता है तो उस नज्म (लिरिक) कहते हैं। चूकि निराला मूलत प्रगीत कवि रहे है इसलिए उनकी उर्दू शैली की गजलो म एक समाहित भाव की योजना मिलती है। गजल की दो पक्तियो म चमत्कारपूर्णता की जो परपरा चल रही थी उसे निराला न कुछ अश तक बदलने का प्रयत्न किया है और गजलो को प्रगीतात्मक रूप दिया है। परतु गजलो म पूर्णत प्रगीत का आना कठिन है क्योकि उनम उक्तिचमत्कार की विशेषता होती है। उर्दू गजल जब तक इस चमत्कारपक्ष का प्रयोग नही करती तब तक पूर्ण प्रभावोत्पादक नही होती। चमत्कार प्रगीत का विरोधी तत्व है। निराला के सामने समस्या थी कि गजलो के चमत्कार की रक्षा करे या प्रगीत की प्रतिष्ठा करे। इन दोनो आग्रहो को पूरा करने का प्रयत्न प्राय निराला की इस शैली की रचनाओ म पाया जाता है। परतु परिणाम यह निकला है कि न तो गजल के परपरागत चमत्कारपक्ष और अतिशयोक्तियो का निर्वाह किया जा सका न प्रगीत की समाहित भावयोजना ही पूरी तरह उद्भावित हो सकी। उर्दू शैली के इन पद्यो को पूरे अर्थों म प्रगीत कहना सभव नही है। कुछ ही गजलो म निराला न सफल प्रगीतात्मकता की सृष्टि की है। सस्कार से निराला प्रगीत की ओर उन्मुख है परतु उर्दू परपरा के आग्रह से भी व पराङ्मुख नहीं हैं। अत दोनो म स किसी मे सपूर्ण सफलता बहुत कम अश म मिल पाई है। निराला के साथ इन उर्दू शैली के गजलो के प्रणयन मे एक और कठिनाई थी। हिंदी म उर्दू शैली की इस काव्यशैली की कोई स्पष्ट परपरा नहीं है। यद्यपि हिंदी के अनक कवियो न उर्दू छदो का प्रयोग किया है परतु गजल की प्रामाणिक प्रतिष्ठा हिंदी म हो सकी है यह एक विवाद का विषय है। इतना तो स्पष्ट है कि उर्दू के इतिहासलेखको न हिंदी कवियो के इन गजल सबधी प्रयोगों पर न तो कोई विचार किया है और न स्थान दिया है। दूसरी बात यह है कि इस प्रकार के प्रयोग किसी एक धारा म न होकर अनक धाराओ म विभक्त दिखाई पडते हैं। पहली धारा तो केवल उर्दू छदो को स्वीकार कर सरल हिंदी भाषा म उनका प्रयोग करने की है। इस शैली म हिंदी के कवियो को अपेक्षाकृत अधिक सफलता मिली है। भारतेंदु हरिश्चद्र बालमुकुन्द गुप्त, लाला भगवानदीन और हरिऔध इस शैली क मुख्य प्रयोक्ता हैं।

दूसरी धारा है उर्दू छदो को हिंदी के सस्कृतगर्भित साचे म ढालने की।

निराला ने अपने अधिकांश प्रयोग इस शैली के गीतों में किए हैं। इस प्रणाली से उर्दू गजलों का सौंदर्य संस्कृत शब्दावली के माध्यम से निखर नहीं सका है।

तीसरी धारा वह है जिसमें उर्दू छंदों को हिंदी और उर्दू की मिश्रित शब्दावली द्वारा अभिव्यक्त किया गया है। ऐसी रचनाओं में यदि सरल हिंदी और सरल उर्दू की एकात्मकता होती तो ये गजलें अधिक सफल हो सकती थीं, परंतु निराला ने इस प्रकार का प्रयत्न करते हुए भी क्लिष्ट संस्कृत शब्दों का मोह एकदम छोड़ नहीं दिया है। सरल उर्दू शब्दों का बाहुल्य होते हुए भी दो चार कठिन संस्कृत शब्द आ ही जाते हैं।

चौथी धारा वह है जिसमें उर्दू के छंद उर्दू माध्यम से निर्मित किए गए हैं। परंतु ऐसा करते हुए उर्दू भाषा पर जो अबाध अधिकार चाहिए इसका दावा निराला नहीं कर सकते। फलत उनके उर्दू भाषाप्रयोगों में वह टकसालीपन जो उर्दू कवियों की सामान्य विशेषता है, नहीं है। उर्दू के मुहावरे और उक्ति चमत्कार उनकी अतिशयोक्तियां और ऊहात्मक प्रेमव्यंजना हिंदी में ज्यों के त्यों नहीं आ सकते। फिर भी इस चौथी धारा की गजलों में निराला उर्दू का अपना चमत्कार ला सके हैं।

कुल मिलाकर देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि उर्दू शैली के ये प्रगीत निराला की प्रयोगात्मक अभिरुचि के ही परिचायक हैं। इनमें निराला की अपनी भावधारा और अपना शब्दविन्यास अधिकारपूर्वक प्रयुक्त नहीं हुआ है। उन्हें हम निराला का प्रयोग इसलिए कहते हैं कि इनमें प्रयोग से आगे बढ़कर सफल निर्माण की योग्यता आंशिक रूप से ही आ पाई है। यहां प्रयोग शब्द का अर्थ है अपरिनिष्ठित रचना अर्थात ऐसी रचना जिसमें लेखक का व्यक्तित्व और काव्यकौशल स्वीकृत सीमा तक न पहुंचा हो।

इनकी अपेक्षा मुक्तछंद में निराला ने उर्दू शैली का जो प्रयोग किया है उर्दू शब्दावली की जो अधिकता बरती है वह अपेक्षाकृत अधिक सफल है। मुक्तछंद में तुकों की आवश्यकता नहीं पड़ती। उसमें सामान्य प्रवाह से काम चल जाता है और विशेषकर व्यंग्यात्मक रचनाओं के लिए इस भाषा का हल्कापन भी बाधक नहीं होता। इन कारणों से निराला की मुक्तछंद की उर्दू शैली की कविताएं अधिक सुंदर बन पड़ी हैं। उदाहरणार्थ 'मास्को डायलाग्स' 'महँगू महँगा रहा', 'रानी और कानी', 'गर्म पकौड़ी' जैसी रचनाओं का नामोल्लेख किया जा सकता है। जब तक उर्दू भाषा पर संपूर्ण अधिकार न हो तब तक परिनिष्ठित उर्दू काव्ययोजना कठिन होती है। निराला ने छंदों के बंधन को छोड़कर उर्दू शैली की मुक्तक रचनाओं में अधिक सफलता प्राप्त की है।

आख्यानक प्रगीत

विदेशी साहित्य म और भारतीय साहित्य म भी लोककाव्या की एक ऐसी परपरा मिलती है जिसम किसी वीर आख्यानक म किसी पौराणिक, एतिहासिक या अनतिहासिक वीरचरित्र का उदघाटन बडी मार्मिकता से किया गया है। ऐसी रचनाओ को अगरजी म बैलड पाइटी और हिंदी म वीरगीत कहा जाता है। इसी परपरा म निराला न 'राम की शक्तिपूजा और तुलसीदास' जैसे आख्यानक प्रगीता का निर्माण किया है। सामान्यत लोकभाषा म सबधित होने के कारण और लोकजीवन की भूमिका पर लिखे जान क कारण इन वीरगीता का स्वरूप पूणत साहित्यिक नही होता, बल्कि उनम लोकछद और लोकभाषा का पुट अधिकाशत रहा करता है परतु निराला क दानो ही आख्यानक प्रगीत विशेषत साहित्यिक हैं इनम लोककाव्य की इतनी ही भूमिका दिखाइ दती है कि यत्र तत्र अलौकिक घटनाओ के वणन मिलते हैं। उदाहरण के लिए 'राम की शक्तिपूजा' मे हनुमान का ब्रह्माड का नाश करन का प्रयास इसी प्रकार की अलौकिक कल्पना है जो लोककाव्य म प्रचुरता म मिलती है। इसी प्रकार लौकिक विश्वासो का एक स्वरूप आगे एक सौ आठ पुष्प चढान के प्रसग म मिल जाता है। यह लोकप्रचलित पौराणिक गाथाओ से लिया गया है। परतु इन थाडे से प्रसगा को छोडकर निराला का शेष वणन और विशेषकर उनकी भाषायोजना एकदम साहित्यिक है। इन दोना प्रगीता म लोककाव्य का माधुय कम मिलता है बल्कि अतिशय सस्कृत निष्ठता के कारण ये कविताए अशत क्लिष्ट और दुरूह भी हो गई हैं। इनम लोकमाधुय के स्थान पर एक महाकाव्योचित औदात्य की योजना की गइ है जिसके कारण इन रचनाओ म लोकगीता की या वीरगीतो की वास्तविक भावनाधारा और लोकग्राहिता नही आ पाई है। हम कह सकत है कि निराला ने ये दोना ही आख्यानक गीत लोकप्रचलित किवदतियो के आधार पर अथवा पौराणिक भूमिका पर भले ही लिए गए हो परतु इनका निर्माण लोकभूमिका को छोडकर महाकाव्योचित स्तर पर पहुच गया है। इन प्रगीता के विषय म हिंदी समीक्षको म अनेक विरोधी मत पाए जाते हैं। कुछ सस्कृतनिष्ठ आलोचका की सम्मति म कवि की ये दोना रचनाए काव्य के क्षेत्र म उनकी सर्वोत्तम उपलब्धि मानी जाती हैं। कुछ अन्य आलोचका के मत म ये अत्यत दुगम और दुरूह होन के कारण कृत्रिम रचना की श्रेणी म स्वीकार की जाती हैं। वास्तविकता कदाचित इन दोना के मध्य म है। स्वाभाविकता की कमी के कारण ये कृतिया निराला की सर्वोत्तम काव्यरचना नही कही जा सकेंगी और साथ ही केवल भाषा की क्लिष्टता के आधार पर इनको कृत्रिम कहना भी सवथा सगत नही होगा। ये निराला के स्वतत्र और बहुमूल्य

व्यक्त करत हैं। लवे उदगारा के लिए गद्य उतना समीचीन माध्यम नही होता, इसलिए उन्हे पद्यात्मक रूप दिया जाता है। निराला को मुक्तछद की प्रेरणा रास की इस लोकनाट्य की प्रणाली स प्राप्त हुई थी। 'पचवटी प्रसग' म मुक्तछद का प्रयोग किया गया है, जो पद्य हाता हुआ भी गद्य के अधिक समीप है और सवादो के अधिक उपयुक्त है।

लोकनाट्य की पद्धति पर पचवटी प्रसग' का प्रणयन होने के कारण इसका रगमच सीधा सादा और अनलकृत है। कहा जा सकता है कि यह प्राकृतिक रग मच ही है। यहा किसी प्रकार की औपचारिकता का प्रयाग नही किया गया। इसके अतिरिक्त इसकी नाट्यशैली भी लोकनाटय की शैली है। इस शैली के सवाद भावात्मक होते है। न इनम किसी प्रकार का चरित्रचित्रण होता है और न सूक्ष्म मानसिक विवृतिया होती है। इनका उद्दश्य दशकसमाज म रस की प्रतीति कराना हुआ करता है। निराला के 'पचवटी प्रसग' म लोकनाट्य की यही पद्धति अपनाइ गई है, यद्यपि इसमे एक साहित्यिक उत्कप भी लाया गया है। निराला जैस कवि के लिए यह स्वाभाविक ही था कि वह लोकनाटय की शैली को साहित्यिक स्तर पर पहुचाने का प्रयत्न करत। उनकी भाषा और उनका राम सीता और लक्ष्मण की चरित्ररेखाओ को उदभासित करने का प्रयत्न उनके इस नाटक को साहित्यिक स्तर पर लाने मे समथ हुआ है। निराला का यह गीतिनाटय नाटक के स्तर पर होने की अपक्षा गीत अधिक है। इसम स्वच्छन्दतावादी भावनाधारा निर्व्याज रूप से अपनी समस्त विशेषताओ के साथ प्रस्तुत हुई है। प्रकृति का परिवश है, वीरा का परिवार है। राक्षसो और आततायिया का अपर पक्ष है जिसम वीर चरित्रा की निर्भीकता, साहस और शक्तिमत्ता प्रचुरता से प्रकाशित हो सकी है। ये सबलक्षण वीरगीतो के हैं और यद्यपि निराला न उसे नाटयसवादा के माध्यम से प्रकट किया है, परतु उनकी मूल प्रकृति स्वच्छदतावादी वीरगीत की है।

इस प्रकार यद्यपि निराला की समस्त काव्यरचनाए प्रगीतशैली मे निर्मित है परतु इस सीमा म उनके प्रयोगा की सख्या अपरिमित है। निराला की स्वच्छन्द प्रतिभा छोटी सीमाओ म रह भी नही सकती थी। प्रगीत के सभी रूपो का प्रयोग और प्रकाशन निराला की कविताओ म उपलब्ध होता है। अनेकानक प्रगीतरूपा का ही नही, विभिन्न भाषाशलिया का और असख्य छन्योजनाओ का प्रयोग निराला की वहत्तर काव्यप्रतिभा का परिचायक है। रवीद्रनाथ से जब एक बार पूछा गया था कि उन्हान काई महाकाव्य क्यो नही लिखा, किसी वहत आख्यान का निर्माण क्यो नही किया तब उन्हाने उत्तर दिया था कि—मेरा महाकाव्य ही असख्य टुकडो म बट कर मेरी गीतसष्टि म आकार ग्रहण कर सका है। कुछ युग ही ऐस होते हैं जिनम महान कविया की प्रतिभा गीतमुखी हा जाती है। विशेषकर

नवीन संस्कृति की किशोरावस्था में महाकाव्य की रचना नहीं हो पाती। उसके बदले लघु प्रगीतों में उस युग की समग्र चेतना प्रतिबिम्बित होती है। निराला का युग भी भारतीय संस्कृति के नवनिर्माण की किशोरावस्था का युग था, जिसमें बहिर्मुखता और समन्वित आदर्शों और जीवनलक्ष्यों के स्थान पर नए स्वप्नों और नई आशाओं को स्वरूप दिया गया है। इस स्वभाव के अनुरूप ही निराला के काव्यरूप निर्मित हुए हैं।

सामान्यत काव्यभाषा के सबध मे इन स्थापनाओ के पश्चात व्यावहारिक रूप मे भाषा के प्रयोगो की समस्या विचारणीय हो जाती है। पाश्चात्य विचारको न आरभिक काव्यभाषा मे 'स्वरित अभिव्यक्ति' की विशेषता देखी है। सामान्य बोलचाल या विचार विनियम के लिए इस प्रकार की 'स्वरित अभिव्यक्ति की आवश्यकता नही होती, परतु अपन आरभकाल म सामूहिक श्रोतावृ द को प्रभा वित करने के लिए कविता इस साधन का प्रयोग करती रही है। कदाचित इसी मूलभूत आवश्यकता का विकास हम काव्यभाषा सबधी उन प्राचीन आदर्शों मे मिलता है जिन्हे हम 'क्लासिकल' या 'शास्त्रीय आदश कहते हैं। भाषा की असा मान्यता का आग्रह 'क्लासिकल' विचारको की एक स्थाई स्थापना रही है। लोक भाषा और काव्यभाषा का सामान्य स्वरा और स्वरित स्वरा का यह विभेद उन्हें मान्य रहा है। इस प्रसग म यह भी ध्यान देन योग्य है कि भाषासबधी असा मान्यता के साथ विषय और चरित्र की असामान्यता का आग्रह भी प्राचीन समीक्षको के द्वारा किया गया है। अरस्तू ने महाकाव्य के लिए भाषा और विषय के औदात्य का निर्देश किया है। स्वच्छदता के सस्पश से युक्त कहे जान वाले लोजाइनस ने भी अपन साहित्यिक सिद्धाता का निरूपण करते हुए इसी असा मान्यता की चर्चा की है। भाषा और विषय की समानधर्मिता के अनुरूप असा-मान्यता और लोकभाषा से भिन्नता तथा परिष्कृति और औदात्य को प्राचीन काव्यभाषा का आदर्श कहा जा सकता है।

भारतीय चिंतना म स्वभावाक्ति और वक्रोक्ति के द्वारा काव्यभाषा के स्वरूप को उद्घाटित करन का प्रयत्न किया जाता है। स्वभावाक्ति सामान्य कथन है वक्रोक्ति चमत्कारपूण कथन है। काव्य के लिए वक्रोक्ति की आवश्यकता बताई गई है। आग चलकर भारतीय समीक्षा म रीतिवादी सप्रदाय का आविर्भाव हुआ जो काव्यभाषा की भूमिका पर ही खडा हुआ है। उसके अनुसार भाषा-विन्यास मुख्यत गौडी, पाचाली और वैदर्भी रीतियो के अनुरूप हो सकता है। गौडी रीति समासबहुला होती है। उसम ओज गुण की प्रधानता रहा करती है। वह अपक्षाकृत क्लिष्ट भी होती है। पाचाली रीति म सामासिकता की अपेक्षा नही होती। उसका मुख्य गुण माधुय हुआ करता है। वैदर्भी रीति प्रसाद गुण पर आश्रित रहती है। उसम सामासिक प्रयोग हो सकते हैं पर बहुत कम। सरल भाषा का आग्रह वैदर्भी रीति की एक प्रमुख निष्पत्ति है। इस प्रकार काव्यभाषा म असामान्यता, चमत्कार और परिष्कृति की विशेषता पश्चिमी और पूर्वी विचारको न समान रूप से निरूपित की है। गुणो और रसो के अनुरूप भाषाप्रयोग की विविधता का विवेचन भारतीय साहित्यचिंतन की विशेषता है।

काव्यभाषा का स्वरूप इतिहास के माध्यम से भी परखा जा सकता है।

सामान्यत काव्यभाषा के सबध मे इन स्थापनाओ के पश्चात व्यावहारिक रूप मे भाषा के प्रयोगो की समस्या विचारणीय हो जाती है। पाश्चात्य विचारको ने आरभिक काव्यभाषा म 'स्वरित अभिव्यक्ति' की विशेषता देखी है। सामान्य बोलचाल या विचार विनिमय के लिए इस प्रकार की 'स्वरित अभिव्यक्ति की आवश्यकता नही होती, परतु अपने आरभकाल म सामूहिक श्रोतावृद का प्रभावित करने के लिए कविता इस साधन का प्रयोग करती रही है। कदाचित इसी मूलभूत आवश्यकता का विकास हम काव्यभाषा सबधी उन प्राचीन आदर्शो मे मिलता है जिन्ह हम क्लासिकल' या 'शास्त्रीय' आदश कहत हैं। भाषा की असामान्यता का आग्रह 'क्लासिकल विचारको की एक स्थाई स्थापना रही है। लोकभाषा और काव्यभाषा का सामान्य स्वरो और स्वरित स्वरो का यह विभेद उन्हें मान्य रहा है। इस प्रसग म यह भी ध्यान देन योग्य है कि भाषासबधी असामान्यता के साथ विषय और चरित्र की असामान्यता का आग्रह भी प्राचीन समीक्षा के द्वारा *किया गया है। अरस्तू न महाकाव्य क लिए भाषा और विषय* के औदात्य का निर्देश किया है। स्वच्छदता के सस्पश स युक्त कहे जान वाले लोजाइनस न भी अपन साहित्यिक सिद्धाता का निरूपण करते हुए इसी असामान्यता की चर्चा की है। भाषा और विषय की समानर्धामता के अनुरूप असामान्यता और लोकभाषा स भिन्नता तथा परिष्कृति और औदात्य को प्राचीन काव्यभाषा का आदश कहा जा सकता है।

भारतीय चितना म स्वभावाक्ति और वक्रोक्ति के द्वारा काव्यभाषा के स्वरूप *को उद्घाटित करन का प्रयत्न किया जाता है। स्वभावाक्ति सामान्य* कथन है, वक्रोक्ति चमत्कारपूण कथन है। काव्य के लिए वक्रोक्ति की आवश्यकता बताई गई है। आग चलकर भारतीय समीक्षा म रीतिवादी सप्रदाय का आविर्भाव हुआ जो काव्यभाषा की भूमिका पर ही खडा हुआ है। उसके अनुसार भाषा विन्यास मुख्यत गौडी पाचाली और वैदर्भी रीतियो क अनुरूप हो सकता है। गौडी रीति समासबहुला होती है। उसम ओज गुण की प्रधानता रहा करती है। वह अपेक्षाकृत क्लिष्ट भी होती है। पाचाली रीति म सामासिकता की अपेक्षा नही होती। उसका मुख्य गुण माधुर्य हुआ करता है। वैदर्भी रीति प्रसाद गुण पर आश्रित रहती है। उसम सामासिक प्रयोग हो सकत हैं पर बहुत कम। सरल भाषा का आग्रह वैदर्भी रीति की एक प्रमुख निष्पत्ति है। इस प्रकार काव्यभाषा म असामान्यता चमत्कार और परिष्कृति की विशेषता पश्चिमी और पूर्वी विचारको ने समान रूप से निरूपित की है। गुणो और रसो के अनुरूप भाषाप्रयोग की विविधता का विवेचन भारतीय साहित्यचिंतन की विशेषता है।

काव्यभाषा का स्वरूप इतिहास के माध्यम स भी परखा जा सकता है।

उससे ज्ञात होता है कि समय और परिस्थिति के भेद से तद्विषयक विचारो म कुछ भिन्नता भी रही है। प्राचीन ग्रीस के महाकाव्या और दुखात नाटको मे काव्यभापा अपने उदात्त स्वरूप म उपस्थित हुई है। यद्यपि वह जनभापा से उच्चतर स्तर की रही है तथापि अनावश्यक कृत्रिमता का उसम कोई योग नही। *यह स्मरणीय है कि उस समय साहित्य के श्रोता और पाठक सामान्य श्रेणी से* उच्चतर श्रेणी के हुआ करते हैं और तदनुरूप शिष्ट समाज की भाषा काव्यभापा का प्रतिमान बनी हुई थी। परतु कालातर म यह स्थिति बदलने लगी। भापा अधिकाधिक कृत्रिम और 'काव्यात्मक' बनती गई। लोकभापा का माधुय उसम से बहिष्कृत होता गया और धीरे धीरे वह केवल पडितो की जानकारी की वस्तु बन गई। उसकी प्राजलता और परिष्कृति यद्यपि अक्षुण्ण रही, तथापि उसका प्रचार और प्रसार एक छोटे वग मे सीमित हो गया। होरेस और सिसरो तक आते आते यूरोपीय काव्यभापा अपनी स्वाभाविकता का परित्याग कर चुकी थी।

काव्यभापा जब जब पडितो के साहचय म आकर कृत्रिम होने लगती है तब तब उसकी प्रतिक्रियास्वरूप लोकभापा मे काव्य की नई प्रेरणाए उत्पन्न होती हैं और जनजीवन के ससपश से युक्त काव्य की सष्टि होती है। किंतु क्रमश अधिकाधिक परिष्कृत होती हुई यह भापा भी परिनिष्ठित हो जाती है। यह द्वद्वात्मक प्रक्रिया निरतर चलती रहती है जिसमे एक छोर पर क्लिष्ट और कृत्रिम किंतु सुपरिष्कृत और सुविन्यस्त भापारूप विद्यमान रहता है तथा दूसरे छोर पर लोकभापा सस्थित रहती है। श्रेष्ठ कवि इस द्वद्व को पहचानते हैं और अपने काव्य म दोनो प्रकार की भापाओ के अतिवाद से विनिमुक्त एक शालीन भापा का विन्यास करते है। यह भापा उक्त दोनो प्रकार की भापाओ के श्रेष्ठ गुणो के सचय से अपनी शालीनता का निर्माण करती है।

यूरोप मे होमर और वर्जिल जसे महाकवियो के काव्य म जहा एक ओर लोकभापा का माधुय सकलित है वहा दूसरी ओर सुसस्कृत भापा का ओज और *औदात्य भी प्रदर्शित है। भापा के प्रयोग की यह स्थिति क्रमश एकागी होती* गई। होरेस जैसे कवियो ने जब उसके कृत्रिम स्वरूपो को अधिकता से अपनाया तब प्रतिक्रियास्वरूप यूरोपीय देशो में लोकभापा के माध्यम मे काव्यरचना प्रारभ हुई, जो सपूर्ण मध्ययुग में किसी न किसी प्रकार प्रयोग में आती रही। तेरहवी शताब्दी में दाते नाम के महाकवि ने काव्यभापा के दोनो स्वरूपो का फिर से समन्वय किया तथा अपने डिवाइन कामेडी नामक महाकाव्य में श्रेष्ठ काव्य के लिए सदव अभीप्सित इस समन्वित भापास्वरूप की प्रतिष्ठा की। सोलहवी शती में शेक्सपियर ने ऐसी ही परिष्कृत लोकभापा को अपने नाटकों में प्रयुक्त करके श्रेष्ठतम उपलब्धिया प्राप्त की। इसके ही समानातर भारतीय

भूमिका है। कालिदास की भाषा वैदर्भी रीति का उदाहरण मानी गई है। उसमें न अतिरिक्त क्लिष्टता है और न अतिरिक्त सरलता। वह एक प्रकार से लोक भाषा के स्तर से ऊची उठी हुई शिष्टजनोचित भाषा कही जा सकती है। परवर्ती कविता में उसके परिनिष्ठित हो जाने पर प्राकृत फिर अपभ्रंश और अतत आधुनिक लोकभाषाओ के क्रमिक उदय से हम सुपरिचित है।

काव्यभाषा सबधी एक नया आदश यूरोप म अठारहवी शताब्दी के अत तथा उन्नीसवी शताब्दी के आरभ म प्रवर्तित किया गया। इग्लैंड म इस प्रवतन के जनक वडसवथ थे। बोलचाल की गद्यभाषा के अत्यधिक समीप रहना उनका काव्यभाषा सबधी आदश था। नए स्वच्छदतावादी काव्यादोलन मे जिस प्रकार विशिष्ट और उच्च नतिक भूमिका के चरित्रा को छोडकर सामा य मानवभूमि के चरित्रा और प्रसगा को ग्रहण करने की प्रवत्ति थी, उसी के अनुरूप भाषा के सामान्यीकरण का आयोजन भी था। परतु जानबूझकर किसी एक प्रकार की भाषा को आदश मान लेन स कविता की सीमाए सकीण हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप काव्य की भावभूमि भी एक छोटे घेरे म समाहित हो जाती है। स्वय वडसवथ के मित्र और सहयोगी कालरिज भाषा के इस आदश से सहमत नही थे और परवर्ती विचारका ने भी उसका प्रतिवाद करते हुए स्वय वडसवथ की अनक कविताओ म उसका दुष्परिणाम लक्षित किया है। अनेक बार कविगण अपने काव्य म विषय के अनुरूप अनेक भाषास्तरा और भाषारूपो का प्रयोग करते हैं। उनके द्वारा किसी एक ही धरातल को वण्य विषय के रूप मे अपनाया जाना जिस प्रकार श्रेष्ठ काव्य के लिए एक बाधक उपकरण है, उसी प्रकार काव्यभाषा का एक विशेष साचे म बदी कर दना भी एक सदिग्ध और घातक प्रयास है।

काव्यभाषा के सबध मे भारतीय और विदेशी परपराओ का जो विवरण प्राप्त होता है उससे कतिपय निष्कष निकाले जा सकते है। काव्यभाषा सामान्य भाषा से अधिक व्यापक, व्यजक, चमत्कारपूण और परिष्कृत होती है। वह सदा विषय और भाव का अनुसरण करती है। विषय यदि महान और असाधारण है तो उसे व्यक्त करने के लिए भाषा भी वसी ही उदात्त और असाधारण होगी। भारतीय काव्यशास्त्र म प्रसाद माधुय और ओज गुणो पर आश्रित विभिन्न रीतिया का विधान भी विषयानुरूप भाषा के चयन का एक अग है। काव्यभाषा मे अतिशय कृत्रिमता और अतिशय सामान्यता दोना ही वर्जित हैं। कृत्रिमता उसे जीवनसपक से वचित करती है तथा ग्राम्य और अशालीन प्रयोग उसे दूषित करते हैं। हास्य रस की रचनाओ म इस प्रकार के प्रयोग कभी कभी उपयोगी हो सकते हैं परतु यह नियम नही, अपवाद है। लोकभाषा के स्वरूप को अक्षुण्ण रखने

का आग्रह जनसमाज से बहुत दूर गई हुई काव्यभाषा के विरुद्ध केवल एक युगीन आवश्यकता हो सकता है काव्यभाषा का सवकालीन आदश नही। दूसरी ओर बोलचाल की भाषा के बहुत से शब्दो को काव्यभाषा से निकाल दन का उपक्रम भी एक अतिवाद है। कीटस को अगरेजी भाषा भोडी और उच्चारण की दृष्टि से अकाव्योचित प्रतीत हुई थी। फलत उसन उसे प्राचीन ग्रीक उच्चारणो के अनुरूप बनान का उपक्रम किया। ऐसा करन से यद्यपि कीटस की काव्यभाषा म माधुय का गुण आया परतु उसकी शब्दावली लोकजीवन और अगरजी भाषा की सामान्य प्रकृति स दूर चली गई। माधुय से भिन्न गुण उसम समाहित नही हो सके।

काव्यभाषा क सबध म एक आधुनिक धारणा यह है कि प्रत्यक शब्द अपने आप मे एक भावनात्मक इकाई का प्रतिनिधि होता है अतएव काव्यसष्टि मे केवल समीचीन शब्दो का आकलन ही एकमात्र उद्देश्य रहा करता है। शब्दो के इन निगूढ अर्थो को पहचानना कवि का प्रथम काय होता है। काव्यभाषा सबधी यह आदश भी एक प्रकार की अतमु खी काव्यरचना के लिए ठीक हो सकता है, परतु व्यापक रूप मे लोकमानस से सबधित अनुभूतियो के लिए एकमात्र इसी आदश को सामने रखकर काम नही किया जा सकता।

शेक्सपियर की काव्यभाषा को देखन से यह स्पष्ट होता है कि काव्यभाषा की कोई पूवनिर्धारित सीमाए नही हो सकती। कवि की महान प्रतिभा अज्ञात स्थलो के शब्दो का चयन कर लती और उस अपन विषयानुरूप प्रयुक्त करती है। शेक्सपियर की भाषा मे सरल से सरल और कठिन से कठिन भावो की अभिव्यक्ति की क्षमता है। उसका शब्दभडार अगरेजी के समस्त कवियो से विशालतर है। उसकी काव्यभाषा का एकमात्र लक्षण विषयानुरूपता है और चूकि उसके विषय अत्यत विस्तत और ववविध्यपूण हैं इसलिए उसकी काव्यभाषा म भी विस्तार और विविधता के गुण मिलत हैं। कठिनाई यह है कि इस विस्तार और ववविध्य का प्रयोग साधारण कवि अधिकारपूवक नही कर सकता। इसलिए जब हम शेक्सपियर की काव्यभाषा का आदश रूप म स्वीकार करत है तब ध्यान रखना होता है कि सामान्य कवियो को उनकी जसी प्रतिभा प्राप्त नही होती और शक्सपियर की भाषा को आदश मानकर भी व उसके सफल प्रयोक्ता नही हो सकत।

काव्यभाषा सबधी इन भूमिकाओ के पश्चात निराला की काव्यभाषा का परिचय देने के लिए यह आवश्यक है कि उनके समय की काव्यप्रवत्तियो तथा उनके मध्य में उनकी विशिष्ट स्थिति पर ध्यान दिया जाए। निराला ऐसे समय म हिन्दी काव्यरचना म प्रवृत्त हुए थे जब खडी बोली का काव्य अपन शशव की स्थिति म था। हिन्दी काव्य की भावात्मक क्षमताए तब तक विकसित नही हुई

थी। इस प्रकार छायावादी काव्य और विशषत निराला का काय भाषा की दृष्टि से नए प्रयोगा नए विस्तार और नवोन्मेष का प्रतिनिधि है। इसके पश्चात भाषा के नए आदश बनते हैं और काव्य मे उसके प्रयाग की सूक्ष्म पद्धतिया अपनाई जाती है। किसी विकसित साहित्य और किसी अधविकसित साहित्य म काव्य तथा उसकी भाषा के प्रतिमान एक स नही हाते। अत निराला की काव्यभाषा को विकास की इसी भूमिका पर परखना पडेगा।

छायावाद युग के अ य प्रमुख कविया की तुलना म निराला की काव्यभाषा अनक भिन्नताए प्रकट करती है। उनके प्रयागो की विविधता की आर ध्यान आकृष्ट किया गया है। किसी अ य छायावादी कवि म प्रयोगो का ऐसा बाहुल्य नही। प्रसाद की काव्यभाषा का आदश कालिदास म है। सस्कृत काव्य म कालिदास की सी प्रसन्न, परिष्कृत और सुगम काव्यभाषा का कोई दूसरा उदाहरण नही मिलता। कदाचित इसका कारण यह भी हो कि कालिदास नाटककार भी थे और नाटका म सामासिक भाषा का प्रयोग नही किया जा सकता। सरलता उसका आवश्यक गुण है अन्यथा दशको पर उसका उचित प्रभाव नही पड सकेगा। ऐसी भाषा का अनुसरण कम ही लोगा न किया। सरल और समासरहित भाषा को काव्योपयुक्त बनाना भाषासबधी सबस बडी साधना है। कृत्रिमता के सारे अवराधा को दूर कर बोलचाल के समीप की भाषा को कलात्मक सौंदय प्रदान करना श्रेष्ठ प्रतिभा और अध्यवसाय द्वारा ही सभव है। कालिदास को जो सस्कृत काव्य म शीपस्थान प्राप्त है उसके मूल म उनकी भाषासबधी साधना निहित है। सरल और अकृत्रिम भाषा का परिधान पहन कर कविता कामिनी अधिक सुदर और सामाजिक बन जाती है। दूसरे प्रकार की भाषाए उस तडक-भडक वाले परिधान की सी हैं जिसके प्रति तात्कालिक आकषण तो हो सकता है, किंतु स्थाई अनुराग नही। कृत्रिम भाषा दूरी की अनुभूति उत्पन्न करती है, आत्मीयता की नही। कालिदास के का य म भाषा का जो सहज सौंदय है वह सस्कृत के अन्य अलकारजीवी कविया मे नही। प्रसादगुणसपन्न भाषा की इन विशेषताआ को समझ लेन पर ही हम भाषासबधी कोई प्रामाणिक प्रतिमान निर्धारित कर सकते हैं।

जब प्रसाद की काव्यभाषा को हम कालिदास की काव्यभाषा के आदर्श की प्रतिच्छवि मानते हैं तब दूसरे शब्दो म हम उसके प्रसादगुण की ही प्रशसा करते हैं। ओजस्विता का गुण उसम नही है परतु भाषा का सरल और स्वाभाविक रूप म रखने की प्रवत्ति उसम अवश्य दिखाई देती है। कालिदास की ही भाति उनकी भाषा म भी समरसता का तत्त्व पाया जाता है अर्थात अतिवादो की स्थिति उसमे नही है। न तो इतनी सरलता है कि ठेठ बोलचाल की रूपता आ जाए और न

इतना अलकरण है कि काव्य से पहले भाषा से ही उलझना पडे। प्रसाद की काव्य भाषा मे वर्जित शब्दो की उतनी बडी सख्या नही मिलती जितनी पत की भाषा मे परिलक्षित होती है। दूसरे शब्दो म प्रसाद सूक्ष्म और 'रोमैंटिक' काव्यभाषा का वह प्रतिमान लेकर नही चले जिसे पत ने अपनाया है। प्रसाद की शब्दराशि हिंदी की समग्र शब्दावली पर आधृत है। पत की काव्यभाषा म परिष्कार अधिक है, परतु शब्दराशि सीमित हो गई है।

सुमित्रानदन पत की भाषा म तालव्य वर्णों की विशेषता बताई गई है। निराला न एक स्थान पर लिखा है कि पत प, ण, ल और व के प्रयोक्ता ह। दत्य वर्णों का वह प्राय परित्याग करत ह। परिणामत उनके काव्य म चमत्कार और सौष्ठव तो आया है पर उसकी लोकसामान्यता बाधित हुई है। हिंदी की प्रवृत्ति दत्य वर्णों की ओर अधिक है अत पत की काव्यभाषा म हिंदी की सामान्य प्रवृत्ति का अस्वीकार भी पाया जाता है। पत ने अपनी काव्यभाषा का निर्माण पश्चिमी प्रतिमानो को सामने रखकर किया है। उनके आदश शैली और कीट्स है जब कि प्रसाद क आदश भवभूति और कालिदास है। हिंदी मे 'है' और 'था' जैसी बहुत अधिक प्रयुक्त क्रियाओ को पत न अपने काव्य से बाहर ही रखा है। उनकी सौंदयवादी दृष्टि के कारण भाषा एक नए साचे मे तो ढली है परतु विविध भावस्थितियो के प्रकाशन के लिए उसकी क्षमता कम हो गई है। पत की काव्यभाषा अत्यधिक सवारी गई है जिसकी तुलना म अन्य छायावादी कवियो की काव्यभाषा अधिक लोकसामान्य है।

महादेवी वर्मा ने काव्यभाषा के क्षेत्र म कोई सचेत प्रयास कदाचित कम ही किया है। वह अपनी रहस्यवादी कविताओ म कल्पनाचित्रो को सज्जित करने म जितनी तल्लीन रहती हैं उतना ध्यान वह भाषा के निर्माण और नियमन का नही रखती। फिर भी उनकी काव्यभाषा की प्रवृत्ति प्रसाद की ही भाति है। उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दभडार अवश्य बहुत सीमित है। फिर भी प्रचलित शब्दो को ग्रहण करने तथा उन्ह अलकृत रूप मे न रखकर सहज रूप म रखन की प्रवृत्ति उनम दिखाई देती है। प्रसाद की काव्यभाषा म देशज शब्दो का प्रयोग अपेक्षाकृत कम है। महादेवी के काव्य म उनकी सापेक्षिक अधिकता है।

तुलना की इसी पद्धति के क्रम म कहा जा सकता है कि निराला की काव्य भाषा के स्रोत एक ओर सस्कृत कवि जयदेव हैं तो दूसरी ओर तुलसी और तीसरी ओर रवीद्र। कालिदास और जयदेव की काव्यभाषा म अतर स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। वदर्भी रीति का अनुसरण करनेवाली कालिदास की काव्यभाषा यदि प्रसादगुणसपन्न है तो सामासिकता का आग्रह रखनेवाले जयदेव की भाषा सगीतात्मकता और माधुर्यगुण म भी सपन्न है। निराला न अपने शृ गारिक काव्य म जयदेव की सामासिक पदावली का एक सीमा तक ही अनुसरण किया है।

यह शैली वास्तव म उनके वीर रस के काव्य मे और विशेषकर 'राम की शक्ति पूजा' और 'तुलसीदास' मे मुखर है। जयदेव के काव्य मे एक और विशेषता पाई जाती है, जिसका उल्लेख निराला न किया है। वह विशेषता है दत्य प्रयोगो का आधिक्य। कालिदास के तालव्य प्रयोगा की तुलना म जयदेव के दत्य वर्णों के प्रयोग सहज दखे जा सकने हैं। निराला की पदावली भी दत्य प्रयोगो से सपन्न है। जहा वह सस्कृत शब्दो का प्रयोग करने हैं वहा भी वह तालव्य प्रयोगा के हिमायती नही हैं। निराला का कहना है कि भारतीय कविता का भावपक्ष दत्य प्रयोगो की प्रकृति का ही अनुसरण करता है। यह बात सच भी है कि विशेषकर हिंदी के समस्त भक्तकवियो ने जिस व्रजभाषा और अवधी भाषा का आधार लिया है वे सबकी सब दत्य प्रधान हैं। व्रजभाषा और अवधी म तालव्य श को दत्य स म और मूध य ण का दत्य न म परिणत किया जाता है। व को ब और ल को प्राय र कर दिया जाता है। यह इन भाषाओ की आधारभूत प्रकृति है और निराला ने इस प्रवृत्ति को ही अपनी काव्यभाषा म स्थान दिया है।

निराला पर दूसरा प्रभाव तुलसीदास का है। तुलसीदास की काव्यभाषा जहा एक ओर विनयपत्रिका' म समासबहुल और गुफित है वही दूसरी ओर 'रामचरितमानस मे वह सरल और प्रासादिक भी है। उनकी भाषा का ततीय पक्ष सस्कृत की शालीन पदावली का हिंदी के देशज प्रयोगो के साथ मिश्रण करने म दिखाई देता है। कहा जा सकता है कि तुलसीदास की काव्यभाषा का केंद्रीय रूप वही है जिसम सस्कृत भाषा क सौष्ठव के साथ हिंदी की अपनी पदावली मणि काचन योग से जुडी हुई है। जायसी और कबीर की भाषा अधिक ठेठ है। तुलसी की भाषा अधिक सास्कृतिक है। निराला ने भी अपनी मुख्य काव्यरचना का आधार सस्कृत और हिंदी के सयत मिश्रण म प्रदर्शित किया है।

रवीद्रनाथ की काव्यभाषा की विशेषताए भी निराला के द्वारा अपनाई गई हैं। विशेषत भाषा के द्वारा व्यजित होने वाली सागीतिक ध्वनिया और अनुप्रास तथा यमक को उन्होने रवीद्र की काव्यभाषा के आधार पर सज्जित किया है। मुक्तछद मे दूर दूर तक चलनेवाली तुकातहीन रचना मे अनक ऐसे स्थल आए हैं जहा एक प्रकार का तुकात मिलता है। 'जागो फिर एक बार' का तुक 'जहा आसन है सहस्रार' ही दिखाई देता है। इस प्रकार के प्रयोग रवीद्र की कविता मे विशेष रूप से देखे जाते हैं। रवींद्रनाथ की काव्यभाषा का एक गुण यह भी है कि जनभाषा के ठेठ प्रयोग भी उसमे बहुसख्या म मिलत है। रवीद्र की लोकप्रियता का यह एक मुख्य कारण है कि उन्हान जनभाषा का सपक नहीं छाडा। निराला के काव्य म सस्कृतगर्भित पदावली के बीच बीच म एस ठेठ शब्द आ जात हैं जो लोकजीवन म व्याप्त हैं और लोकभाषा क अग बन चुके हैं। इसी प्रसग म

निराला के काव्य म पाए जानवाले उद्रू और फारसी शब्दा का भी दखा जा सकता है। 'उन्माद यद्यपि एक सस्कृतबहुल कविता है तथापि अनायास उर्दू क शब्द उसम सम्मिलित हो गए है।

भाषा के सबध म पवित्रतावादी दृष्टि निराला की नही है। वह किसी शब्द का काव्य के लिए परित्यजनीय नही मानत। वह परस्पर विरोधी प्रतीत होनवाल शब्दो को विवकपूवक अपनी कविता म रखत चल जात है। पत का माग इसस पूणतया भिन्न है। उनकी कविता म इस प्रकार का मिश्रण नही दखा जाता। कदाचित यही कारण है कि जो वैविध्य और विस्तार, जो अनकरूपता और अनकरसता निराला के काव्य म है वह पत के काव्य म नहीं आ पाई है। पत की कविता अधिक परिष्कृत और कलाप्राण हो सकती है, परतु निराला की कविता म जीवन क जिन बहुरूपी पक्षो का समाहार हो सका है उसी के अनुरूप उनकी काव्यभाषा भी बहुरगिणी है।

भाषा की समस्या सभी श्रेष्ठ कवियो के समक्ष विद्यमान रहती है। कवि की प्रतिभा केवल नई वस्तु का उन्मेष नही करती, वह उसके अनुरूप भाषा का नया विन्यास भी करती है। नवीन विन्यास के द्वारा प्रत्यक श्रेष्ठ कवि भाषा पर अपनी मुद्रा अकित करता है। छायावादयुग म नई चेतनाभूमियो की अभिव्यक्ति के लिए कवियो न जिस गभीरता से भाषानिर्माण के प्रयत्न किए उसका सकेत हम कर चुके है। उनके मध्य म भाषाप्रयोगो के वविध्य की दृष्टि से निराला सबसे आगे हैं। हिंदी भाषा की प्रकृति से उन्ह कितना गहरा परिचय था, यह हिंदी की विशिष्ट ध्वनियो के सबध म उनके वक्तव्यो से भलीभाति स्पष्ट हो जाता है। उनके समान सगीतप्राण कवि के लिए यह बहुत स्वाभाविक भी है। काव्यभाषा के अन्य पक्षो के सबध म भी उनका काय ऐसा ही विशिष्ट और महत्वपूण है।

निराला के पूव की काव्यभाषा यथेष्ट मात्रा म शक्तिशालिनी नहीं थी। भाषा मे लाक्षणिक प्रयोगो तथा नादक्षमता का पर्याप्त विकास नही हुआ था। ऐसे युगो मे जो प्रतिभाशाली कवि भाषा के अथविकास का ध्यान रखन हैं व सदा विवक से काम नही लेते। उनका लक्ष्यविस्तार होता है। विस्तार, एकत्रीकरण और व्यवस्था काव्यभाषा की तीन प्रक्रियाए हैं। निराला इनमे से प्रथम दो के प्रतिनिधि हैं ततीय के नही। इस प्रेरणा से उदभावित नवीन भाषाप्रयोगो और उनकी अथमत्ता से परिचित न होने के कारण ही पुराने लोग छायावादी कवियो का अथ समझन म कठिनाई का अनुभव करते थ। निराला की भाषा सवत्र कोश का अनुसरण नही करती इसीलिए जो लाग केवल स्वीकृत शब्दावली के प्रेमी होत हैं वह इन नए प्रयोगो और उनकी नइ अथ निष्पत्तियो को स्वीकार नहीं करत। छायावादी काव्य पर आक्षेप करते हुए आचाय शुक्लजी ने दूरान्वयी लक्षणाओ

की चर्चा की है। 'अभिलाषाओं की करवट, फिर सुप्त व्यथा का जगना' में अभिलाषाओं का करवट लेना, सोई हुई व्यथाओं का जागना जैसे लाक्षणिक प्रयोग शुक्लजी को मान्य नहीं। परंतु छायावादी कविता में ऐसे ही लाक्षणिक प्रयोगों की बहुलता है जो सूक्ष्म मानसिक तथ्यों का उद्घाटन करते हैं। ऐसी काव्यभाषा का निर्माण कवि की प्रतिभा करती है। आरंभ में यह भाषा क्लिष्ट होती है और अपरिचित भी। पंडित लोग उसे शास्त्रीय दृष्टि से अग्राह्य ठहराते हैं। परंतु नए उन्मेष के काल में काव्य की यह स्वच्छंदता अवश्यंभावी है। निराला की काव्यभाषा जो परंपरागत अर्थबोध के बाहर प्रतीत होती है उसका कारण भाषा में नई शक्तिमत्ता लाने का प्रयास तथा अपरिचित अर्थों की संयोजना का अभियान है।

व्यापकता और विस्तार को लक्ष्य में रखने के कारण निराला की काव्यभाषा समरस नहीं है। वह प्रयोगबहुल है। छायावादी कवियों में निराला की यह स्थिति अद्वितीय है। प्रसाद की भाषा का प्रतिमान सुनिर्धारित है। पंत की सौंदर्य-चेतना भाषा के चयन में कभी त्रुटि नहीं करती। महादेवी ने भी अपनी रहस्य चेतना के लिए अपेक्षित भाषापद्धति का निर्माण कर लिया है। इस कारण इन तीनों कवियों की काव्यसीमाएं सुनिर्दिष्ट हो गई हैं। किसी कवि में जब एक ही रस का आधिक्य होता है तब उसकी काव्यभाषा भी उसी के अनुरूप विकसित और निर्मित होती है परंतु जो कवि अनेक भावों अनेक रसों और अनेक स्तरों की जीवन भूमिका को चित्रित करता है वह अपनी भाषा को एक ही सांचे में नहीं ढाल सकता। उसकी काव्यभाषा में व्यवस्था की कमी हो सकती है, पर विस्तार की नहीं। अन्य छायावादी कवियों की काव्यभाषाएं अपनी अपनी सीमाओं में बंधी हुई हैं। इसीलिए वे अधिक सुस्थिर और अधिक सौंदर्योन्मुखी हो सकती हैं, पर निराला की काव्यभाषा की भांति विस्तृत और वैविध्यपूर्ण नहीं। निराला की काव्यभाषा समासबहुल संस्कृत के प्रयोगों से लेकर बोलचाल की भाषा के अशिष्ट प्रयोगों तक संचरण करती है। इन सीमांतों के मध्य में निराला की व्यापक काव्यभाषा है जो रसों की विभिन्नता के अनुरूप अपना निर्माण करती है।

निराला की काव्यभाषा की यही विशेषता विविध सौंदर्यछवियों के अंकन में दिखाई देती है। प्रसाद के काव्य में प्राप्त होने वाली सौंदर्य छवियां कल्पना-प्रसूता उत्प्रेक्षाओं से समन्वित है। श्रद्धा और इडा के स्वरूप वर्णन दो प्रकार के नारीसौंदर्य को प्रस्तुत करते हैं। पंत के काव्य में प्राकृतिक परिवेश का सौंदर्य अत्यधिक घनीभूत हो गया है। महादेवी की सौंदर्य छवियों में अलंकार की प्रमुखता है। इन तीनों से भिन्न प्रकार का सौंदर्यांकन निराला ने किया है। जूही की

कली' जसी रचनाओ म जहा मुक्त शृ गार का बाहुल्य है वहा 'सध्या सु दरी' जैसी कविताओ मे एक भिन्न ही भावचेतना काय करती है। पारिवारिक जीवन छवियो से लेकर सामाजिक और राष्ट्रीय आदर्शों तक के गीत निराला न लिखे हैं। इसके अतिरिक्त विनयभावना और आत्मनिवदन के शातरसीय गीत भी विद्यमान है। *तात्पय यह कि निराला के सौदयचित्रण म स्वच्छन्दता और प्रयोग-*बाहुल्य की चरम सीमा है। यही कारण है कि कोई एक भाषाप्रतिमान उनके लिए पर्याप्त नही था। उन्हे विविध प्रतिमाना की आवश्यकता थी। बाहरी दृष्टि से उनकी काव्यभाषा म अव्यवस्था और नियमहीनता दिखाई द सकती है परतु विषयानुरूप भाषानिर्माण म निराला की शक्ति अप्रतिम ही कही जाएगी।

किसी भी काव्यभाषा के लिए उपयुक्त सगीतात्मक और लयात्मक पद विन्यास आवश्यक होता है। काव्ययोजना का यह बहिरग पक्ष है। प्राचीन आचार्यों न अशत शब्दालकार के अतगत भाषासबधी के इस तत्व को समाहित किया है। *निराला के काव्य म न केवल शब्दालकार सुनियोजित हैं, बल्कि उनकी* सगीतात्मक ध्वनिया भी सहृदय पाठको का प्रभावित करती हैं। मुक्तछद म दिए हुए उनके विराम और सुप्रयुक्त शब्दालकार उनक काव्यकौशल के द्योतक है

देख यह कपोत कठ
बाहुवल्ली कर मराज
उन्नत उरोज पीन क्षीण कटि
नितम्ब भार चरण सुकुमार
गति मन्द मन्द
छूट जाता धय ऋषि मुनिया का
देवो भोगिया की तो बात ही निराली है

यहा एक सागीतिक प्रवाह तो है ही, सराज के साथ उरोज, पीन के साथ क्षीण, भार के साथ सुकुमार जैसे प्रयोगो म शब्दालकार सुदर प्रभाव की नियोजना करत हैं।

काव्यभाषा का सौंदय छदयोजना पर भी आश्रित रहता है। केवल छदशास्त्र या पिंगल का अनुसरण न करके निराला के गीता म राग रागिनियो का भी यथष्ट ध्यान रखा गया है। 'जग का एक देखा तार' शीषक गीत म छन्दविन्यास और वणमत्री सुदर सबध स्थापित हो सका है। छदानु[illegible] म [illegible] का विन्यास निराला म प्राय सवत्र [illegible] है। जब वह [illegible] दीघ का य म दीघ छन्दा का अपनाते हैं [illegible] या महाका[illegible] की भूमि पर पहुँच जाती हैं और [illegible] की भू[illegible] है तब उनकी भाषा म सरलता ओ[illegible] जाते हैं।

शब्दावली और पद वि`यास की दृष्टि से निराला की काव्यभाषा की कुछ स्पष्ट श्रेणिया हो जाती है। सस्कृत की जटिल और क्लिष्ट सामासिकता से लेकर उर्दू-फारसी तक के क्लिष्ट प्रयोग उसम परिलक्षित होत हैं। इस आधार पर निराला की काव्यभापा की जितनी श्रेणिया बनती है उनम से प्रत्यक के उत्कप की अपनी विशेषताओ के साथ अपनी अपनी सीमाए भी है, किंतु सबस बडी बात यह है कि एसी प्रत्येक श्रेणी के साथ उनके वर्ण्य विषयो और उद्दिष्ट रसा का भी बहुत अशो तक विभाजन हो जाता है। इससे उनक काव्य म भापा और भाव की निगूढ सपृक्ति का परिचय मिलता है।

प्रथम स्तर पर उनकी सामासिक पदावली है जिसम उन्होन सस्कृतबहुल भाषा का प्रयाग किया है। भापा की इस शली पर जयदेव का प्रभाव एक अश तक स्पष्ट परिलक्षित होता है किंतु निराला म कुछ भिन्नता भी है। जहा जयदव की सामासिक वाक्यरचना कोमल कात पदावली क माध्यम म शृगार रस की निष्पत्ति करती है वहा निराला के सामासिक प्रयोग यदि यमुना के प्रति जैसी कविता म शृगार रस का साधन करते है तो दूसरी ओर राम की शक्तिपूजा' और 'तुलसीदास' जैसी भिन्न रस की रचनाओ म भी दखे जात है जिसम माधुय के बदल ओजगुण की प्रधानता है। 'राम की शक्तिपूजा' की प्रारभिक पद्रह बीस पक्तियो म इस प्रकार की पदावली का अतिवादी रूप दिखाई देता है। वीररस का प्रसग होन के कारण शली के औदात्य और भव्यता की सष्टि के लिए गौडी रीति का यह प्रदशन कहा जा सकता है परतु इसम न तो लाकोक्तियो और प्रचलित भाषाचमत्कारो की योजना हो सकी है और न रचना म स्वाभाविक प्रवाह ही आ सका है। हिंदी की अभिव्यजना शक्ति किन शिखरो तक पहुच सकती है इसका उदाहरण मात्र एसी रचनाए हो सकती हैं तथा उनके लिए एक उत्तर भी जो हिंदी म सस्कत के समान सामासिकता सभव नही मानत।

अर्थनिष्पत्ति की दृष्टि से भी ऐसे प्रयोगो म सभी पढनवालो का कठिनाई होती है। अपनी 'परलोक' शीषक कविता म निराला 'प्रिय चिर-दशन' के स्थान पर चिर प्रिय दशन' और शत सहस्र जीवन पुलकित प्लुत प्यालाक्पण' जैस क्लिष्ट समासो का प्रयोग करत हैं। विपयय और क्लिष्टता क अतिरिक्त प्याला' जस फारसी शब्द के साथ आकपण जैस सस्कृत शब्द का समास भापा की दृष्टि से अशुद्ध है। परतु इसका यह अर्थ नही कि निराला की समासबहुल पदावली उनकी काव्यभापा का एक अमिश्रित दोप है। इसके द्वारा उन्होंने छद म लया-त्मकता और नादसौंदय लाने का प्रयत्न किया है और साथ ही उपयुक्त चित्रात्मकता का विधान इसके द्वारा हो सका है। निराला की शाब्दिक मित व्ययिता का यह एक अनिवाय साधन है। अर्थगौरव की सिद्धि क लिए इस प्रकार

के सामासिक प्रयोग सस्कृत भाषा म स्वीकृत हुए हैं। अतएव निराला की प्रणाली एकदम नवीन या अपरिचित नही कही जा सकती।

निराला की सामासिक पदावली के सबध म एक आरोप और किया जाता है। वह यह कि उनकी समासयोजना सस्कृत के नियमो का अनुसरण नही करती। निराला की भाषागत सामासिकता सस्कृत व्याकरण पर आश्रित नही है, इसे स्वीकार करन मे हमे कोई आपत्ति नही। परतु इसका अथ यह नही है कि उसके मूल म कोई व्याकरण नही है। देशभाषाओ के अपने स्वतत्र व्याकरण हैं और उनके ही आधार पर हम निराला की सामासिक पदावली की परीक्षा करनी होगी। यह भी सच है कि केवल व्याकरण के आधार पर कोई कवि अपनी पद रचना नही करता। अनेक बार तो पदरचनाओ के आधार पर व्याकरण के नियम बनते हैं। निराला की सामासिक पदावली पर विचार करते समय इन तथ्यो को स्मरण रखना होगा।

निराला की काव्यभाषा का दूसरा स्तर वह है जिसम हिंदी और सस्कृत की पदावली समान रूप से मिली हुई है तथा जिसमे एक सपूण समाहार परिलक्षित होता है। उनकी अधिकाश रचनाओं म तथा विशेषत उनकी मुक्त छद की कृतियो और 'गीतिका' के गीतो मे इसी सस्कृत के सौदय से समन्वित हिंदी की पदावली की छटा दिखाई देती है। इस भाषारूप के भी दो उपविभाग किए जा सकते हैं। एक वह जिसमे सस्कृत का भाषासौंदय अधिक मुखर है और द्वितीय वह जिसमे हिंदी की अपनी उक्तिया और व्यजनाए प्रमुख हैं। इस स्तर की भाषा म तुलसीदास और रवींद्रनाथ दोनो ही की प्रेरणा दिखाई देती है। प्रथम उपविभाग के लिए तुलसीदास और द्वितीय के लिए तुलसीदास तथा रवींद्रनाथ दोनो के प्रतिमान स्वीकार किए जा सकत है। कहने की आवश्यकता नही कि निराला के प्रारभिक काव्य म सस्कृत की अपेक्षाकृत प्रचुरता है जबकि उनके अतिम समय के गीतो म देशभाषा का सौदय अधिक स्पष्टता से दिखाई देता है। जिस प्रकार की सास्कृतिक स्तर की भावव्यजना निराला को करनी थी उसके लिए सस्कृत और हिंदी का योग्य सम्मिश्रण प्रदर्शित करनेवाली यह भाषा आदश बन सकती थी। इस मध्यवर्तिनी भाषा में निराला न शृगार और वीर दोनो रसो की अभिव्यजना की है। विशेषत उनके ऋतुवणनो और प्राकृतिक सौन्दय चित्रणो म इस भाषा का समृद्ध प्रयोग उपलब्ध होता है।

विशुद्ध खडी बोली की रचनाओ म निराला की काव्यभाषा का तीसरा स्वरूप दिखाई देता हैं। अपन परवर्ती काल के काव्य म उन्होने ठेठ हिंदी के अनवरत प्रयोग किए हैं। इसके अतगत न केवल उनकी परवर्ती गीतिसृष्टि आती है बल्कि उनकी हास्य विनोद मिश्रित काव्यरचनाए भी आ जाती हैं। य ठेठ

सफल प्रयोग अभी तक संभव नहीं हुआ है। निराला भी ऐसे प्रयोग में किसी समरस भावनाधारा का संचार नहीं कर सके हैं।

'बेला' में निराला ने उर्दू और फारसी के छन्दों को अपनाया है। इसकी कुछ गजलों में संस्कृत पदावली का प्रयोग है कुछ में हिंदी उर्दू मिश्रित पदावली आई है और शेष में विशुद्ध उर्दू फारसी की शब्दावली का प्रयोग किया गया है। उर्दू-फारसी के छन्दों में विशुद्ध संस्कृत की पदावली का प्रयोग कोई नैसर्गिक प्रयास नहीं कहा जा सकता। कदाचित इसी कारण 'बेला' की संस्कृत पदावली वाली गजलें अच्छी तरह निखर नहीं सकी। जहां तक हिंदी उर्दू मिश्रित गजलों का प्रश्न है निराला की सफलता इन्हीं में सबसे अधिक दिखाई देती है। गजलों की तीसरी भूमिका जिसमें उर्दू फारसी का बाहुल्य है निराला के समग्र अधिकार की सूचक नहीं है। इनमें वह टकसालीपन नहीं है जो श्रेष्ठ उर्दू कवियों की शायरी में पाया जाता है। फिर भी यह कम महत्व की बात नहीं कि निराला के इन प्रयोगों में काव्यकौशल के दृष्टांत मिल जाते हैं। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि 'बेला' में निराला की काव्यभाषा प्रतिमानित नहीं हो सकी।

काव्यभाषा में अर्थाभिव्यक्ति का तत्व प्रमुख होता है। कवि जो कुछ कहना चाहता है उसे वह समीचीन शब्दों के माध्यम से कह सका है या नहीं यह प्रश्न महत्वपूर्ण है। यद्यपि शब्दों में अभिधा के अतिरिक्त लक्षणा और व्यंजना नामक शक्तियां भी होती हैं तथापि शब्दप्रयोगों से अर्थ की अभिव्यक्ति तभी हो सकती है जब संबद्ध शब्द का प्रयोग समुचित भूमिका पर हुआ हो। किसी शब्द की लाक्षणिक या व्यंजनात्मक शक्ति तभी उदित होती है जब उसकी अभिधा शक्ति या अभिधेयार्थ का वास्तविक निर्देश हो। किसी गलत शब्द से लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ का अभिव्यंजन होगा तो वह लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ भी त्रुटिपूर्ण और असिद्ध रहेगा। अतएव शब्दों के वास्तविक अर्थ का परिज्ञान कवियों के लिए आवश्यक है।

छायावादी कवियों ने अनेक बार शब्दसंगीत पर इतना ध्यान दिया है कि कविता में अर्थपक्ष की अनेक बार उपेक्षा हो गई है। यद्यपि शब्दचयन और उसकी उचित संगीतात्मकता कवियों का एक आवश्यक साधन है तथापि अभिधा की उपेक्षा करके इन साधनों का उपयोग अवांछनीय है। इसी संदर्भ में छायावादी कवियों के अनेक शब्दों को लेकर अर्थ की खींचतान करनी पड़ती है। जितना अर्थ जिस शब्द का है अथवा हो सकता है उससे अधिक की अपेक्षा करना श्रेष्ठ कवियों का कार्य नहीं। इस संबंध में संस्कृत के कवि आदर्श का काम कर सकते हैं। संस्कृत के कवि शब्दार्थ से जितने परिचित हैं और शब्दप्रयोग में जितने सिद्धहस्त हैं कदाचित हिंदी के कवि उतने नहीं। इसका कारण यह भी हो सकता

है कि सस्कृत एक परिनिष्ठित काव्यभाषा है जबकि हिंदी म परिनिष्ठा का तत्व अपेक्षाकत परिमित है। उदाहरण के लिए निराला का 'यौवन मद की बाढ नदी की, किसे देख झुक्ती है', प्रयोग है। यहा नदी की बाढ का 'झुकना' भाषा की दृष्टि स सुसगत प्रयोग नही है। बाढ का युकना न तो मुहावरा ही है और न 'झुकती' शब्द मे वह शक्ति ही है कि वह अभीप्ट अथ की यथाथ व्यजना कर सके, न इसकी चित्रात्मकता ही उपयुक्त अथव्यजना का आधार देती है। इसी प्रकार 'सध्या सुन्दरी' म सस्कृत के सौंदय से सपन्न 'सोती शात सरोवर पर अमल कमलिनी दल मे' आदि पक्तियो के उपरात 'सिफ एक अव्यक्त शब्द सा में 'सिफ शब्द भावानुरूप नही है। 'हे मेरे अभिनदन वदन, हे मेरे क्रन्दन' आदि प्रयोग भी शब्दाथ की दृष्टि से समीचीन नही हैं। परतु स्वच्छदतावादी काव्य की भाषायोजना में शब्दाथ का सदैव सटीक प्रयोग नही हुआ। यह इस काव्यधारा की एक मूलभूत कमजोरी है।

कलापक्ष

निरालाकाव्य की मूल प्रकृति

किसी कवि के कलापक्ष पर विचार करते हुए हमें उन समस्त सौंदयप्रसाधना को देखना और परखना पडता है जो उसके काव्य में नियोजित होते हैं। प्रत्येक कवि की एक स्वतत्र प्रकृति होती है, जो उसके काव्यनिर्माण की प्रेरक बनती है और उसके काव्य में व्याप्त रहती है। यह प्रकृति कवि और उसके काव्य के विकास के साथ प्रौढ हो सकती है, परतु उसका स्वरूप प्राय एकरस बना रहता है। यही उस कवि के काव्य का निर्णायक स्वरूप होता है। इसी के अनुरूप कवि उन सौंदयसाधनो का चयन करता है, जिनसे उसके काव्य के कलापक्ष का निर्माण होता है।

निराला की काव्यप्रकृति के सबध में हम पूववर्ती अध्यायो मे पर्याप्त विचार कर चुके हैं। यहा हम साररूप में कह सकते हैं कि उनकी प्रकृति स्वच्छदतावादी और दाशनिक है। इन दोनो तत्वो का समाहार उनके काव्य की प्रमुख विशेषता है। निराला का स्वच्छदतावादी काव्य और उनकी नव अद्वतवादी दाशनिकता अनुलोम वस्तुए हैं, अतएव उनके काव्य में ये दोना तत्व अविरोधी रूप से मिले हुए हैं। कुछ समीक्षको न उनके दाशनिक पक्ष को आवश्यकता से अधिक शास्त्रीय बनान का प्रयत्न किया है, परतु हमन निराला की दाशनिकता के अध्ययन में उनकी स्वच्छद मनावत्ति का सवत्र योग पाया है। निराला के स्वच्छदतावादी काव्य में दशन की स्थिति आत्यतिक नही है। दशन को हम निरालाकाव्य के भावोन्नयन का साधन और अलकार भी कह सकते हैं।

निराला का स्वच्छदतावादी काव्य केवल सौदयवादी या कल्पनाप्रधान नही है। इसमें सामाजिक और युगजीवन के तत्वा का गभीर योग हुआ है। उनके काव्य के इस पक्ष का लेकर कतिपय समीक्षका न उनकी विवचना वीरगीता के स्रष्टा, उदात्त और प्रगतिशील कवि के रूप में की है। इस प्रकार का विवचन अधान सगत भी है। परतु केवल इस पक्ष पर दृष्टि रखन से निराला काव्य के वस्तु और कलापक्ष का सपूण निरूपण नही हो सकेगा। स्वय स्वच्छदतावाद शब्द में इतनी व्याप्ति है कि वह केवल सौंदयवादी या कलावादी प्रवृत्तियो को ही नही,

युग जीवन, व्यक्ति और समाज की नाना प्रगतिया और आदर्शों को समाहित कर सकता है। निराला के स्वच्छदतावादी काव्य में दार्शनिकता का जो सयोग है वह उस एक उच्चतर भावभूमिका पर ले जाता है। निराला का सास्कतिक आदश तथा उनका मानवतावाद इसी दार्शनिकता स उदभूत हुए ह। उनके शृ गारिक गीता और प्रगीतो स लेकर विद्रोही भावा और वीराख्याना के निर्माण में उनकी स्वस्थ मानवतावादी दृष्टि सवत्र दखी जाती है।

अपने परवर्ती काव्य में निरालायुग और समाज की अधिक प्रत्यक्ष भूमियो पर पहुचे हैं और उन्हान युगीन स्थितिया पर अपनी सीधी प्रतिक्रियाए व्यक्त की है, जो यत्र-तत्र हास्य, विनोद और व्यग्य से समन्वित हैं। इन यथार्थान्मुख प्रवत्तिया के मूल म भी निराला का सास्कतिक व्यक्तित्व सवत्र क्रियाशील है। यही कारण है कि निराला के व्यग्यकाव्य में यथार्थवादियो की सी तथ्यपरकता का सन्निवेश नही हुआ है। सामान्य रूप स स्वच्छन्दतावादी प्रवत्तिया का व्यग्य और हास्य स कोई आत्मीय सबध नही हाता, परतु निराला के व्यक्तित्व के दो छोरा पर गभीरता और हास्य, उदात्त और व्यग्यात्मक प्रवृत्तिया एक साथ समाहित हो गई हैं। इसे हम उनके कविव्यक्तित्व की व्यापकता ही कहगे। निराला यथार्थ की उस सीमा पर पहुचकर रुक गए हैं जिस पर उनका स्वच्छदतावादी सास्क-तिक व्यक्तित्व पहुच सकता था और जिससे आगे बढना उनके लिए सभव न था।

अपने अतिम वर्षों में निराला का काव्य अधिक गभीर रूप से अतर्मुख और आध्यात्मिक हा गया था। उन वर्षों में उन्होंने स्वच्छदतावाद के कल्पनाशील उपादाना और अलकरणा को बहुत कुछ छोड दिया था और सरल तथा ठेठ भाषा में वे अपन वक्तव्य प्रकट करने लग थे। यद्यपि इन वर्षों में भी निराला सामा-जिक जीवन की असगतिया से क्षुब्ध थे, परतु यहा उनका दृष्टिकोण क्रातिकारी या सघषमूलक न होकर प्रशात और समपणशील है।

इन बहुविध विकासोन्मुख प्रवत्तियो के होते हुए भी निराला काव्य की प्रकति समरस है। वह प्रकति स्वच्छदतावादी, सास्कतिक, मानवतावादी और आस्था-मूलक कही जा सकती है। इस मूल प्रकति को समक्ष लेन पर ही हम उनके काव्य के सौंदय उपादानो पर सम्यक रूप से विचार कर सकेंगे।

स्वछनादवादी वस्तु और कला

वतमान समय के कुछ समीक्षक स्वच्छन्तावादी काव्य और कला को उसके ऐति हासिक परिप्रेक्ष्य मे अलग हटाकर देखने हैं और उसके दुबल पक्षा का इजहार करते हैं। ये समीक्षक कभी कभी प्राचीन अभिजात या क्लासिकल' काव्य और

काव्य समीक्षा के लिए उपादेय हो सकता है।

कला के अध्याय

इन आरंभिक निर्देशो के पश्चात हम निरालाकाव्य के कलापक्ष पर विचार कर सकते हैं, परंतु यहा भी एक आरंभिक कठिनाई उपस्थित होती है। हिंदी मे कलापक्ष की विवेचना म अनेक बार 'रूप', 'शिल्प', 'शैली' और अभि्यजना' जैसे शब्दो का अस्पष्ट रूप से प्रयोग होता रहा है। य शब्द, कभी कलापक्ष के सपूण सौदय के लिए, और कभी उसके एक अशविशेष के लिए प्रयुक्त होत रहे है। स्पष्ट ही ये शब्द एकाथक नही है, परतु इह कई बार एकाथक मान लिया जाता है और यदि कही इनमे अथभेद भी किया गया है, तो बहुत कुछ अस्पष्ट रूप म। हमारी दष्टि म इन शब्दो की पृथक पृथक अथसीमाए और व्याप्तिया हैं, जिनपर विचार कर लेना और जि्ह स्वीकार करना आवश्यक है।

काव्यसौंदय या कला की एक विशिष्ट इकाई अभिव्यजना है। अभिव्यजना के अतगत भाषा के समस्त रूपगत और अथगत सौंदय समाहित होने हैं। का्य के लिए प्रयाजनीय शब्द ही काव्यभाषा का निर्माण करते है और भाषा की भगिमाए और चमत्कतिया ही अभिव्यजना कही जाती है। पडितराज जग्नानाथ के का्य को 'ललितोचितसं निवेशचारु' कहकर इसी अभिव्यजना सौदय का सकेत किया है। वर्णों की चारुता से लेकर शब्दा के रूप सौदय और अथ सौदय का आकलन करत हुए कवि अपनी भाषाप्रतिमा का निर्माण करता है, जिससे अभिव्यजना का सपूण सौन्दर्य परिस्फुट होता है। भाषा के रूपगत सौंदय से हमारा आशय शब्दो वर्णों के ऐसे नियोजन म है, जिनम आवश्यकतानुसार मधुर और मद्र उच्चारण समाहित रहते हैं। भारतीय आचार्यों के इन द्विविध वर्णों का पृथक पृथक विचार किया है और समुचित वर्णों के सयोग को ही काव्योचित बताया है। इसी सदभ म आनुप्रासिक वणयोजना की भी चर्चा की गई है। वण, और वणघटित पद, और पदा से घटित वाक्यरचना काव्य मे लयतत्व की भी सष्टि करती है और लयो की सघटना ही छद के नाम से अभिहित होती है। यह अभिव्यजना का रूप पक्ष है, उसका दूसरा पक्ष अथपक्ष है, जिसकी सम्यक योजया अभिधा, लक्षणा और व्यजना शक्तियो के माध्यम स की जाती है। इन शब्दशक्तियो के तुलनात्मक महत्व क सबध मे प्राचीन पडितो मे कुछ मतभेद भी दिखाई देता है, परतु हमारी दष्टि मे अभिधायक शब्दा का सौदय ही लक्षणा और व्यजना का आधार है। यदि सटीक शब्दो का प्रयोग न किया जाए तो लक्ष्य और व्यग्य अर्थों की निष्पत्ति ही नही होगी।

अभि्यजना क उपयुक्त उपकरणा के अनतर काव्यकला का दसरा उपकरण

कला के वैचारिक सतुलन, सगति और व्यवस्था के तत्वो को अत्यधिक महत्व देते है और उसकी तुलना म स्वच्छदतावादी काव्य के कल्पनाशील नवोन्मेषपूण सौदय की अवहलना करते हैं। टी० एस० इलिएट का उद्धरण देते हुए वह यह बताना चाहते है कि क्लासिकल काव्य का सा सतुलन तथा उसकी सी वचारिक प्रौढता स्वच्छदतावादी काव्य म नही है। परतु वे इस बात को भूल जाते हैं कि अभिजात क्लासिकल काव्य मे मानवसमानता स्वातन्त्र्य और असीम सभावना के व तत्व नही है जो स्वच्छदतावादी काव्य म प्रथम बार उदभासित हुए हैं। टी० एस० इलिएट को प्रजातन्त्र के आदर्शों पर वह आस्था नही है, जो राजसत्ता पर है। ऐसे लखक को अपने अभिवक्ता के रूप म प्रस्तुत करने के पहले इन समीक्षको को एतिहासिक स्थिति का आकलन करना चाहिए। कही वे फिर से सामती समाज की ओर तो लौटना नही चाहते। उनके सामाजिक और राजनीतिक प्राप्तव्य क्या है? अथवा वे भी किसी व्यतीत और कभी वापस न आनवाले युग म फिर से निवास करने जा रहे है।

स्वच्छन्दतावाद न आत्यतिक रूप से मानवसमाज को एक नूतन विश्वदृष्टि दी है। मानवीय चेतना का विस्तार किया है और एक उदार जीवनदशन की प्रतिष्ठा की है। मानव अस्तित्व और व्यक्तित्व की अनत सभावनाओ का निर्देश किया है। इस एतिहासिक उत्थान और उन्मेष क प्रतिनिधि काव्य की, पुरानी राजसत्ता या सामतवादी परिवेश म लिखे गए काव्य स तुलना करना एक अनतिहासिक प्रयास है। य दोनो ही काव्य नितात भिन्न प्रकृतियो और प्रेरणाओ के काव्य हैं। यह बताना और भी कठिन है कि आज के विघटित और खडित चेतनाओ क काव्य स सामतयुगीन समाहित आदर्शों के क्लासिक' काव्य की क्या समानता है? य दोनो काव्य भूमिकाए एकदम असमान हैं। फिर भी कुछ नए समीक्षक यदि इस नई कविता को क्लासिकल काव्य के आदर्शों का अनुयायी बताते हैं तो यह उनकी बौद्धिक उवरता का ही परिचायक तत्व है।

पिछले कुछ समय से हिंदी के कुछ समीक्षक भाषा और उसके प्रयोगो की सटीकता को काव्य के लिए एकमात्र महत्वपूण तत्व बता रहे हैं। भाषा क प्रयोग सवेदनाओ को जागत करन म सहायक होते हैं, इस सबध म दो मत नही है। परतु हम उन सवेदनाओ के स्वरूप और वशिष्ट्य की भी छानबीन करनी पडगी, जिनके अनुरूप की नई शब्दावली का आग्रह किया जाता है। यह मूलत भाषा और भाव की अनुरूपता का प्रश्न है जिस पर जितना भी बल दिया जाए उचित है। परतु भावो और सवेदनाओ के स्वरूप का ध्यान रखे बिना केवल भाषा के परिमाजन और नवीनीकरण की चर्चा या माँग करना, अपन म एकागी प्रस्ताव है। काव्य क दोनो पक्षो का—कवि की सवेदना और उसकी अभिव्यक्ति का—समन्वित विवेचन ही

काव्य समीक्षा के लिए उपादेय हो सकता है।

कला के अध्याय

इन आरभिक निर्देशो के पश्चात हम निरालाकाव्य के कलापक्ष पर विचार कर सकते हैं, परतु यहा भी एक आरभिक कठिनाई उपस्थित होती है। हिंदी म कलापक्ष की विवेचना म अनेक बार 'रूप' 'शिल्प' शली' और अभिव्यजना' जैसे शब्दो का अस्पष्ट रूप से प्रयोग होता रहा है। य शब्द, कभी कलापक्ष के सपूण सौदय के लिए, और कभी उसके एक अशविशेष के लिए प्रयुक्त होते रहे है। स्पष्ट ही य शब्द एकाथक नही हैं, परतु इन्ह कई बार एकाथक मान लिया जाता है और यदि कही इनम अथभेद भी किया गया है, तो बहुत कुछ अस्पष्ट रूप म। हमारी दृष्टि म इन शब्दो की पृथक पृथक अथसीमाए और व्याप्तिया हैं, जिनपर विचार कर लेना और जिन्ह स्वीकार करना आवश्यक है।

काव्यसौंदय या कला की एक विशिष्ट इकाई अभिव्यजना है। अभिव्यजना के अतगत भाषा के समस्त रूपगत और अथगत सौंदय समाहित होते है। काव्य के लिए प्रयोजनीय शब्द ही काव्यभाषा का निर्माण करते हैं और भाषा की भगिमाए और चमत्कृतिया ही अभिव्यजना कही जाती है। पडितराज जगन्नाथ के काव्य को 'ललितोचितसंनिवेशचारु' कहकर इसी अभिव्यजना सौंदय का सकेत किया है। वर्णों की चारुता से लेकर शब्दो के रूप सौदय और अथ सौदय का आकलन करते हुए कवि अपनी भाषाप्रतिमा का निर्माण करता है, जिससे अभिव्यजना का सपूण सौंदर्य परिस्फुट होता है। भाषा के रूपगत सौंदय से हमारा आशय शब्दो वर्णों के उस नियोजन म है, जिनमे आवश्यकतानुसार मधुर और मद्र उच्चारण समाहित रहते हैं। भारतीय आचार्यों के इन द्विविध वर्णों का पृथक पृथक विचार किया है और समुचित वर्णों के सयोग को ही काव्योचित बताया है। इसी सदभ म आनुप्रासिक वणयोजना की भी चर्चा की गई है। वण, और वणघटित पद, और पदो से घटित वाक्यरचना काव्य मे लयतत्व की भी सष्टि करती है और लया की सघटना ही छद के नाम से अभिहित होती है। यह अभिव्यजना का रूप पक्ष है, उसका दूसरा पक्ष अथपक्ष है, जिसकी सम्यक योजया *अभिधा, लक्षणा* और व्यजना शक्तियो के माध्यम से की जाती है। इन शब्दशक्तियो के तुलनात्मक महत्व के सबध मे प्राचीन पडितो मे कुछ मतभेद भी दिखाई देता है परतु हमारी दष्टि म अभिधायक शब्दो का सौदय ही लक्षणा और व्यजना का आधार है। यदि सटीक शब्दो का प्रयोग न किया जाए तो लक्ष्य और व्यग्य अर्थों की निष्पत्ति ही नही होगी।

अभिव्यजना के उपयुक्त उपकरणो के अनतर काव्यकला का दसरा उपकरण

शिल्प है। विविध काव्यरूपा की निर्मितियां शिल्प का विषय है। मुक्त प्रगीत और प्रबधकाव्या म शिल्पसौदय की सस्थिति आवश्यक है। प्राचीन आचार्यों न 'बध' या सबध' तत्व के द्वारा इसी पक्ष की उपस्थापना की है। काव्य की अग सगति शिल्पसौदय का ही दूसरा नाम है। नाटकों और प्रबध काव्या क लिए सधिया कार्यावस्थाए आर अथप्रकृतिया वास्तव म शिल्पसौन्य की ही मापक है। केवल वस्तुसगठन या अग सगीत ही नही, प्रबधकाव्या की चरित्रयाजना म भी आनुपातिकता आवश्यक होती है। कुतक न प्रबधकाव्य के लिए प्रकरणा की वक्रता की जो चर्चा की है वह वास्तव म शिल्पसौदय का ही आख्यापक है। ध्वन्यालोक कार न असलक्ष्यक्रम ध्वनि के प्रबधगत रूप पर विचार करत हुए अनक शिल्पीय नियमा का उल्लेख किया है। वस्तु और चरित्रसग्रथन के सबध म नाटय लक्षण ग्रथा म प्रचुर विचार किया गया है। आलकारिको म रुद्रट न काव्य की 'आनुपातिक योजना का निर्देश किया है। औचित्य तत्व क अतगत भी काव्य क शिल्पीय उप करणो को सुनियोजित करन का आग्रह है। क्षेमद्र न सदश सविधान' को औचित्य का एक आधार माना है। इस प्रकार विभिन्न साहित्यिक सप्रदाया म शिल्पसौदर्य की अनकविध चर्चाए की गई हैं।

काव्यसौंदय या कला का तीसरा उपादान रूपयाजना है, जिसमे कल्पना प्रसूत सौदयछविया, बिब और प्रतीक आदि आते हैं। प्राचीन विचारणा के अनुसार अप्रस्तुत का नियोजन करने वाले अलकार रूपयोजना के ही अग हैं। साहित्यशास्त्र म निष्प्रयास आए हुए अलकारो की उत्तमता स्वीकार की गई है। ये निरायास अलकार वास्तव मे कविकल्पना के ही उन्मेष हैं। जब अप्रस्तुता की योजना अधिक एकतान और अटूट हा जाती हैं तब बिंबो का आविर्भाव होता है। नसर्गिक कल्पना से प्रसूत बिब ही काव्योपयागी होते है अन्य बिंब नही। जो बिबवादी बिंबसष्टि को ही कवि का प्रधान या एकमात्र काय मानते है, वे वण्यविषय की उपक्षा करते हैं और कारे कलावादी कहे जा सकते हैं। इसी प्रकार प्रतीक भी कवि की भावाश्रित कल्पना का एक अयत्नज प्रकार है। प्रतीक म अथसामर्थ्य कविकल्पना की गहराई से उत्पन्न होता है और यह निश्चय है कि श्रेष्ठ कवि ही प्रतीक सष्टिकर सकता है। जयशकर प्रसाद ने मनु श्रद्धा और इडा के चरित्रा का जो प्रतीकाय दिया है और इस प्रकार कामायनी' काव्य को जो अथ की भास्वरता दी है वह अयत्नज प्रतीक याजना का सुदर उदाहरण है। इसी प्रकार निराला की रूखी री यह डाल वसन वासती लेगी जैसी कविताए व्यजना की अनुरूप शक्तिया स समन्वित होकर अनायास प्रतीकात्मक बन गइ है। काव्यसौन्दय का यह रूपात्मक पक्ष अपन म स्वतन्त्र है जिसका मिश्रण अन्य सौदर्योपादाना स करना उचित नही।

कला का चौथा उपकरण शली है। या तो शली शब्द का प्रयाग अनक अर्थों म

किया गया है, परन्तु कला विवेचन में शैली वह संपूर्ण संघटना है जो काव्य को, कवि व्यक्तित्व के माध्यम से, एक स्वतंत्र और समग्र सौंदर्य प्रदान करती है। 'ध्वन्यालोक' में काव्य की पदयोजना को समासा, असमासा और मध्यसमासा की तीन रीतियों में विभक्त किया है। कुंतक ने रीति या शैली को 'काव्य मार्ग' की संज्ञा दी है। यद्यपि कुंतक कविस्वभाव की दृष्टि से शैली या रीति पर विचार करते हैं, परन्तु काव्यमार्गों की संस्थापना द्वारा वे बहुत कुछ वस्तुमुखी हो जाते हैं। इन विभिन्न काव्यमार्गों या काव्यशैलियों में कुंतक ने छः गुणों की सम्स्थिति मानी है जिनमें 'औचित्य' और 'सौभाग्य' तो सामान्य गुण हैं और माधुर्य, 'सौकुमार्य', 'लावण्य' और 'आभिजात्य' विशेष गुण हैं। गुणों से संपन्न ये काव्य-मार्ग, काव्य के कलापक्ष के अत्यंत मूल्यवान उपादान हैं। शैली शब्द का प्रयोग इसी अंतरंग और गंभीर अर्थ में करना हमें अभीष्ट है। हम शैली को कवि के व्यक्तित्व और उसकी सर्जनाशक्ति का संपूर्ण प्रतिबिंब कह सकते हैं। पश्चिमी विवेचना में यद्यपि शैली शब्द की व्याख्या कई स्तरों पर की गई है परन्तु वाल्टर पेटर जैसे समीक्षक और शोपेनहावर जैसे दार्शनिक 'शैली' को कला का प्राण मानते हैं। शोपेनहावर ने शैली को कवि की मुखाकृति कहा है और कवि के चरित्र का वास्तविक प्रतिबिंब बताया है। मुखाकृति चाहे जैसी हो, कृत्रिम मुखौटे से फिर भी भिन्न होगी। इसलिए मुखौटे या कृत्रिम रूप की अपेक्षा सच्ची आकृति का प्रतिफलन ही काव्यशैली को सजीव और सार्थक बना सकता है। इसी आशय की अभिव्यक्ति 'स्टाइल इज दि मैन' 'शैली ही कवि व्यक्तित्व है' के वाक्य द्वारा पश्चिम में की गई है। इस प्रकार भारतीय और पश्चिमी, दोनों ही दृष्टियों से, शैली कला का वह गंभीर और अंतरंग तत्व है, जो कविव्यक्तित्व और उसके काव्यगुणों को एक साथ संसर्जित करता है।

इस प्रकार 'अभिव्यंजना' और 'शिल्प', 'रूप' और शैली, के चार आयामों में किसी भी कवि के कलापक्ष का संपूर्ण आकलन किया जा सकता है। इन चारों शब्दों को उचित अर्थव्याप्ति भी मिल जाती है और कलापक्ष के विवेचन में सुस्पष्टता भी आ जाती है।

भाषा और अभिव्यंजना

निराला के भाषाप्रयोगों को उनके विविध काव्यरूपों के अनुसार ही कुछ भागों में विभक्त कर देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए उनके गेय पदों की भाषा में एक प्रकार की समरसता प्राप्त होती है। प्राय 400 गीतों में उनकी भाषा परिनिष्ठित रूप की है। यद्यपि अपने परवर्ती काल के गीतों में उन्होंने अपभ्राकृत सरल भाषा का प्रयोग किया है परन्तु उनकी गीतभाषा की मूल प्रकृति अधिक

नही बदली है। ठेठ हिंदी शब्दावली और लोकोक्तियो के साथ वे बार बार सस्कत शब्दावली की ओर लौट आते हैं, जिससे उनके गीता को सास्कृतिक स्तर और आशय प्राप्त होता है। गीतिका के गीता मे सस्कतप्रचुर भापा का सौदय अपने पूरे निखार पर रहा है। निराला ने परवर्ती गीतो म सस्कृतरहित सौदय लाने का प्रयत्न किया है, पर एसे गीत जिनमे सस्कत पदावली का एकदम अभाव हो, बहुत थोडे हैं। हिंदी के अपने सौदय से समन्वित उनका एक गीत इस प्रकार है

सुख का दिन डूबे डूब जाय,
तुमसे न सहज मन ऊब जाय।
खुल जाय न मिली गाठ मन की,
लुट जाय न उठी राशि धन की
धुल जाय न आन शुभानन की,
सारा जग रूठे रूठ जाय।
उलटी गति सीधी हो न भले,
प्रति जन की दाल गले न गले,
टाले न बान यह कभी टले
यह जान जाय तो खूब जाय।

इस गीत म दिन डूबना मन ऊबना, गाठ खुलना, आन धुलना, दाल गलना, उल्टी गति का सीधा होना, बान टलना, जान जाना जस हिंदी मुहावरो की भरमार है, फिर भी इस गीत म 'सहज', 'राशि' 'शुभानन' 'प्रतिजन' 'गीत', जैसे सस्कत शब्दो के योग से भापा को सास्कारिकता दी गई है। यह उन विरल उदाहरणो मे से एक है जिनमे कम से कम सस्कत और अधिक से अधिक हिंदी पदावली का अनुपात है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि निराला के गीतो की भापा सस्कत की ओर झुकाव रखती है, परतु वह कही भी, अप्रचलित शब्दा के योग स दुरूह नही हुई है। निराला की काव्यभापा का प्रकृत पथ यही है, जो उनके गीतो म प्राप्त होता है।

कुछ समीक्षको को निराला की भापा म दुरूहता दिखाई देती है। यदि अनुसधान किया जाए तो इसका कारण शब्दावली की क्लिष्टता नही, कारण है निराला की सक्षेपीकरण की प्रवत्ति। वे थाडे से थोडे शब्दा म दीघतर आशयों को व्यक्त करना चाहते हैं। कला की दृष्टि मे यह भापा की शक्ति की उनायक एक स्वागतयोग्य विशेपता है। कठिनाई यह है कि एसी भापा का प्रयोग हिंदी के दूसरे कवि नही करत या कर पाते। हिन्दी के पाठक उन अपर कवियो की व्यासभापा स परिचित होन के कारण निरालाकाव्य म कठिनाई का अनुभव करते हैं। भापासबधी शब्दलाघव और अथगौरव की जो शली निराला न अपनाई

नाई है, वह उनकी कविता मे कसावट लाती है और अर्थ की व्यजकता की ओर पाठको का उन्मुख करती है। अनेक ऐसे उदाहरण मिलेंगे, जिनम उनके गीतो की भाषा सरल है, परतु अथ कठिन है।

सरि धीरे वह री !

व्याकुल उर, दूर मधुर, निष्ठुर तू रह री !

यहा मधुर शब्द प्रियतम के लिए और 'रह री' ठहरन के अथ म प्रयुक्त है। गीत की आगामी चार पक्तिया इस प्रकार हैं

भर मत री राग प्रबल

गत हासोज्ज्वल निमल—

मुख कल कल, छवि की छल

चपला चल लहरी।

वियोगिनी की इस उक्ति मे चपला सी चचल लहरो वाली, छलनामयी और मुखरा सरिता से मनुहार की गई है कि वह अपनी गति से वियोगिनी म अतीत के उज्ज्वल और निमल हास्य से भरे हुए प्रसगो को उभार कर (स्मरण कराकर) प्रबल रागो की सष्टि न करे (वियोगिनी पर रहम करे)। स्वाभाविक है कि इन थोडे शब्दो म इतन समाहित आशय की अभिव्यक्ति कुछ कठिन हो गई है। इसके समझने क लिए सदभज्ञान और काव्यविवेक की आवश्यकता है। इस कविता पर यह दोष नही लगाया जा सकता कि इसकी शब्दावली क्लिष्ट या अप्रचलित है या इसकी अभिव्यजना कत्रिम या दुरूह है।

प्रगीतों की भाषा

गेय गीतो को छोडकर निराला के प्रगीतो को भाषा की दृष्टि से दो भागो मे बाट कर देखा जा सकता है। एक मुक्तछद प्रगीतो की भाषा, दूसरे छदबद्ध प्रगीत भाषा। निराला के मुक्तछद की भाषा सामान्यत गतिशील और प्रवाहमयी है। उसमें गभीर अर्थों की प्रचुरता का प्रश्न नही है। यह तो स्वच्छद और निरायास है। मुक्तछद की भाषा में गीतो की भाषा की अपेक्षा अधिक सरलता है। वेग की सृष्टि क लिए भाषा को अधिक मार्जित या सयमित नही किया जा सकता। गीतो की भाषा में सस्कृत प्रयोगो का जो सभार है, वह निराला के सयम का ही परिचायक है। मुक्त छद में इस प्रकार के सयमन की आवश्यकता उन्हे नही पडी।

परतु वहा एक दूसरे प्रकार का सौदय है और वह सौदय मुक्तछद में छन्द प्रतीति क लिए नियोजित हुआ है। निराला मुक्त वृत्तो में कहा समीप समीप

और कहीं दूर-दूर अनुप्रासो और यमको की याजना करत हैं। दूरवर्ती अनुप्रासो के प्रयोग के लिए उनकी 'जागा फिर एक बार' कविता देखी जा सकती है। यत्र-तत्र इसी कविता में समीपवर्ती अनुप्रास भी मिलत हैं

विसन सुनाया यह
वीर जनमोहन अति
दुजय सग्राम राग
फाग का खेला रण, बारहो महीन में।

यहा सग्राम राग क साथ 'फाग का सयोजन इसी आशय की पूर्ति करता है। इसी प्रकार

सत श्री अकाल
भाल अनल धक धक कर जला
भस्म हो गया था काल!

पक्तियो में 'अकाल, काल और 'भाल के अनुप्रास मुक्तछन्द को साकारता दन के लिए आए है। उनकी अत्यत प्रसिद्ध कविता 'जूही की कली' में

चकित चितवन निज चारा आर फेर
हेर प्यारे को सेज पास,
नम्रमुखी हसी खिली
खेल रग प्यारे सग—

पक्तियो मे आए हुए फर' और हेर' तथा 'रग' और 'सग' भाषा की इसी कला के उदाहरण हैं।

सध्या सुदरी' लघु प्रगीत की पूरी रचना चित्रात्मक है। इसकी शब्दावली अलकारविहीन वस्तुचित्रण के उपयुक्त है, परतु यहा भी निराला 'सध्या सुदरी' की नीरवता के मध्य एक उदग्रता ले ही आते हैं

सौदय गर्विता के सरिता के अति विस्तृत वक्ष स्थल में,
धीर वीर गम्भीर शिखर पर, हिमगिरि अटल अचल में
उत्ताल तरगाघात प्रलय घन गजन जलधि प्रबल मे
सिफ एक अव्यक्त शब्द सा चुप चुप चुप
है गूज रहा सब कहीं।

प्रशात प्रकति के चित्रण के सदभ में इस प्रकार की प्रचड ध्वनिमयी शब्दावली का प्रयोग उचित है या नही, यह एक अलग प्रश्न है। परतु ऊपर उदधत कविता में 'विवादी स्वर कटास्ट का यह सधान अपूव सामथ्य के साथ किया गया है, इसमें सन्देह नही।

निराला के छन्दबद्ध प्रगीतो की भाषा उनकी मुक्तछद की रचनाओ की भाषा

की अपेक्षा अधिक चारुता समन्वित है। उनकी 'भिक्षुक', 'विधवा', 'तरगा के प्रति' आदि कविताए इसका उदाहरण है। इनमे से कुछ स्वच्छद छद में भी लिखी गई हैं, जिनमें छद तो है, परतु कवि ने उनके साथ छूट ली है। पूरी तरह से छद में बधी हुई निराला की प्रगीतरचनाए उनके गीतो की अपेक्षा कम सस्कतनिष्ठ है, उनमें लोकभाषा का माधुर्य अपेक्षाकृत अधिक है परतु मुक्तछद की भाषा का सा निर्व्याज सौदर्य उनमें कम है। काव्यरूप की भूमिका पर निराला की रचनाए भाषा की दृष्टि से तीन स्वतत्र भूमिकाओ पर प्रतिष्ठित है (1) गीता की भाषा अधिक परिनिष्ठित है। (2) मुक्तछद की भाषा अधिक प्रगल्भ और नियमरहित है। (3) छदबद्ध प्रगीता की भाषा इन दोनो के बीच का स्थान लेती है। तीनो का सौदर्य परस्पर भिन्न है।

दीर्घ प्रगीत

निराला ने प्राय एक दजन दीर्घप्रगीतो का निर्माण किया है जिनमे अधिकाश सन 35 37 के आसपास लिख गए थे। केवल 'महाराज शिवाजी का पत्र' और 'यमुना के प्रति' दीर्घ प्रगीत 'परिमल' मे सन 30 तक उपलब्ध होते हैं। इन दीर्घ प्रगीतो की भाषा समस्तरीय नही है। जहा एक ओर 'यमुना के प्रति', 'सहस्राब्दी', 'देवी सरस्वती' आदि की भाषा निराला की गीत भाषा की भाति सस्कृतनिष्ठ है वहा 'शिवाजी का पत्र', 'सेवा प्रारभ', आदि मुक्तछद के दीर्घ प्रगीत अधिक सामान्य भाषा का प्रयोग करते हैं।

तीसरी ओर 'प्रेयसी', 'वनबेला' आदि दीर्घ प्रगीतो मे भाषा का मिश्रित रूप है और वह सवत्र सुनियोजित नही है। प्रभाव की दृष्टि से इन दीर्घ प्रगीतो मे वह प्रगाढता नही जो अन्य दीर्घ प्रगीतो मे है। विशेषकर 'वनबेला' मे आदर्शोन्मुखी और यथार्थवादी भावधारा को मिलाने का जो प्रयत्न किया गया है उसे भाषा की भूमिका पर सफल प्रयोग नही कहा जा सकता। निराला के दीर्घ प्रगीतो मे 'सरोजस्मृति' कदाचित सर्वोत्कृष्ट रचना है—इसमे भी भाषारूप के विविध मिश्रण दिखाई देते हैं। उदात्त और मार्मिक स्थलो तथा विवरणात्मक और व्यग्यात्मक अवसरो पर भाषा बदलती गई है। परतु भाषा का यह रूपपरिवर्तन कही खटकता नही क्योकि वह प्रगीत की भावसमन्विति के साथ अनुस्यूत है। विविध स्तरो की भाषा का जैसा समन्वय 'सरोजस्मृति' मे प्राप्त होता है हिंदी काव्य मे अन्यत्र दुर्लभ है। भाषा की दृष्टि से यह कवि निराला का एक श्रेष्ठ चमत्कार है।

और कहीं दूर दूर अनुप्रासो और यमको की योजना करते हैं। दूरवर्ती अनुप्रासो के प्रयोग के लिए उनकी 'जागो फिर एक बार' कविता देखी जा सकती है। यत्र-तत्र इसी कविता में समीपवर्ती अनुप्रास भी मिलते हैं

किसने सुनाया यह
वीर जनमोहन, अति
दुर्जय सग्राम राग,
फाग का खेला रण, बारहो महीने में ।

यहा सग्राम राग के साथ फाग का सयोजन इसी आशय की पूर्ति करता है। इसी प्रकार

सत श्री अकाल
भाल अनल धक धक कर जला
भस्म हो गया था काल !

पक्तियो में 'अकाल काल' और भाल के अनुप्रास मुक्तछद को साकारता देने के लिए आए है। उनकी अत्यत प्रसिद्ध कविता जूही की कली' में

चकित चितवन निज चारो ओर फेर
हेर प्यारे को सेज पास
नम्नमुखी हसी खिली
खेल रग, प्यारे सग—

पक्तियो में आए हुए फेर' और हेर तथा रग' और 'सग' भाषा की इसी कला के उदाहरण हैं।

सध्या सुदरी लघु प्रगीत की पूरी रचना चित्रात्मक है। इसकी शब्दावली अलकारविहीन वस्तुचित्रण के उपयुक्त है परतु यहा भी निराला सध्या सुदरी' की नीरवता के मध्य एक उदग्रता ले ही आते है

सौदय गर्विता के सरिता के अति विस्तृत वक्ष स्थल में,
धीर वीर गम्भीर शिखर पर, हिमगिरि, अटल अचल में
उत्ताल तरगाघात प्रलय घन गजन जलधि प्रबल में
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द सा चुप चुप चुप
है गूज रहा सब कही।

प्रशात प्रकृति के चित्रण के सदभ में इस प्रकार की प्रचड ध्वनिमयी शब्दावली का प्रयोग उचित है या नहीं यह एक अलग प्रश्न है। परतु ऊपर उदधृत कविता में 'विवादी स्वर कट्रास्ट का यह सधान अपूर्व सामर्थ्य के साथ किया गया है इसमें सन्देह नहीं।

निराला के छदबद्ध प्रगीतो की भाषा उनकी मुक्तछद की रचनाओ की भाषा

की अपेक्षा अधिक चारुता समन्वित है। उनकी भिक्षुक, विधवा', 'तरगो के प्रति' आदि कविताए इसका उदाहरण है। इनमे से कुछ स्वच्छद छद में भी लिखी गइ हैं, जिनमें छद तो है, परतु कवि न उनके साथ छूट ली है। पूरी तरह से छद में बधी हुई निराला की प्रगीतरचनाए उनके गीतो की अपेक्षा कम सस्कृतनिष्ठ है, उनमें लाकभापा का माधुय अपक्षाकृत अधिक है परतु मुक्तछद की भापा का सा निव्याज सौदय उनमें कम है। काव्यरूप की भूमिका पर निराला की रचनाए भापा की दृष्टि से तीन स्वतत्र भूमिकाओ पर प्रतिष्ठित है (1) गीतो की भापा अधिक परिनिष्ठित है। (2) मुक्तछद की भापा अधिक प्रगल्भ और नियमरहित है। (3) छदबद्ध प्रगीता की भापा इन दोनो के बीच का स्थान लेती है। तीनो का सौदय परस्पर भिन्न है।

दीर्घ प्रगीत

निराला न प्राय एक दजन दीघप्रगीतो का निर्माण किया है जिनमे अधिकाश सन 35 37 के आसपास लिख गए थ। केवल महाराज शिवाजी का पत्र' और 'यमुना के प्रति' दीघ प्रगीत परिमल' में सन 30 तक उपलब्ध हात हैं। इन दीघ प्रगीता की भापा समस्तरीय नही है। जहा एक ओर 'यमुना के प्रति, 'सहस्राब्दी, 'दवी सरस्वती' आदि की भापा निराला की गीत भापा की भाति सस्कृतनिष्ठ है वहा 'शिवाजी का पत्र, सेवा प्रारभ', आदि मुक्तछद के दीघ प्रगीत अधिक सामान्य भापा का प्रयोग करते हैं।

तीसरी ओर 'प्रेयसी, 'वनबेला' आदि दीघ प्रगीता म भापा का मिश्रित रूप है और वह सवत्र सुनियोजित नही है। प्रभाव की दृष्टि से, इन दीघ प्रगीता मे वह प्रगाढता नही जो अन्य दीघ प्रगीता म है। विशेषकर 'वनबेला म आदर्शोन्मुखी और यथाथवादी भावधारा को मिलाने का जो प्रयत्न किया गया है, उस भापा की भूमिका पर सफल प्रयोग नही कहा जा सकता। निराला के दीघ प्रगीतो म 'सरोजस्मति' कदाचित सर्वोत्कृष्ट रचना है—इसम भी भापारूप के विविध मिश्रण दिखाई दत हैं। उदात्त और मार्मिक स्थला तथा विवरणात्मक और व्यग्यात्मक अवसरा पर भापा बदलती गई है। परतु भापा का यह रूपपरिवतन कहीं खटकता नहीं क्योकि वह प्रगीत की भावसमन्विति के साथ अनुस्यूत है। विविध स्तरो की भापा का जैसा समन्वय 'सराजस्मृति म प्राप्त होता है हिंदी काव्य म अन्यत्र दुलभ है। भापा की दृष्टि से यह कवि निराला का एक श्रेष्ठ चमत्कार है।

और कही दूर दूर अनुप्रासा और यमको की योजना करते हैं। दूरवर्ती अनुप्रासो के प्रयोग के लिए उनकी 'जागो फिर एक बार' कविता दखी जा सकती है। यत्र-तत्र इसी कविता में समीपवर्ती अनुप्रास भी मिलत है

किसन सुनाया यह
वीर जनमोहन, अति
दुजय सग्राम राग
फाग का खला रण, बारहा महीन मे।

यहा सग्राम राग के साथ 'फाग का सयोजन इसी आशय की पूर्ति करता है। इसी प्रकार

सन श्री अकाल
भाल अनल धक धक कर जला
भस्म हो गया था काल!

पक्तियो में 'अकाल काल' और 'भाल' के अनुप्रास मुक्तछद को साकारता दने के लिए आए ह। उनकी अत्यत प्रसिद्ध कविता जूही की कली में

चकित चितवन निज चारा ओर फेर
हेर प्यार का मेज पास
नम्रमुखी हसी खिली
खेल रग प्यारे सग—

पक्तियो मे आए हुए फेर' और हेर' तथा 'रग' और 'सग' भाषा की इसी कला के उदाहरण हैं।

सध्या सुदरी लघु प्रगीत की पूरी रचना चित्रात्मक है। इसकी शब्दावली अलकारविहीन वस्तुचित्रण के उपयुक्त है, परतु यहा भी निराला 'सध्या सुदरी' की नीरवता के मध्य एक उदग्रता ले ही आत हैं

सौंदय गर्विता के सरिता के अति विस्तृत वक्ष स्थल में,
धीर वीर गम्भीर शिखर पर, हिमगिरि, अटल अचल में
उत्ताल तरगाघात प्रलय घन गजन जलधि प्रबल में
सिफ एक अव्यक्त शब्द सा चुप चुप चुप
है गूज रहा सब कही।

प्रशात प्रकति के चित्रण क सदभ में इस प्रकार की प्रचड ध्वनिमयी शब्दावली का प्रयोग उचित है या नही, यह एक अलग प्रश्न है। परतु ऊपर उदघत कविता में 'विवादी स्वर' कट्रास्ट का यह सधान अपूव सामथ्य क साथ किया गया है इसमें सन्देह नही।

निराला के छदबद्ध प्रगीता की भाषा उनकी मुक्तछद की रचनाओं की भाषा

की अपेक्षा अधिक चारता समन्वित है । उनकी भिक्षुक, 'विधवा', 'तरगा के प्रति' आदि कविताए इसका उदाहरण हैं । इनम स कुछ स्वच्छद छद में भी लिखी गई हैं जिनमें छद तो हैं परतु कवि न उनक साथ छूट ली है । पूरी तरह से छद में बधी हुई निराला की प्रगीतरचनाए उनक गीतो की अपेक्षा कम सस्कतनिष्ठ है, उनमें लाकभाषा का माधुय अपक्षाकृत अधिक है परतु मुक्तछद की भाषा का सा निर्व्याज सौंदय उनमें कम है । काव्यरूप की भूमिका पर निराला की रचनाए भाषा की दृष्टि स तीन स्वतत्र भूमिकाओ पर प्रतिष्ठित है (1) गीता की भाषा अधिक परिनिष्ठित है । (2) मुक्तछद की भाषा अधिक प्रगल्भ और नियमरहित है । (3) छदबद्ध प्रगीता की भाषा इन दोना क बीच का स्थान लेती है । तीना का सौंदय परस्पर भिन्न है ।

दीर्घ प्रगीत

निराला न प्राय एक दजन दीघप्रगीता का निर्माण किया है जिनमे अधिकाश सन 35 37 के आसपास लिख गए थे । केवल 'महाराज शिवाजी का पत्र' और 'यमुना के प्रति' दीघ प्रगीत 'परिमल' म सन 30 तक उपलब्ध होन हैं । इन दीघ प्रगीता की भाषा समस्तरीय नही है । जहा एक ओर यमुना के प्रति, सहस्राब्दी 'देवी सरस्वती' आदि की भाषा निराला की गीत भाषा की भाति सस्कृतनिष्ठ है वहा 'शिवाजी का पत्र', सेवा प्रारभ, आदि मुक्तछद के दीघ प्रगीत अधिक सामान्य भाषा का प्रयोग करते हैं ।

तीसरी ओर 'प्रेयसी, वनबेला' आदि दीघ प्रगीता म भाषा का मिश्रित रूप है और वह सवत्र सुनियोजित नही है । प्रभाव की दृष्टि से इन दीघ प्रगीतो म वह प्रगाढ़ता नही जो अन्य दीघ प्रगीता म है । विशेषकर वनबेला' म आदर्शोन्मुखी और यथाथवादी भावधारा को मिलान का जो प्रयत्न किया गया है उसे भाषा की भूमिका पर सफल प्रयोग नही कहा जा सकता । निराला के दीघ प्रगीता म 'सरोजस्मृति' कदाचित सर्वोत्कृष्ट रचना है—इसम भी भाषारूप के विविध मिश्रण दिखाई देत हैं । उदात्त और मार्मिक स्थलो तथा विवरणात्मक और व्यग्यात्मक अवसरा पर भाषा बदलती गई है । परतु भाषा का यह रूपपरिवतन कही खटकता नही क्योकि वह प्रगीत की भावसमन्विति के साथ अनुस्यूत है । विविध स्तरा की भाषा का जसा समन्वय 'सराजस्मति म प्राप्त होता है हिंदी काव्य म अन्यत्र दुलभ है । भाषा की दृष्टि से यह कवि निराला का एक श्रेष्ठ चमत्कार है ।

आख्यानक काव्यो को भाषा

'तुलसीदास' और 'राम की शक्तिपूजा' म निराला न एक बिल्कुल ही भिन्न प्रकार की भाषा का प्रयोग किया है। केवल 'यमुना के प्रति' कविता के कुछ अशा म इस प्रकार की भाषा पाई जाती है। इसे हम निराला की काव्य भाषा का आयास साध्य रूप कह सकते हैं। वस्तुत इन दोना काव्यरचनाओ मे निराला एक औदात्य की सष्टि करना चाहते हैं, परतु प्रश्न है कि औदात्य वस्तु का गुण है या भाषा का ? भाषा सरल हो सकती है क्लिष्ट हो सकती है। गतिशील या सगी तात्मक हो सकती है। कामलकात अथवा ओजस्विनी हो सकती है। परतु हमार *विचार मे उदात्त तत्व भाषा का गुण नही है।* इसलिए 'राम की शक्तिपूजा म अथवा 'तुलसीदास' म आई भाषा का उदात्त कहना समीचीन नही प्रतीत होता। निराला ने इन कविताआ म औदात्य की सष्टि के लिए भाषा का जो प्रयोग किया है वह इन दाना आख्यानो म वर्णित उदात्त वस्तु की वाहिका मात्र है। वह स्वय मे उदात्त नही है, हम चाह तो उसे महाकाव्योचित कह सकते हैं। मद्र या गभीर भी उसे कह सकते हैं परतु *औदात्य' भाषा का गुणवाचक शब्द नही है।* इन कविताओ म यद्यपि अधिकतर भावानुरूप भाषा आइ है परतु यत्र तत्र भाषा से अतिरिक्त काय भी लिया गया है। कही सामान्य भावो के आलेख के लिए उच्चस्तरीय भाषा काम म लाइ गई है और कही कही तो, जैस 'शक्तिपूजा' के आरभ की पक्तिया म, भाषा की एक ऐसी कवायद है जिसका समथन केवल यह कहकर किया जा सकता है कि हिंदी म भी ऐसी भाषा लिखी जा सकती है। जैसा हमन अन्यत्र भी कहा है हमारी दृष्टि म राम की शक्तिपूजा' और तुलसीदास' निराला के दो प्रयोग है, जिन्हे हम उनकी सवश्रेष्ठ कविता का उदाहरण नही कह सकन। उनम यत्र तत्र विराट चित्र हैं। रौद्र और भयानक कल्पनाए भी हैं जो हिंदी कविता में कम पाई जाती है। परतु इन असाधारण वस्तुओ के हात हुए भी हमारा अनुमान है कि ये दोना कविताए अधिक सरल और सगुम्फित भाषा में लिखी जा सकती थी।

'पचवटी प्रसग' काव्यनाटय

ऊपर की अपनी धारणा के प्रमाणस्वरूप हम पचवटी प्रसग' की भाषा को ले सकते हैं जिसमें उतन ही उदात्त स्थल हैं जितन राम की शक्तिपूजा' में परतु जहा भाषा की गति अत्यधिक उच्छल और सहज है। लक्ष्मण अपन जीवन क गभीर उद्देश्य की चचा करन हैं राम व्यष्टि और समष्टि, सष्टि और प्रलय ज्ञान, भक्ति कम और याग जस गभीर तत्वा की व्याख्या करत हैं परतु इस कारण

भापा पाडित्य के बोझ से दव नही सकी है, वल्कि व गभीर तत्व अपक्षाकृत उस पारिवारिक आत्मीयता के अनुरूप भापा में अभिव्यक्त हुए है, जिसमें सीता राम और लक्ष्मण वार्तालाप कर रहे है। 'पचवटी प्रसग' की भापा आस पास फले हुए प्राकतिक सौंदय को भी प्रतिबिंबित करती है।

व्यग्य, विनोद और हास्य की भापा

अपन अतिम वर्पों में निराला ने गभीर कविताओ के साथ साथ हल्के हास्य और व्यग्य की भी कविताए लिखी। इनकी भापा उर्दूमिश्रित चलती हुई भापा कही जा सकती है। हिंदी कविता के लिए उर्दू पदावली को विनोद का साधन वनाया गया है यह निराला की मौलिक कल्पना है। अन्य कवियो ने भी उर्दू के प्रयोग हिंदी कविता में किए है। परतु उनके उर्दू प्रयोग इस आशय की पूर्ति नही करत। ठेठ हिंदी के मुहावरो से भरे हुए चुभत और चोखे चौपदे भी लिखे गए हैं (हरिऔध की काव्य पुस्तकें) परतु वहा भी हास्य या विनोद का प्रसग नही है। अतएव निराला की इस प्रकार की रचनाए भापा की भूमिका पर अधिक अथपूर्ण हैं।

कुछ गभीर गजलें और गीत भी उर्दू के मिश्रण से लिखे गए है। परतु इन गीता मे कवि के प्रयोग की वह अनुरजकता या अधिकार नही आ सका है जो उनकी 'कुकुरमुत्ता और 'नय पत्ते' की कविताओ म है।

निरालाकाव्य म भापा की अ यवस्था देखने वाले लोगो को यह जान लेना चाहिए कि निराला अनेक भापाप्रतिमानो के सजक है। उनके गीतो, प्रगीत-रचनाओ, वणनात्मक कतियो, आख्यानक और हास्य विनोद के प्रसगो में भापा के स्वतत्र रूपो का विधान किया गया है। यह रूपविधान अव्यवस्था नहीं है, वरन यह कवि निराला की भापाविपयक वह अधिकार साधना है, जो हिंदी में अन्यत्र दुलभ है। छायावाद के अन्य कवियो न प्राय एक ही भापायष्टि पर अपनी काव्यकतिया प्रस्तुत की है। एक निराला ने अनेक भापारूपो का निर्माण किया है। यत्र तत्र निराला के भापाप्रयोग उनकी स्वच्छन्दतावादी प्रकृति के अनुकूल, अपरिचित और सदिग्ध विशिष्टता के हो गए हैं। हम कह चुके हैं कि [illegible] और [illegible] की प्रवत्ति भी निराला की भापा को [illegible] के लिए अपरिचित बनाती है। पर आज के युग में जव भापा सबधी [illegible] प्रयोगों का बाहुल्य हो रहा हो निराला की भापा को क्लिष्ट या दुरूह नहीं कहा जा सकता। उन्होंने असख्य नए शब्द (नवनिर्मित शब्द) [illegible] हैं। उनकी भापा का प्रमुख गुण वह शब्द सगीत है जो उनकी कविताओं में बहुलता म व्याप्त है [illegible] जिसके कुशल प्रयोगो के द्वारा [illegible] ढग को भी [illegible] बचा सके हैं।

शब्दा के अनुरणन और उच्चारण द्वारा अभीष्ट अथ या व्यक्त करन की कला में निराला निष्णात हैं

प्राण सघात के सिन्धु के तीर मैं
गिनता रहूँगा न कितन तरग हैं,
धीर मैं ज्या समीरण करूगा, सतरण।

प्रथम दा पक्तिया म दो बार 'क' एक बार मैं' और 'न' और न' (कितन) आकर गणना की पद्धति की सष्टि करन हैं। य पाचा एक एक अक की गिनती के बाद आने वाले विराम स प्रतीत होन हैं। दूसरी आर 'धीर मैं ज्या समीरण करूगा सतरण पक्ति म उच्चारण क माध्यम से सकल्प, शक्ति और गति की सूचना मिलती है।

अथपक्ष

भाषा के रूपपक्ष की इस सक्षिप्त चर्चा के पश्चात अब हम निराला की भाषा के अथपक्ष पर भी किंचित ध्यान दे सकत हैं। हमन अपने आरभिक निबधो म कहा है कि निराला की कविता चित्रणप्रधान और वस्तुमुखी हाने के कारण शब्दा की अभिधाशक्ति पर अधिक केंद्रित है

कामिनी वश नव, नवल केश, नव नव कवरी,
नव नव बधन, नव नव तरग, नव नवल तरी
नव नव वाहन विधि, वाहित वनिता जन नव नव
नव नव चिन्तन रचना नव नव, नव नव उत्सव
नूतन कटाक्ष, सबोधन नूतन नूतन उच्चारण
नूतनप्रियता की प्रियतमता, समता नूतन,
सस्कति नूतन, वस्तु वास्तु कौशल कला नवल
विनान शिल्प साहित्य सकल नूतन सबल।

(सहस्राब्दी)

अजता की चित्रकला में नारीचित्रण की सपूर्ण नवीनता को निराला ने स्वत एक चित्र में चित्रित कर दिया है। सपूण चित्र में अभिधा शक्ति का ही प्रसार है। यामिनी जागी उनकी एक सुदरतम कविता है। इसमे भी अभिधाओ द्वारा रूप या सौंदय चित्र उपस्थित किया गया है

खुल केश अशेप शोभा भर रहे,
पृष्ठ ग्रीवा बाहु उर पर तर रह
बादला म घिर अपर दिनकर रहे
ज्योति की नन्वी तडित द्युति न क्षमा मागी।

जहा कही अभिधा अपर्याप्त सिद्ध हुई है, उसे ऊर्जा देने के लिए निराला ने अलकारा का प्रयाग किया है। निराला के अलकार भी चित्रप्रधान हैं। बादला मे अपर दिनकर का घिरना, तडित द्युतिवाली ज्योति की तन्वी का क्षमा मागना, ऐसे ही अलकार हैं।

तरु तण वन लता वमन
अचल म खचित सुमन
गगा ज्यातिजलकण
धवल धार, हार गल

यह भी अभिधा की भूमि पर निर्मिन अलकार का निदशन है। नारीमूर्ति (भारतमाता की) खडी करत करत कवि गगा की ज्योतिजल कणो से समन्वित धारा को हार कहने लगा है। हम यह नही कहत कि निरालाकाव्य म लक्षणा और व्यजना मूलक शब्दशक्तिया का अभाव है परतु उनके काव्य के अभिव्यजनापक्ष की प्रमुख विशेषता अभिधामूलक शब्दशक्ति और उसके परिवश म निर्मित अलकार हैं। रूप और चित्रमूलक वस्तुमुखी काव्य की भाव और रसभूमिया इसी पद्धति से उद्घाटित हो सकती हैं।

ऊपर हमने निराला की सक्षेपीकरण की प्रवत्ति का उल्लेख किया है। वास्तव म कम से कम शब्दो म अधिक से अधिक अर्थों का सन्निवेश श्रेष्ठ काव्य का सवस्वीकृत लक्षण है। इस दिशा म निराला की सलग्नता इतनी अधिक रही है कि उ होन अपनी भाषा म सामासिक पदावली का भी प्रयाग किया है। सामान्य रूप से कहा जाता है कि हिंदी की प्रकृति सश्लेषणात्मक नही है, परतु निराला की सामासिकता बहुत कम स्थानो म दुरूह हुई है। अधिकतर उनके समास प्रसादगुण सपन्न है।

किसलय वसना नव वय लतिका
मिली मधुर प्रिय उर तरु पतिका
मधुप व द बदी, पिक स्वर नभ सरसाया।

यहा भाषा की समासयाजना कितनी प्रीतिकर और प्रसन्न है, यह बताने की आवश्यकता नहीं। पूरे चित्र को प्रस्तुत करन मे, परिणय के पूरे व्यापार को रूपायित करने म, कितन कम शब्दो का प्रयोग किया गया है। निराला की यह कला हिंदी की शक्ति का प्रतिमान है।

समासो की इस योजना म भी निराला को शब्दा की अभिधाशक्ति को प्रधानता देनी पडी है। सामासिक पदावली म प्राय लक्षणा और व्यजना व्यापारो के लिए अवकाश नहीं रहता। यद्यपि छायावादी या स्वच्छदतावादी कान्यशब्दो के अथप्रसार के लिए—जो लक्षणा और व्यजना का काय है—प्रसिद्ध है (वास्तव मे

ये दोना शब्दशक्तिया शब्दो के अथप्रसार की ही प्रतिनिधि है) परतु निराला की अपनी विशेषता शब्दा के तथ्यमूलक अर्थों के नियोजन म है। इसलिए अपनी भावात्मक रचनाआ म लक्षणा और व्यजना की प्रक्रिया का प्रयोग करत हुए भी निराला अपन वणनात्मक और चित्रणात्मक प्रकरणा म अभिधा की विशिष्टता ही प्रदर्शित करत हैं। निराला की समासयोजना के सबध म एक बात और कह कर हम इस प्रकरण को समाप्त करेंगे। सस्कत व्याकरणसम्मत समासयोजना की उपेक्षा कर निराला न कई अवसरो पर स्वतत्र समासयोजना का निर्माण किया है। उदाहरण के लिए

> *गध व्याकुल कूल उर सर*
> लहर कच, कर कमल मुख पर
> हप अलि हर स्पश शर सर
> गूज बारम्बार।

प्रथम पक्ति म कवि हृदयरूपी सरोवर के कूल को गध स व्याकुल बताता है। परतु उसन 'उर सर कूल न लिखकर 'कूल उर सर' लिखा है। यह सस्कत की समास-पद्धति नही है। *निराला न अपनी नई पद्धति का प्रयाग 'कूल' को प्रमुखता देन के* लिए किया है। यदि इस समास को तोडकर गध व्याकुल कूल और 'उर सर' अलग अलग कर दिए जाए, तो भी अथव्यक्ति मे कोई कठिनाई न होगी। इस प्रकार अथ-गौरव के लिए अथवा पदावली को अधिक लययुक्त बनान के लिए निराला न सस्कृत समानपद्धति की जहा कही अपेक्षा की है उ ह हम हिंदी की दष्टि से सदोष नही कह सकत। केशव और घनान द जस पुराने कविया न भी इसी प्रकार की छूट बरती है।

काव्यशिल्प

निराला के का यरूपो की चर्चा करत हुए हम उनके काव्यशिल्प पर प्रसगत कुछ विचार कर चुके हैं। प्रगीता म निराला का शिल्प गतिशील आवत्तिहीन और समग्र है यह हम उस प्रसग म कह चुके हैं। गतिशील शिल्प से हमारा आशय यह है कि निराला क विविध ब ध आत्मसम्पूण नही हात, वरन सब बध मिलकर पूणता की सष्टि करते हैं। इस प्रकार की शिल्पयोजना इस बात का प्रमाण देती है कि निराला पूरे गीत या प्रगीत को एक गतिशील चित्र क रूप म अकित करत हैं जिसस पाठक का समान कल्पनाओ क माध्यम स नहीं गुजरना पडता वरन प्रगीत के समाप्त होने पर एक परिपूणता का प्रत्यय मिलता है। गीता और प्रगीता म निराला की अतिम पक्तिया एक दाशनिक उपसहार देती हैं। जो भावोत्थान मे सहायक होती हैं। वे लौकिक सौंदय को भी असामा य दीप्ति

देती है। उदाहरण के लिए 'तरगो के प्रति' कविता म तरगा द्वारा 'अन त का नीला आचल हिला हिलाकर' आना और अपनी समस्त सौदयभगिमाए दिखाकर उसी असीम म मिल जाना कविता के आदि और अत की सुदर शिल्पयोजना कही जाएगी। तरगें भी विविध रूपा म तथा विविध भावो का आश्रय लेकर चित्रित की गई है। व न केवल परिहासप्रिय हैं वरन क्रियाशील भी हैं। करुणभावना की वाहिका भी वे है। उनके साथ न केवल क्रीडा कौतुक के तरल भाव हैं, वरन 'दग्धचिता के असख्य हाहाकार' भी है। निराला की यह विविध भावोन्मुखता उनके रचनाशिल्प को भी सुदर रूप से प्रभावित करती है, और उसे वाछित विस्तार और सगति देती है।

शृ गारिक रचनाओ म निराला का का यशिल्प कितना मुखर और निद्वद्व है, इसकी सूचना जूही की कली' कविता म सहज ही मिल जाती है। 'जूही की कली' का काव्यशिल्प वेगवान तो है ही, वह नाना प्राकृतिक मुद्राओ और क्रियाओ का एक सुदर सयोजन या समुच्चय भी प्रस्तुत करता है। जूही की कली की वासती निशा मे 'स्नेह स्वप्न मग्न' आखें ब द करना, उसके प्रेमी पवन का, जिसे मलयानिल कहत है, दूर दश म रहना, सहसा उसकी स्मृति प्रिया की ओर उ मुख होना और उसका अति त्वरित गति से प्रयाण, एक उच्छल शिल्प का उदाहरण है। विशेषत 'जिसे कहते हैं मलयानिल' पक्ति कविता के शिल्प को एक अतिरिक्त सजीवता प्रदान करती है क्याकि पवन के स्पष्टीकरण के लिए 'जिसे कहते हैं मलयानिल वाक्याश का प्रयोग शिल्प की प्रगल्भता का ही परिचायक है।

इसके पश्चात नायक का कामिनी के पास उपस्थित होना और फिर भी कामिनी का न जगना, 'चूक क्षमा न मागना' कविता के शिल्प को आगामी अज्ञात सभावना की स्थिति पर ले जाता है। अतत नायक द्वारा नायिका के सुदर सुकुमार देह को झकझोर देना और युवती का चौंककर जग पडना पुन एक अज्ञात सभावना की सृष्टि करता है।

नायक का 'निर्दय' कहना और उसकी निपट निठुराई का उल्लेख करना काव्यशिल्प का वह उत्तालन है जो स्वस्थ शृ गार के कवि द्वारा ही व्यवहृत हो सकता है। वास्तव म न तो नायक निदय है और न उसने कोई नृशसता की है। इस रूप म चित्रित करना काव्यशिल्प म एक सुखद वचित्र्य लाता है। नम्रमुखी का प्रियतम के आगमन पर हर्षित होना और खिल पडना रचनाशिल्प को उचित परिसमाप्ति देत हैं। हम कह सकते हैं कि 'जूही की कली का काव्यशिल्प क्रिया बाहुल्य के साथ चित्रो की स्वच्छद गतिशीलता और भावना के आरोह-अवरोह का नाटकीय सौदय लिए हुए है।

वीर रस की रचनाआ म निराला का का यशिल्प अधिक प्रसरणशील हा

गया है। हम 'महाराज शिवा के पत्र' को देखें अथवा 'जागो फिर एक बार'। सर्वत्र दूर दूर तक वीर भाव को जगाती हुई निराला की पक्तिया वहा विराम लेती हैं जहा पाठक एक लबे चित्र का आकलन कर लेने के पश्चात स्वय विराम चाहता है। इन पक्तियों का प्रसार उतना बडा भी नही हैं कि पाठक को चित्र की रेखाओ की विस्मति होने लगे। दूसर शब्दो म निराला के वीर रस के प्रगीता का शिल्प प्रसारकामी और सतुलित है। वीरभावना ही नही जहा जहा उदात्त की सष्टि भी कवि ने करनी चाही है वहा भी शिल्प मे इसी प्रकार की सप्राणता और आकार-गत प्रसार आ गया है। उदाहरण के लिए 'परिमल' की 'जागरण और 'कवि' शीषक कविताओ मे ऐसे शिल्प का ही परिचय मिलता है

> विश्व के दैन्य से दीन जब होता हृदय,
> सदयता मिलती कही भी नही
> स्वाथ का तार ही दीखता ससार म
> मत्यु की शृ खला ही
> ससति का सुष्ठु रूप
> छीर-पद अवनति ही
> चरम परिणाम जहा —
> काप उठत तब प्राण
> वायु से पत्र ज्या,
> हे महान ! सोचते हो दु ख मुक्ति
> शक्ति नव जीवन की।

वियोग शृ गार और करुण रस के प्रगीतो म निराला का शिल्प यद्यपि भावो की आवत्ति का उपयोग करता है परतु उन आवृत्तियों मे भी नवीनता का प्रभाव व्याप्त रहता है। निराला की 'स्मृति' शीपक कविता इस शिल्प का सुदर उदाहरण है। इसक प्रत्यक अनुबध की अतिम दो पक्तिया का उद्धरण देकर हम उनके शिल्प की आवत्तिमूलकता क साथ उसकी नवीनता का परिचय देना चाहत है

> (1) सुप्त मरे अतीत के गान
> सुना प्रिय हर लती हो ध्यान।
> (2) वायु व्याकुल शतदल सा हाय
> विकल रह जाता हूँ निरुपाय।
> (3) आज निद्रित अतीत म वद
> ताल वह गति वह लय वह छद।

(4) वही चुंबन की प्रथम हिलोर
स्वप्न स्मृति, दूर, अतीत अछोर।

चार अनुबधो की ये पूरक पक्तिया प्राय एक ही भाव की पुनरचना करती हैं, परतु इनम किसी प्रकार की यात्रिक आवत्ति नही है न केवल रूप की भिन्नता वरन तुका की भी भिन्नता लाकर निराला ने आवत्तिमूलक शिल्प को भी नवीनता दी है।

निराला के प्रगीतशिल्प की कुछ विशेषताए उदघाटित करने के पश्चात हम उनके कतिपय दीघ प्रगीतो और आख्यानक रचनाओ क शिल्प पर भी दृष्टि डालना चाहेंगे। निराला के दीघ प्रगीत या तो यमुना के प्रति' कविता की भाति कल्पनाचित्रो क विस्तार पर आश्रित है या सरोजस्मति जसी कविता के घटना सूत्रो का आधार लेकर चले है। कुछ कोरे वणनात्मक दीघ प्रगीत भी ह, जैसे *मवा आरभ'। परतु यह अतिम रचना निराला के काव्यशिल्प की श्रेष्ठ प्रतिनिधि नही है।* 'विनम सहस्राब्दी' पाडित्य और अभिनता विशिष्ट दीघ प्रगीत की है। इसका शिल्प ऐतिहासिक अनुक्रम की रक्षा करता हुआ मार्मिक उद्धरणो से सवलित है। सग्रह' और 'त्याग' की कला यहा अपने उत्कष मे दिखाई दती है। देवी सरस्वती' दीघ प्रगीत ऋतुवणन की एक नई प्रणाली का प्रयोग करता है, जिसके विविध अनुबधो म वर्षा से लेकर ग्रीष्म तक का वणन करते हुए निराला सास्कृतिक औदात्य के साथ प्राकृतिक सौदय के सग्रथित चित्रो को प्रस्तुत कर सके हैं। उदात्त और सुदर का यह समन्वय इस रचना क काव्यशिल्प की एक उल्लेखनीय विशेपता है।

परतु 'सरोजस्मति' का सा गभीर के साथ कुरूप और व्यगात्मक वणनो को अनुस्यूत करने वाला शिल्प कदाचित निराला के शिल्पपक्ष की सवश्रेष्ठ उपलब्धि है। कविता के आरभ और अत म दिवगता पुत्री के प्रति अपनी उदात्त और करुण—मार्मिक भावनाओ को व्यक्त करन के साथ साथ कविता के मध्य भाग मे कवि ने विस्तार क साथ अपन जीवन की उन विपमताओ का भी स्मरण किया है जो पुत्री के प्रसग मे उसके स्मतिपटल पर आई है। इससे भी आगे बढकर उन्हान सामाजिक जीवन की उन कुरूपताओ को भी अकित किया है, और उनके प्रति व्यग्य और विगहणा के भाव व्यक्त किए है, जो सामान्यत गभीर काव्य की विशेपता नही होते। परतु 'सराजस्मति' म भावो के ये विविध स्तर एसे सहज शिल्प म सयोजित हो गए है, जिन्ह देखकर आश्चय और विस्मय होता है। विविध भावस्तरो को सयोजित और एकान्वित करन वाला यह शिल्प हिंदी का य म अप्रतिम है। इस दीघ प्रगीत का आकृतिगत शिल्प भी उतना ही सुगठित और सु यवस्थित है, जितना उसका भाव सयाजनात्मक शिल्प ह।

गया है। हम 'महाराज शिवा के पत्र' को देखें अथवा 'जागो फिर एक बार'। सवत्र दूर दूर तक वीर भाव को जगाती हुई निराला की पक्तिया वहा विराम लेती हैं जहा पाठक एक लबे चित्र का आकलन कर लेने के पश्चात स्वय विराम चाहता है। इन पक्तियां का प्रसार उतना बडा भी नही हैं कि पाठक को चित्र की रेखाओ की विस्मति होन लगे। दूसर शब्दा म निराला के वीर रस क प्रगीता का शिल्प प्रसारकामी और सतुलित है। वीरभावना ही नही जहा जहा उदात्त की सप्टि भी कवि न करनी चाही है वहा भी शिल्प म इसी प्रकार की सप्राणता और आकार-गत प्रसार आ गया है। उदाहरण के लिए, 'परिमल' की 'जागरण और 'कवि' शीषक कविताओ म ऐस शिल्प का ही परिचय मिलता है

विश्व के दैन्य से दीन जब होता हृदय,
सदयता मिलती कही भी नही,
स्वाथ का तार ही दीखता ससार म
मत्यु की शृ खला ही
ससति का सुष्ठु रूप,
घोर-पद अवनति ही
चरम परिणाम जहा,—
काप उठते तब प्राण
वायु से पत्र ज्यों,
हे महान ! सोचत हो दु ख मुक्ति
शक्ति नव जीवन की।

वियोग शृ गार और करुण रस क प्रगीतो म निराला का शिल्प यद्यपि भावो की आवत्ति का उपयोग करता है, परतु उन आवत्तियां म भी नवीनता का प्रभाव व्याप्त रहता है। निराला की स्मति शीषक कविता इस शिल्प का सुदर उदाहरण है। इसके प्रत्यक अनुवध की अतिम दो पक्तियो का उद्धरण देकर हम उनके शिल्प की आवत्तिमूलकता क साथ उसकी नवीनता का परिचय देना चाहते है

(1) सुप्त मेरे अतीत के गान
सुना, प्रिय हर लेती हो ध्यान।
(2) वायु व्याकुल शतदल सा हाय
विकल रह जाता हूँ निरुपाय।
(3) आज निद्रित अतीत म वद
ताल वह, गति वह लय वह छद।

(4) वही चुवन की प्रथम हिलोर
स्वप्न स्मति, दूर, अतीत, अछोर।

चार अनुवधो की ये पूरक पक्तिया प्राय एक ही भाव की पुनरचना करती हैं, परतु इनम किसी प्रकार की यानिक आवत्ति नही है, न केवल रूप की भिन्नता वरन तुको की भी भिन्नता लाकर निराला न आवत्तिमूलक शिल्प को भी नवीनता दी है।

निराला के प्रगीतशिल्प की कुछ विशेषताए उदघाटित करन के पश्चात हम उनके कतिपय दीघ प्रगीता और आख्यानक रचनाआ के शिल्प पर भी दृष्टि डालना चाहगे। निराला के दीघ प्रगीत या तो यमुना के प्रति' कविता की भाति कल्पनाचित्रो के विस्तार पर आश्रित है, या सरोजस्मति' जसी कविता के घटना सूत्रो का आधार लेकर चले हैं। कुछ कोरे वणनात्मक दीघ प्रगीत भी है, जसे सेवा आरभ। परतु यह अतिम रचना निराला के काव्यशिल्प की श्रेष्ठ प्रतिनिधि नही है। 'विश्रम सहस्राब्दी' पाडित्य और अभिज्ञता विशिष्ट दीघ प्रगीत की है। इसका शिल्प ऐतिहासिक अनुक्रम की रक्षा करता हुआ मार्मिक उद्धरणो से सवलित है। 'सग्रह और 'त्याग' की कला यहा अपन उत्कप मे दिखाइ दती है। देवी सरस्वती' दीघ प्रगीत ऋतुवणन की एक नई प्रणाली का प्रयोग करता है, जिसके विविध अनुवधो मे वर्षा स लेकर ग्रीष्म तक का वणन करते हुए निराला सास्कृतिक औदात्य के साथ प्राकृतिक सौदय के सग्रथित चित्रो को प्रस्तुत कर सके हैं। उदात्त और सुदर का यह समन्वय इस रचना के काव्यशिल्प की एक उल्लेखनीय विशेपता है।

परतु 'सरोजस्मति' का सा गभीर' के साथ 'कुरूप' और व्यगात्मक वणनो को अनुस्यूत करन वाला शिल्प कदाचित निराला के शिल्पपक्ष की सवश्रेष्ठ उपलब्धि है। कविता क आरभ और अत म दिवगता पुत्री के प्रति अपनी उदात्त और करुण—मार्मिक भावनाआ को व्यक्त करने के साथ साथ कविता के मध्य भाग म कवि न विस्तार के साथ अपन जीवन की उन विपमताआ का भी स्मरण किया है जो पुत्री के प्रसग म उसके स्मतिपटल पर आई है। इसम भी आगे वढकर उ होन सामाजिक जीवन की उन कुरूपताओ को भी अकित किया है, और उनके प्रति व्यग्य और विगहणा के भाव व्यक्त किए है, जो सामान्यत गभीर काव्य की विशेपता नही होते। परतु सरोजस्मति' म भावा के ये विविध स्तर ऐसे सहज शिल्प म सयोजित हो गए हैं, जिन्ह दखकर आश्चय और विस्मय होता है। विविध भावस्तरा को सयोजित और एकान्वित करन वाला यह शिल्प हिंदी काव्य म अप्रतिम है। इस दीघ प्रगीत का आन्तरिक शिल्प भी उतना ही सुगठित और सुव्यवस्थित है, जितना उसका भाव सयोजनात्मक शिल्प ह।

लघु आख्यान 'राम की शक्तिपूजा'

दीर्घ प्रगीत और लघु आख्यान के बीच की विभाजक रेखा प्राय सूक्ष्म हुआ करती है। दोनो का अतर पहचानने के लिए हम प्रगीत और आख्यान शब्दो का सहारा लेना पडता है। यह अतर बहुत कुछ वैसा ही है जैसा लबी कहानी और लघु उपन्यास का अतर। कभी कभी कहानी उपन्यास से आकार मे बडी भी हो जाती है पर वह उपन्यास का स्थानापन्न नही हो सकती। प्रगीत मे, चाहे वह दीर्घ ही क्यो न हो कवि की चेतना एक क्षण पर सघन रूप से केंद्रित रहती है और उसी क्षण की प्रतिक्रिया प्रस्तुत करती है, जब कि आख्यान मे काल की गति और उसका विस्तार द्योतित होता है। प्रगीत मे इसीलिए अतरग अन्विति का सधान किया जाता है जबकि आख्यान मे वहिरग अन्विति अपेक्षित होती है। चाहे कितना भी लघु आख्यान हो उसका एक आरभ, मध्य और अत ढूढा और पाया जा सकता है। परतु प्रगीत के लिए यह कालरेखा आवश्यक या अनिवार्य नही होती।

राम की शक्तिपूजा' वस्तुत एक गाथा काव्य है जिसे निराला ने गाथा की भूमि से उठाकर महाकाव्योचित गाभीर्य देना चाहा है। गाथाकाव्य मे लोक विश्वासो की प्रचुरता अतिरजना के चमत्कार और अलौकिकता की योजना रहा करती है। ये सभी योजनाए 'राम की शक्तिपूजा मे भी है परतु इसके साथ ही शक्तिपूजा' को असाधारण गाभीर्य देने की चेष्टा भी की गई है। महाकाव्य का औदात्य और सतुलन तथा गाथा की अतिरजना और असभाव्यता अनुरूप तत्व नही है। अत जब निराला गाथा की लोकसामान्य भाव भूमिका से महाकाव्य की उन्नततर और असामान्य भूमि पर प्रवेश करते है तो एक मौलिक विरोधाभास अनायास आनीत होता है। शक्तिपूजा' का शिल्प इन दोनो के बीच किस प्रकार का सतुलन कर सका है, यह हम देखना होगा।

राम की शक्तिपूजा का मूल कथानक महाकाव्योचित औदात्य से सपन्न नही है। राम के मन मे आगामी युद्ध की विभीषिका उपस्थित है। वह रावण की अप्रतिहत शक्ति को देखकर चिंतित और निराश हैं। अपने सहयोगियो और साथियो की सलाह से वह शक्तिपूजा का अनुष्ठान करते हैं। इस पूजा के अनुक्रम मे उन्हे पुन हताश होना पडता है जबकि गणना मे एक पुष्प की कमी रह जाती है। इस त्रुटि का प्रक्षालन वे अपनी एक आख देकर करना चाहते हैं। इसी समय दुर्गा देवी प्रकट होती हैं और उन्हे विजय का आश्वासन देती हैं। इस कथानक मे महाकाव्य के लिए उपयोगी सामग्री नही है। परतु निराला इस कथानक के बल पर ही उदात्त की सृष्टि करते हैं। उनके पास एक मात्र सबल भाषा का है।

आरभ मे युद्ध का घटाटोप से भरा वणन प्रस्तुत कर निराला राम की चिंता का उल्लेख करत है। प्रकृति भी अधकारमयी बन गई है। राम को सहसा स्वयवर के समय की सीता का स्मरण होता है। वह क्षणभर का अभिनव उत्साह से उद्दीप्त हो उठते है। परतु दूसरे क्षण उन्ह युद्ध के समय अट्टहास करते हुए रावण की स्मृति हो आती है और उनकी आखो से दो बूद आसू गिर पडते है। यह प्रसग भी राम के मानसिक सघष का सूचक अधिक है महाकाव्य के औदात्य का विधायक कम।

दूसरे प्रकरण मे हम हनुमान का क्षुब्ध और उत्तेजित स्वरूप देखत हैं जो राम के आसुओ स उद्विग्न होकर सष्टि का नाश करन के निमित्त आकाश की ओर उठत हैं। परतु क्षणभर म माता की फटकार सुनकर पुन पृथ्वी पर उतर आत है। हनुमान के इस आस्फालन और अवतरण म केवल एक अलौकिक चमत्कार है, जो गाथाकाव्य के लिए तो उपयुक्त है परतु महाकाव्य की गरिमा का उन्नायक नही।

तीसरे प्रकरण म साथियो और सहायको द्वारा शक्तिपूजा का सुझाव पाकर राम उस ओर प्रवत्त होते है। यह शक्तिपूजा मूलत एक धार्मिक विश्वास का आधार लेकर चली है, यद्यपि निराला न इसमे योगसाधनो क तत्वो को जोडकर इसे उच्चतर मानसिक भूमिका प्रदान की है। पूजा के इस प्रकार का जोडा जाना अवश्य ही एक बौद्धिक उपक्रम है, जो महाकाव्य के सभार के उपयुक्त है।

अतिम प्रकरण म पूजा की परिणति के पूव एक पुष्प का कम पडना और उसके स्थान पर 'राजीवलोचन' राम का अपनी एक आख निकाल कर चढान को उद्यत होना एक नाटकीयता और भावनात्मक उत्कप की सृष्टि करता है। परतु क्या हम इस महाकाव्योचित भावभूमिका कह सकते हैं? शायद नही। इसी के पश्चात देवी का प्रकट होना और आशीर्वाद देना कथा का एक विस्मयकारक उपसहार है।

विशुद्ध शिल्प की दृष्टि से इस हम गाथा का गरिमासपन्न शिल्प कह सकत हैं, क्योकि इसमे ऐसे प्रकरणो की योजना हुई है, जो विशुद्ध गाथा म नही रहा करते। इसम आश्चय, कौतूहल और विस्मयबोध के उपकरण तो मौजूद है, जो इस गाथा की मूल विशेषताओ के समीप ले जाते है, परतु साथ ही इसम भाषा का वह सौष्ठव और छन्द की वह गभीर भूमिका भी उपलब्ध है, जो इस महाकाव्योचित सभार देती है। शिल्प के आधार पर हमारा यह निष्कष अनुचित न होगा कि इसम एक मिश्र शिल्प की याजना की गई है जो दो विभिन्न प्रकृतियो के कथानको और काव्यरूपो को एक म मिलाने का प्रयत्न करती है। इस प्रयत्न म कवि को उतनी ही सफलता मिली है जितनी सभव थी। 'राम की शक्तिपूजा

का शिल्प एक भिन्न प्रकृति के कथानक को एक भिन्न भावभूमि पर ले जाने का उत्कृष्ट प्रयास है। यह प्रयास अपने मे ही इतना असाधारण बन गया है कि इसकी सफलता या असफलता हमारे विचार का विषय नही बन पाती।

'तुलसीदास' का उदात्त शिल्प

'राम की शक्तिपूजा' की भाति 'तुलसीदास' भी गाथाकाव्य के कथानक का आश्रय लेकर चला है और राम की शक्तिपूजा की भाति इसमे भी महाकाव्योचित गाभीर्य लाने का प्रयत्न किया गया है। इसका छन्दचयन 'शक्तिपूजा' से भी अधिक सुदीर्घ है। 'राम की शक्तिपूजा' मे कथानक की एक विकासरेखा मिलती है परतु 'तुलसी दास' एक बिंदु पर सस्थित है और वह बिंदुस्थल है तुलसीदास के आत्ममथन का।

आरभ के दस बधो मे तुलसीदास के आगमन के समय की भारतीय राजनीतिक स्थिति का उल्लेख किया गया है। भारत के हृदय पर मुसलमानो का शासन हो चुका है। भारत के विभिन्न प्रात आक्रात और पददलित हो चुके है। पजाब, कोशल, बिहार बुदेलखड और राजस्थान सभी इस्लामी सभ्यता से विजित हो गए है। ऊपर ऊपर बडी गतिशीलता है पर अतरग मे सारा देश निष्क्रिय और निष्प्राण हो चुका है।

इस भूमिका के पश्चात 'यमुना के तट पर समृद्धिशाली नगर राजापुर मे सस्थित शास्त्रो का अध्ययन कर अपनी प्रतिभा को पहचानने वाले तुलसीदास के युवक रूप का चित्रण है। एक दिन तुलसीदास मित्रो के साथ चित्रकूट की यात्रा पर निकल पडे हैं। यद्यपि यौवन के उल्लास मे वे गिरिशोभा से मुग्ध होते हैं प्रकृति मानो उन्हें पाकर खिल पडती है, परतु सकेत से वह अपनी विवशता भी प्रकट करती है। यहा एक नए अहिल्योद्धार की आवश्यकता है जिसे तुलसीदास ही सपन्न कर सकते हैं। तुलसीदास ध्यानस्थ होने है उनका मन ऊर्ध्वगामी होता है। परतु इस स्थिति मे भी भारत की दशा अधकार बनकर व्याप्त रहती है। तुलसीदास सोचते है कि यह देश हतबल हो चुका है। वर्णाश्रम धर्म के सभी स्तभ टूट चुके हैं। विशेषकर शूद्रो की स्थिति पशुतुल्य हो चुकी है। तुलसीदास एक ज्योतिर्लोक की कल्पना करते हैं जिसमे प्रतिष्ठित रामचद्र का चरित्र भारतीय जीवन को मुक्ति का सदेश दे सकता है। यह सकल्प मन मे आते ही तुलसीदास को अपनी प्रेयसी रत्नावली का स्मरण हो आया। क्षणभर मे वह छवि अदृश्य हो गई और तुलसीदास का मन ऊर्ध्वभूमिका से उतर कर समतल पर आया।

तुलसीदास पुन अपने मित्रो के साथ चित्रकूट की श्यामली देखते देखते नीचे उतरे। उन्होने वहा के सभी तीर्थों का दर्शन किया और घर लौटे। इसके पश्चात निराला ने तुलसीदास के जीवन मे रत्नावली के महत्व की विस्तृत चर्चा

की है और जनश्रुति के फैले हुए आख्यान का सयाजित किया है। यहा एसा प्रतीत हाता है कि कवि स्वय अपनी पत्नी की स्मृति को साकार करता है। जिस प्रकार का उद्दाम प्रेम तुलसीदास का रत्नावली क प्रति था, उसी का प्रतिरूप निराला अपनी पत्नी के प्रति देखत ह। जिस प्रकार पत्नी के माध्यम से तुलसीदास को अनुपम ज्ञान मिला था उसी प्रकार निराला भी अपने लिए मानत है। इस सपूण प्रसग म तुलसी और रत्नावली तथा निराला और मनोहरादवी की एक विलक्षण समानातरता दिखाई देती है।

पत्नी क कटु वाक्या स तुलसीदास के सस्कार जग पडत है। कामवासना भस्मीभूत हो जाती है। अब वह पत्नी क स्थान पर शारदा (सरस्वती) के दशन करते हैं। भारती की दृष्टि से आकृष्ट हाकर कवि भावजगत की अशेष उचाइया पर पहुचता है। उसे देशकाल का मायावी ज्ञान नही रह जाता। वह विशुद्ध आनद म लीन रहता है। थोडी देर म फिर देहात्मबोध होता है। परन्तु इस बार तुलसीदास अधिक दृढनिष्ठ हैं। वह उस समर के लिए तैयार हो गए हैं, जा जड के विरुद्ध चेतन का हान वाला है। अब कवि अपन आत्मरूप म जागृत हो चुका है। सारी सासारिक रागिनिया सुप्त हा चुकी है। अब कवि का गीत फूटनेवाला है। उसन तत्काल गृहजीवन को छोड दिया और ससार के प्रति सदा का आखे मूद ली। उसक हृदय म महिमामय राम की मूर्ति का प्रतिष्ठापन हो चुका था। प्राची म नए प्रकाश की किरणें उद्भासित होने लगी थी।

ऊपर के विवरण स यह स्पष्ट हो जाता है कि इस आख्यानक रचना म आख्यान नाममात्र को ही है। जो कुछ है, वह निराला के माध्यम से तुलसीदास का रेखाचित्र है और वह रेखाचित्र भी द्वद्व की स्थिति से ऊपर उठकर अद्वत की स्थिति म पहुचने का है। एक दृष्टि इसे हम मानसिक ऊर्ध्वगमन के विवरण का काव्य भी कह सकते हैं। प्रसगवश कवि न काव्य और दशन की स्वतत्र भूमिकाओ का भी उल्लेख किया है और इस आधार पर उदात्त के दो स्वर निर्धारित किए हैं।

इसे देखने पर यह भी ज्ञात होता है कि इसका गाथा भाग बहुत कुछ क्षीण और रूपातरित हो गया है और तुलसीदास के व्यक्तित्व का चित्र ही प्रमुख होकर उभरा है। इस दृष्टि से इस रचना को जो महाकाव्योचित सभार प्राप्त हुआ है, वह अयथास्थान नही कहा जा सकता। व्यक्तित्व को रूपायित करने के लिए जो बदलती हुई पृष्ठभूमिया दी गई हैं, वह काव्य म गतिशीलता का आभास देती है।

'पचवटी प्रसग' का खुला रगमच

निराला के आरभिक वय की यह रचना उनके मुक्तछद का प्रमुख प्रयोग है। मुक्त-

छद का निर्माण निराला न लोकनाटय की प्रेरणा से ही किया था और उस प्रेरणा का प्रतिफलन हम इस कृति मे दखत हैं। कुछ समीक्षका ने पचवटी प्रसग' को साहित्यिक काव्यनाटक की भूमि पर देखन परखन का प्रयत्न किया है और अतत वह इस निष्कप पर पहुचे हैं कि इसम नाटकत्व कम और काव्यत्व अधिक है। एसे समीक्षका को यदि यह ज्ञात होता कि 'पचवटी प्रसग' का निर्माण लोकनाटय की शली पर किया गया है तो उ ह इस प्रकार क ऊहापाह म पडन की आवश्य कता न हाती। वास्तव म लाकनाटय का प्रमुख आधार काव्यत्व ही होता है।

शिल्प के स्तर पर पचवटी प्रसग' पाच प्रकारणा मे विभाजित लव सवादो का एक सुदर सग्रह है, जिनम से कुछ ता आत्मसवाद या आत्मसलाप मात्र है। पहले प्रकरण म सीता अयोध्या की तुलना म पचवटी की प्रशसा करती हैं। प्रियतम के निरतर समीप रहन का जो सुख यहा प्राप्त है, प्रकृति परिवेश म मुक्त क्रीडा करन वाली जो भूमिका यहा उपलब्ध है, वह अयाध्या मे कहा ? राम सीता के वक्तव्य का समथन करत हैं और प्रेममहिमा का वणन करत हैं। प्रेम का पयोधि नि सीम भूमि पर ही उमडना है। उसकी महोर्मिमाला सासारिक मनावेगा को बहा देती ह। कायरा के कलेजे धडकने लगत हैं। काई परम साहसी ही इस समुद्र म तरकर प्रेमामत का पान कर सकता है।

इसके पश्चात सीता सक्षेप म अनुसूया के पवित्र प्रेम की चर्चा करती हैं और राम लक्ष्मण क सवाभाव की प्रशसा करत है।

द्वितीय प्रकरण म लक्ष्मण का आत्मसलाप है। उन्होन माता (सीता) के लिए सवा का आदश ग्रहण किया है। वह माता के चरणामत सागर म वहते रहना चाहते हैं। यहा आकर सवा और प्रेम दोना ही तत्व एक हो जात हैं। दोना म तुच्छ यासनाआ का विसजन होना है। सवाभाव म द्वत की स्थिति है। परतु यह द्वैत भी लक्ष्मण को प्रिय है। वह आनद म मिल जान की अपेक्षा आनद पान को श्रेष्ठ मानत हैं। वास्तव म यह द्वत भी अद्वत का ही समरूप है।

तीसरे प्रकरण म शूपणखा आत्मगव स आपूरित होकर अपन रूप की प्रशसा करती है। सहसा उस राम, सीता और लक्ष्मण दिखाई पडत हैं।

चतुथ प्रकरण म राम, लक्ष्मण और सीता क बीच दाशनिक चर्चा चलती है। प्रलय, व्यष्टि, समष्टि, सष्टि क रहस्य खोल जात हैं। भक्तियोग, कम और ज्ञान का एकत्व प्रतिपादित किया जाता है। इस सपूण विचारणा म निराला की स्वच्छ तावादी भावधारा और नव अद्वतवादी चितना का मणिकाचन योग हो सका है। इसी समय शूपणखा आती दिखाई दती है।

पाचवे प्रकरण म शूपणखा राम क सौन्दय पर मुग्ध होती दिखाई दता है। परन्तु यहा भी वह अपन सौन्दय का भूलती नहीं। वह राम का प्रलोभन दती है कि

वह उन्ह स्वग के सिंहासन पर बठा लेगी और पारिजात पुष्प के नीचे बठकर सुधा-भरी आसावरी सुनाएगी। राम उसे लक्ष्मण की ओर टालते हैं। शूपणखा लक्ष्मण का भी वरण करने को तैयार हो जाती है। जब लक्ष्मण भी उसे डाटत हैं तब शूपणखा राम पर अपना आक्रोश प्रकट करती है और उन्ह अरसिक बताती है। अत मे उसके नाक-कान काटे जाते हैं।

लोकनाटय के स्तर पर 'पचवटी प्रसग' म एक परिपूणता है और वह नाटकीय परिपूणता भी है। आरभ म सीता और राम के सुखद प्रेम की पाकिया दिखाकर दोनो के चरित्रा को उदात्त भूमि पर प्रस्तुत किया गया है। लक्ष्मण की चरित्ररेखा भावुकतापूण किंतु निष्ठावती अकित की गई है। मध्य के प्रकरण का चरित्र यौवन के उल्लास से परिपूण मानवीय भूमिका पर चित्रित किया गया है। इस प्रकार उदात्त और सामान्य के द्वद्व की स्थिति नियोजित कर कवि ने नाटकीयता की सष्टि की है। शिल्प की आनुपातिक दष्टि मे भी यह रचना निर्दोष है।

कल्पनाछवियां

यों तो काव्य मात्र ही कल्पना का एक अजस्र व्यापार है, परतु यहा हम कल्पना द्वारा प्रस्तुत उन रूपचित्रो को ले रहे हैं जो काव्य म नियोजित होते है और कविता की सौंदयवद्धि करते हैं। काव्य मे प्रस्तुत और अप्रस्तुत के दो पक्ष भारतीय विचारको ने निर्धारित किए हैं। इनम से अप्रस्तुत या कल्पित विधान से ही यहा हमारा सबध है। भारतीय विचारका ने अलकार' और 'अलकाय के शब्दा द्वारा भी काव्य के दो आधारा को स्वीकार किया है। यहा हमारी दष्टि अलकाय पर नही है, अलकार पर है।

निराला की कल्पनायोजना काव्य के भाव या वस्तुतत्व स नि सत हुई है, यह हम अयत्र कह चुके है। दूसरे शब्दा मे निराला की कल्पनायोजना स्वतत्र या अनियत्रित नही है। कल्पना के अतिरेक से कभी कभी केवल चमत्कार की सष्टि हाती है और कभी सौदय के विस्मयकारक चित्रमात्र रचे जाते हैं। ऐसे मुक्त सौंदयचित्र आमोदकारक हो सकत हैं परतु जब तक वे किसी भाव या सवेदन का आधार नही लेते तब तक उनम सम्यक प्रभावशालिता और समरसता नही आती। निराला की कल्पनासष्टि म सौंदर्योमीलन की अपेक्षा सवेदनात्मक गुण की प्रमुखता पाई जाती है। इस भूमिका पर उनकी तुलना छायावाद के दूसरे कवि सुमित्रानदन पत से की जा सकती है, जिनमे कल्पना के सौदर्योमीलन पक्ष की प्रमुखता है। निराला की कल्पनाए भावसवेदनो की सहचरी हैं।

कल्पना की एकतानता के अतिरिक्त निराला मे विराट चित्रा के सृजन की शक्ति भी असाधारण है। उनकी कविता म उदात्त तत्व की प्रमुखता इन्ही विराट

कल्पनाओं के माध्यम से नियोजित हुई है।

मिलन मुखर तट की रागिनियों का निर्भय गुंजार
शंकाकुल कोमल मुख पर व्याकुलता का संचार
उस असीम में ले जाओ,
मुझे न कुछ तुम दे जाओ। (तरंगों के प्रति)

वह कली सदा को चली गई दुनिया से
पर सौरभ से है पूरित आज दिगंत। (उसकी स्मृति)

यह जीवन की प्रबल उमंग, जा रही है मिलन के लिए
पार कर सीमा, प्रियतम असीम के संग।

विराट कल्पनाओं का ऐसा समाहार हिंदी कविता में अन्यत्र विरल है। 'बादल राग' 'राम की शक्तिपूजा' आदि अनेक कविताओं में निराला ने विराट कल्पना का प्रयोग किया है।

यद्यपि यत्र तत्र ऐतिहासिक और पौराणिक संदर्भों से भी उनके अप्रस्तुत लिए गए हैं परंतु मुख्यतः निराला की कल्पनाछवियों का संग्रथन प्रकृति की भूमि से हुआ है। स्वच्छंदतावादी काव्य की यह प्राकृतिक विशेषता ध्यान देने योग्य है, बल्कि इसे हम अभिजात या क्लासिकल काव्य से उसकी एक विभेदक रेखा भी कह सकते हैं। अभिजात काव्य अपनी कल्पनाओं को शास्त्रों में चुनता है, जबकि स्वच्छंदतावादी काव्य उन्हें प्रकृति की भूमिका से ग्रहण करता है। प्रसाद जैसे बहुपठित और शास्त्रज्ञ कवि भी निगमागम को छोड़कर प्रकृति के क्षेत्र से अपनी उपमाओं और रूपकों का चयन करते हैं। इसीलिए शास्त्रज्ञ होते हुए भी वे मूलतः स्वच्छंदतावादी कवि कहे जाते हैं। निराला में यह स्थिति और भी स्पष्ट है। निराला की कल्पनाओं की भूमि कितनी स्वच्छंद और प्रगल्भ है इसके निदर्शन के लिए हम उनकी दो भिन्न प्रकृति की कविताओं को लेकर देखेंगे। उनमें से एक 'यमुना के प्रति' शीर्षक कविता है जिसमें कवि यमुना की वर्तमान श्रीहीनता को देखकर उस अतीत की भूमिका पर चला जाता है जब कृष्ण और गोपियों के विहार से यमुना की शोभा अशेष सौंदर्य से समन्वित हो गई थी। इस संपूर्ण कविता में निराला उस कल्पनालोक में चले गए हैं जो राधा-कृष्ण और समस्त गोपियों का नानाविध विहारस्थल है। इस प्रकार 'यमुना के प्रति' कविता अशेष कल्पनायोग से एक अभिनव आह्लाद, आमोद और आलोक की रंगस्थली बन जाती है। परंतु इस संपूर्ण कल्पना व्यापार में कृष्ण की किसी लीलाविशेष का आलेख नहीं है। वरन संपूर्ण कविता में प्राकृतिक सौंदर्यछवियों की कल्पना की गई है। यहां प्राकृतिक छवियों से हमारा आशय केवल

वाह्य प्रकृति से ही नही है वरन नारी और पुरुष की अत प्रकृति से भी है। बल्कि कह सकते है कि अतरग मानवीय प्रकृति के सौदय चित्र अधिक मात्रा में अभि व्यक्त हुए हैं।

दूसरी कविता 'कुकुरमुत्ता' है जो प्रकृत्या 'यमुना के प्रति' से एकदम भिन्न है। यहा निराला की कल्पना एक दूसरे प्रकार से काव्यसौदय का साधन बनी है। इसम निराला दूर दूर देशो की वस्तुआ का आकलन करते और साथ ही प्रत्यक्ष दशन या निरीक्षण शक्ति का अदभुत परिचय देत हैं। कुकुरमुत्ता कहता है

सामन ला कर मुझे बैंडा
देख कैंडा,
तीर से खीचा धनुष मैं राम का
काम का—
पडा कन्धे पर हूँ हल वलराम का।
सुबह का सूरज हूँ मैं ही,
चाद मैं ही शाम का।
कलजुगी मैं ढाल,
नाव का मैं तला नीचे और ऊपर पाल।
मैं ही डाडी से लगा पल्ला
सारी दुनिया तोलती गल्ला
मुझस मूछें मुझसे कल्ला,
मेरे लल्लू, मेरे लल्ला।

एक ही सास म चीन का छाता, भारत का छत्र, आज का पराशूट, विष्णु का सुदशन चक्र और फिर डमरू, वीणा, मदग, तवला, सितार तानपूरा और सुर-बहार का एक साथ वि यास और तीसरी ओर पिरामिड, रामेश्वर मीनाक्षी, भुव-नेश्वर और जग नाथ के मदिर, कुतुबमीनार, ताज आगरा और चुनार के किले, विक्टोरिया मेमोरियल, बगदाद की मस्जिद सेंट पीटस का गिरिजाघर, भारतीय, पारसी और गोथिक कला के सारे नमूने कुकुरमुत्ता को देखकर बने है। इन कल्पनाओ म जहा एक आर हास्यरस ध्वनित है, वही निराला के पाडित्य और परिचयक्षत्र के विस्तार का भी निदशन है। यहा निराला की कल्पना सग्रहात्मक और बुद्धिजीवी है।

इन विशिलष्ट कल्पनाछवियो के अतिरिक्त समानातर कल्पनायुग्मो के निर्माण म भी निराला प्रवीण हैं। उनकी तुम और मैं' शीपक कविता म इस प्रकार के कल्पनायुग्म भरे हुए है। विशेषता यह है कि इन युग्मा म किसी प्रकार की यात्रिकता नही है। ये कल्पनाए समस्त पूवग्रहा से रहित हैं तथा कही कही तो

अव्यवस्था का भी आभास दती है।

तुम प्रेममयी के कठहार,
म वणी कालनागिनी
तुम कर पल्लव भकृत सितार
मैं व्याकुल विरह रागिनी।

यहा प्रथम दो पक्तियो के उपमाना और द्वितीय दो पक्तियो के उपमानो म कोइ व्यक्त तारतम्य नही है, फिर भी एक स्वच्छदतावादी कवि की अतरग भावशृखला इह नियोजित किए हुए है।

अब तक हमने निराला की कल्पना के विश्लिष्ट स्वरूप की चर्चा की है। उसका एक सश्लिष्ट स्वरूप भी है जिसका एक सुदर उदाहरण उनकी स्मति शीषक कविता है

जटिल जीवन नद म तिर तिर
डूब जाती हो तुम चुपचाप
सतत द्रुतगतिमयी अयि फिर फिर
उमड करती हो प्रेमालाप
सुप्त मेरे अतीत के गान
सुना प्रिय हर लेती हा ध्यान।

यहा 'स्मति को नदी का रूपक दिया गया है जा छहा पक्तियो म व्याप्त है। अथवा

सरल शैशव श्री सुख-यौवन
केलि अलि कलिया की सुकुमार,
अशकित नयन अधर कम्पन
हरित-हृत पल्लव-नव शृङ्गार,
दिवस द्युति छवि निरलस अविकार,
विश्व की श्वसित छटा विस्तार।

यह अतीत के सुखमय दिना की शृगारिक कल्पना है और अपने मे एक सपूण चित्र का उपस्थापन करती है।

इनस भी आगे बढकर निराला की कल्पना का वभव उनके गीता म देखा जाता है। परतु वहा उनकी कल्पना वणन शली तक सीमित न रहकर वण्यवस्तु तक पहुच जाती है। वास्तव म यह क्षेत्र कवल अलकार का न होकर अलकाय का भी हो जाता है। यहा हम कल्पना के क्षेत्र म न रहकर बिबा के क्षेत्र म पहुच जात है।

बिंबविधान

यो तो आचाय शुक्ल न कल्पना के सश्लिष्ट और चित्रात्मक स्वरूप को बिंब कहा है, परतु कल्पना और बिंब मे यह मौलिक अतर भी है कि प्रथम का सबध रूप योजना से ही रहता है, जबकि बिंब वण्यवस्तु तक प्रसरित रहता है और उक्त वस्तु को सश्लिष्ट चित्र के रूप मे प्रस्तुत करता है। जबकि कल्पना (अप्रस्तुत योजना) वस्तु की अलकृति के लिए प्रयुक्त होती है, तब बिंब वस्तु की निर्मिति को भी प्रभावित करता है। आचाय शुक्ल न प्रकृतिवणन के सश्लिष्ट स्वरूपो को भी बिंबात्मक कहा है परतु प्रकृति ही क्या, काय की सपूण वण्य वस्तु भी बिंबात्मक हो सकती है। उदाहरण के लिए हम निराला की 'यामिनी जागी' शीपक प्रसिद्ध कविता को ले सकते हैं

प्रिय यामिनी जागी।
अलस पकज दृग अरुण मुख—
तरुण—अनुरागी।
खुले केश अशेप शाभा भर रहे,
पृष्ठ ग्रीवा—बाहु उर पर तर रहे,
बादलो म घिर अपर दिनकर रह
ज्योति की तन्वी, तडित—
द्युति न क्षमा मागी।
हेर उर पट फेर मुख के बाल,
लख चतुर्दिक चली मद मराल,
गेह म प्रिय स्नह की जयमाल,
वासना की मुक्ति मुक्ता
त्याग म तागी।

यहा हम अप्रस्तुत कल्पना और बिंब का एक असाधारण मिलन पाते है। 'अलस पकज-दृग अरुण मुख तरुण अनुरागी' एक रूपक है। इसी प्रकार 'बादलो म घिर अपर दिनकर रहे' भी अप्रस्तुत योजना है। परतु शेप सारी कविता बिंबात्मक है। केवल अतिम दो पक्तिया वासना की मुक्ति, मुक्ता त्याग म तागी' बिंब की सीमा के बाहर है। इस प्रकार वण्यवस्तु बिंब के रूप मे प्रस्तुत हुई है और उस बिंब को अलकृत करने के लिए अप्रस्तुत का प्रयोग हुआ है।

निराला की भिक्षुक', 'विधवा 'सध्यासुदरी' जसी रचनाओ मे वण्यवस्तु बिंब के रूप म प्रस्तुत की गई है। चित्रणप्रधान कवि होने के कारण निराला मे बिंबो के निर्माण की सशक्त प्रवृत्ति देखी जाती है।

पेट पीठ दोनो मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुटठी भर दाने को—भूख मिटान को
मुह फटी पुरानी धोली का फलाता
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।
अथवा
लघु टूटी हुई कुटी का मौन बढाकर
अति छिन्न हुए भीगे आचल म मन को—
दुख रूखे सूखे अधर त्रस्त चितवन को
वह दुनिया की नजरो से दूर बचाकर
रोती है अस्फुट स्वर म।

जैसी पक्तियो म वस्तुचित्रण बिंब शैली म किया गया है।

प्रतीक योजना

प्रतीक शब्द भारतीय साहित्य के लिए नया नही हैं, यद्यपि काव्य मे इसका प्रयोग कुछ नए अर्थों मे हो रहा है। वदिक उपासना प्रतीकोपासना कही जाती है, जिसम इद्र वरुण आदि देवता प्रतीक रूप म उपासना के विषय बने थे। अपने बाह्यरूप मे ये प्रकृति के विभिन्न रूपो के प्रतिनिधि थ, परतु अपने अत सत्व म ये परम तत्व से अभिन्न थे। इस प्रकार बाह्य और आभ्यतर के बीच जो रूप का भेद है, वह प्रतीक के द्वारा एकीकृत होता है। इस दृष्टि से प्रतीक वह प्रक्रिया है जो आभासित होने वाले दो या अनेक रूपो के बीच अतरग एकत्व स्थापित करती है। प्राचीन और मध्ययुगीन काव्य मे ऐसे शब्दो का प्रयोग होता था, जा अपना एक अभिधेय अथ रखने थे, परतु जिनके द्वारा किसी अन्य तत्व का आशय व्यक्त होता था। ऐसे शब्द कभी तो अनकार्थी हुआ करत थे अथवा उनपर दूसरा अथ आरोपित कर दिया जाता था। उदाहरण के लिए गो शब्द गायवाचक भी है और इद्रियवाचक भी। इस द्वयथकता का लाभ उठाकर सूरदास न 'माधव यह मेरी इक गाइ' शीषक पद म गाय का रूपक बाधकर इद्रियो के नियमन की प्राथना की है। यहा गाय शब्द प्रतीक रूप म व्यवहृत कहा जाएगा। प्रतीको की एक दूसरी पद्धति आरोपित पद्धति है। उदाहरण के लिए कबीरदास न सिंह के प्रतीक का प्रयोग माया के अर्थ मे किया है, कदाचित इसलिए कि सिंह और माया दोनो ही एक से विकराल हैं। इस प्रकार के प्रतीकाथ कभी कभी रूढ हो जाते हैं और तब काव्य मे आने पर उनम अथ की वह ताजगी नही रह जाती, जा अभीप्सित होती है। और भी अनक प्रक्रियाए हैं जिनके द्वारा कोई शब्द प्रतीक बना दिया जाता

है और तब वह एकाधिक अर्थों का वाहक बन जाता है। अधिकतर प्रतीक काव्य रहस्यवादी हुआ करता है। सूफी काव्य में प्रेमी और प्रियतमा के प्रतीकों द्वारा आध्यात्मिक अर्थों की व्यंजना की गई है। कथानक काव्यों में आत्मा, परमात्मा, माया, शैतान, विद्या अविद्या आदि के लिए अनेक प्रतीक सूफियों द्वारा व्यवहृत हुए हैं। यहां तक कि किले और चौसर के खेल जैसे भौतिक पदार्थों को सांकेतिक रूप में लिया गया है। वे सब आध्यात्मिक साधना के अथवा तथ्यों के नानारूप प्रतीक हैं। इसी प्रकार हिंदी के निर्गुण कवियों ने प्रतीकपद्धति का विस्तृत प्रयोग किया है। आधुनिक काव्य में महादेवी की प्रतीकयोजना उनकी रहस्योन्मुख भावना के प्रकाशन के लिए प्रचुरता से व्यवहृत हुई है। यहां तक कि उनकी पुस्तकों के नाम 'यामा', 'सांध्यगीत', 'दीपशिखा' आदि प्रतीकपद्धति पर ही निर्मित हैं। वर्तमान समय में प्रतीक नाम का एक वाद ही चल पड़ा है, जिसका प्रसार फ्रांस में कदाचित सर्वाधिक हुआ है। ये प्रतीकवादी कवि शब्दों के वास्तविक अर्थ में और उनके द्वारा द्योतित की जाने वाली वस्तु से कोई संबंध नहीं रखते। वे केवल अव्यक्त वस्तु से संबंध रखते हैं। इस प्रकार प्रतीकवाद में प्रतीक एक आत्यंतिक सीमा पर पहुंच गए हैं, जिनमें किसी व्यक्त वस्तु का कोई संबंध नहीं रह गया।

काव्य की रचनाप्रक्रिया में भारतीय विचारकों ने व्यंजना का महत्व सर्वाधिक माना है। परंतु शब्दों के अभिधार्थ का बिना तिरस्कार किए ही व्यंजना का उदगम होता है। व्यंजना प्रायः किसी (वस्तु) भाव या रस की ही होती है। कुछ समीक्षकों ने प्रतीकार्थ को व्यंग्यार्थ से अभिन्न कहा है। परंतु ध्यानपूर्वक देखने से यह ज्ञात होता है कि दोनों में अंतर है। व्यंजना और व्यंग्यार्थ समस्त श्रेष्ठ काव्य की विशेषता है, जब कि प्रतीकार्थ केवल रहस्यवादी कवि अपने विशेष आशय की सिद्धि के लिए काम में लाते हैं। व्यंग्यार्थ काव्य से उद्भूत होता है, जब कि प्रतीक काव्य में आनीत होते हैं। एक की प्रक्रिया काव्य के अर्थविस्तार से संबंधित है जब कि दूसरे की प्रक्रिया अर्थनियोजन से संबंधित है।

निराला के काव्य में व्यंजना की कमी नहीं है। परंतु प्रतीकों का प्रयोग वे नहीं के बराबर करते हैं। यों तो छायावादी कवि होने के नाते उनके काव्य में अर्थ की दो धाराएं ढूंढी जा सकती हैं और दूसरी धारा को प्रतीकार्थ की धारा भी कह सकते हैं। परंतु उनके काव्य में प्रतीकार्थ इतना गौण है कि उसकी स्वतंत्र सत्ता निर्मित ही नहीं हुई है। उदाहरण के लिए उनकी 'जूही की कली' 'बादल राग' और 'कुकुरमुत्ता' जैसी कविताएं भी प्रतीकात्मक होने का संकेत देती हैं। जूही की कली वास्तव में कवि की प्रेयसी है। बादल क्रांति का प्रतीक है और बादल-राग एक क्रांतिराग है। 'कुकुरमुत्ता' संस्कृतिहीन व्यक्ति या समाज का प्रतीक है।

इस दृष्टि से देखन पर ये सभी कविताए प्रतीकात्मक प्रतीत हागी। परतु इस द्वितीयाथ तक पहुचने के लिए कवि की व्यजना कला ही पर्याप्त है। आचाय शुक्ल ने अयोक्ति और समासोक्ति अलकारा के माध्यम स इस प्रकार की कविता का विवचन किया है। निराला की उपयुक्त कविताओ म भी इन्ही अलकारो की स्थिति है।

अपने कतिपय गीता म भी निराला न एकाधिक अर्थों की नियोजना की है। उदाहरण के लिए उनका प्रसिद्ध गीत 'रूखी री यह डाल, वसन वासती लेगी' उद्धत किया जा सकता है

रूखी री यह डाल
वसन वासती लेगी।
देख खडी करती तप अपलक
हीरक—सी समीर—माला जप,
शैलसुता, अपण अशना
पल्लव वसना बनगी—
वसन वासती लेगी।
हार गले पहना फूला का,
ऋतुपति सकल सुकृत कूलो का
स्नेह सरस भर दगा उर सर
स्मरहर को वरेगी—
वसन वासती लेगी।
मधुव्रत म रत वधू मधुर फल
देगी जग को स्वाद तोपदल
गरलामत शिव आशुतोप बल
विश्व सकल नेगी—
वसन वासती लेगी।

इस कविता म अनक अर्थों की स्थापना देखी जाती है। मूल या आरभिक अथ तो वन की एक रूखी डाल का वसत आत ही नई सज्जा धारण करने से सबधित है। इस मौलिक अथ का पूरा निर्वाह काव्य म किया गया है। इसका दूसरा अथ 'शलसुता' और अपण अशना शब्दो क आग्रह स पावती से सबद्ध हो जाता है और शिव पावती के परिणय का दृश्य हमारे सम्मुख आ जाता है। इस विशेष अथ से सामान्य की आर बढ़न पर किसी भी नारी के सौभाग्यवती हान का अथ भी स्वभावत निष्पन्न होता है। यही नही किसी जाति युग या समाज के विकास का अथ भी यहा गहीत हो जाता है। निराला ने ऐसा आलबन ही चुना है कि

उससे अनायास ही अनेकानेक अर्थ व्यंजित होने लगते हैं। इस कविता में व्यंजना की प्रमुखता है। परन्तु इसे हम प्रतीक कविता नहीं कह सकते। एक तो प्रतीकार्थ अनेक नहीं हो सकते। दूसरे प्रतीक की स्थिति मानने पर प्रस्तुत अर्थ का मूल्य नहीं रह जाता और तीसरे प्रतीक कविता जिस सूक्ष्म मनोमय अथवा रहस्यमय आशय में सबंधित होकर प्रस्तुत को छोड़कर अप्रस्तुत अर्थ की ओर उन्मुख होती है वह स्थिति भी यहां नहीं है।

प्रतीक की एक सामान्य या सहज योजना होती है और उसकी एक विशेष या आशयपूर्ण योजना होती है। इस विशेष योजना का स्वरूप प्रतीकवादी काव्य में देखा जाता है। निरालाकाव्य में प्रतीक सहज और अनायास रूप में आए हैं और जाते ही गए हैं उनमें किसी विशेष प्रतीक या प्रतीकार्थ के प्रति निष्ठा नहीं है। प्रतीक उनके काव्य अनुचर हैं, नियंता नहीं। शब्द अपने मूल अर्थ को बिना छोड़े प्रतीकात्मकता की ओर उन्मुख हुए हैं। इस प्रकार की योजना या तो अलंकार की सीमा में ग्रहण की जा सकती है अथवा उसे व्यंजना व्यापार के अंतर्गत लिया जा सकता है।

शैली

इस अध्याय के आरंभ में हम निरालाकाव्य की मूल प्रकृति के संबंध में विचार कर चुके हैं। उस मूल प्रकृति से उनके काव्य के सौंदर्य प्रसाधनों का किस प्रकार निःसरण हुआ है यह भी हमने देखा है। यद्यपि ये सभी प्रसाधन उनकी काव्य प्रकृति से निःसृत हैं, परन्तु शैली तो उनकी काव्यप्रकृति का मानो साकार स्वरूप ही है। यद्यपि शैली शब्द की अनेकविध व्याख्याएं की हैं, परंतु यहां हम उसका प्रयोग उस गंभीर अर्थ में कर रहे हैं जिसका कुछ आभास वाल्टर पेटर और शापेनहावर की व्याख्याओं में मिलता है। शैली कविव्यक्तित्व की साक्षात प्रतिमा है। वह उसके कविचरित्र की सच्ची अभिव्यक्ति है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस को शंकर के मन में संस्थित पाया और फिर उसी को अपनी कविता में उतार लिया। उसी प्रकार वस्तु और शैली का संबंध माना जा सकता है। भारतीय विवेचकों ने ओज, माधुर्य आदि गुणों से शैली या रीति को संपृक्त कर उसकी जो गहन मीमांसा की है उससे भी वस्तु और उसकी अभिव्यक्ति का अन्योन्य संबंध लक्षित होता है।

निराला की काव्यशैली उनके काव्यव्यक्तित्व के आधार पर कई रूपों में अभिव्यक्त हुई है। सबसे पहले उनकी वह स्वच्छंद और विद्रोहिणी शैली है, जो उनके विद्रोही व्यक्तित्व और तद्रूप काव्यवस्तु का प्रतिनिधित्व करती है। निराला की काव्यशैली का यह कदाचित सबसे अधिक सशक्त स्वरूप है। मानवजीवन

की सारी विषमताओं और रूढ़ियों का आपात विनाश करनेवाली भावचेतना इसी शली का आश्रय लेकर परिस्फुट हुई है।

ए निबध !
अध तम-अगम अनगल बादल !
ऐ स्वच्छन्द !
मन्द चचल समीर रथ पर उच्छृखल !
ऐ उद्दाम !
अपार कामनाओ क प्राण !
बाधारहित विराट !
ऐ विप्लव के प्लावन !
सावन घोर गगन के
ए सम्राट !
ऐ अटूट पर छूट टूट पडनेवाले उन्माद !
विश्व विभव को लूट लूट लडनेवाले अपवाद !

इसी शली म 'एक बार बस और नाच तू श्यामा' की समस्त कविता लिखी गइ है और इसी की द्योतक य पक्तिया भी है

सिंही की गोद से
छीनता रे शिशु कौन
मौन भी क्या रहती वह
रहत प्राण ? रे अजान
एक मपमाता ही
रहती है निर्निमेष
दुबल वह
छिनती सतान जब
जन्म पर अपन अभिशप्त
तप्त आँसू बहाता है।

यह शली निरालाकाय क पौरुष अश की प्रतीक है।

निराला की सौदय चेतना और दाशनिक आभा से सपन्न उनकी दूसरी शली आलोक शली कही जा सकती है। उनकी शृगारिक गीतिया, प्राकृतिक सौदय छविया, उनकी रेखा' और 'स्मति चुबन , जिनमे उनके आत्मविकास की स्मतिया सयोजित है इसी 'आलोक शली के अतर्गत आती है

प्रथम कनक रखा प्राची के भाल पर
प्रथम शृगार स्मित तरुणी वधू का

नील गगन विस्तार केश
किरणोज्ज्वल नयन नत
हेरती पृथ्वी का— (रेखा)

इसी प्रकार 'कवि' और जागरण' शीर्षक कविताओं में ऐसी ही उज्ज्वल छवियों का समारंभ है।

प्रथम तरंग वह आनन्द सिन्धु में,
प्रथम कंपन में सम्पूर्ण बीज सृष्टि के
पूर्णता से खुला मैं पूर्ण सृष्टि शक्ति ले,
त्रिगुणात्मक रचे रूप
विकसित किया मन का,
बुद्धि, चित्त, अहंकार पंचभूत
रूप-रस-गंध स्पर्श,
शब्दज संसार यह
वीचियां ही अगणित शुचि सच्चिदानन्द की।

'परिमल और 'गीतिका' के अधिकांश शृंगारिक और प्रकृतिगीत इसी ललित उज्ज्वल आभा से अभिषिक्त हैं।

निराला की तीसरी शैली उदात्त और विराट चित्रों की है जिन्हें उन्होंने महाकाव्योचित उत्कर्ष दिया है। यह उनकी 'पांडित्य शैली' भी कही जा सकती है। यहां उन्होंने विशाल चित्रफलक पर संश्लिष्ट और सामासिक भाषाप्रयोगों के माध्यम से विराट चित्रों की अवतारणा की है। यहां 'बादल राग' की सी प्रखरता नहीं है और न गीतिका के से आलोक चित्रों का ललित संचयन है। यहां वास्तव में कवि एक प्रौढ़ि का विन्यास कर रहा है

है अमा निशा, उगलता गगन घन अन्धकार,
खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल,
भूधर ज्यों ध्यान मग्न, केवल जलती मशाल।
स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर फिर संशय
रह रह उठता जग जीवन में रावण जय भय।
(राम की शक्तिपूजा)

अथवा

दूर, दूरतर, दूरतम शेष,
कर रहा पार मन प्रभोदेश,
सजता सुवेश फिर फिर सुवेश जीवन पर,

निराला की ये काव्यशलिया एक दूसरे से इतनी स्वतत्र हैं और अपने मे इतनी सशक्त भी है कि उन्ह किसी बहत्तर वत्त म रखकर नही देखा जा सकता और न किसी लघुतर वृत्त मे ही रक्खा जा सकता है। काव्यवस्तु और काव्यशैली का सामजस्य प्रस्तुत करने वाले ये सुस्पष्ट और अनिवाय शैलीप्रयोग है। इतना बडा शलीप्रयोक्ता कवि आधुनिक हिंदी काव्य म तो है ही नही नवयुग के सपूण भारतीय साहित्य मे भी मुश्किल से मिलेगा।

दार्शनिकता

काव्य और दशन दो पृथक शब्द हैं वे दो पृथक अर्थों के ज्ञापक हैं। दोनो के स्वरूप और प्रक्रियाए भिन्न हैं। ऐतिहासिक परपरा को देखन पर यह ज्ञात होता है कि यद्यपि काव्य म दार्शनिकता का योग अनेक रूपो म होता रहा है और दार्शनिक विचारणा म भी यत्र-तत्र काव्यत्व का योग हुआ है, परतु काव्य और दशन की दो पृथक सारणिया बनी रही हैं। किसी कवि म दार्शनिक चितन कम या अधिक मात्रा म हो सकता है। कोई कवि किसी विशेष दशन का अनुयायी भी हो सकता है परतु उसके काव्य म दार्शनिकता स्वतत्र वस्तु बनकर नही आ सकती अन्यथा वह काव्यदशन की श्रेणी म चला जाएगा और उसकी साहित्यिक विशेषता सीमित और सदिग्ध हो जाएगी। इसी प्रकार किसी दार्शनिक मत या सिद्धात म कवित्व केवल अलकार बनकर आ सकता है, विषय को रोचक बनाने के लिए कुछ दशन अपन स्वरूप म काव्य के अधिक समीप हो सकत हैं। उदाहरण के लिए सूफियो का प्रेमदशन और भारतीय भक्तिदशन। इन दशनो के मूल मे भावपक्ष की प्रमुखता होने से ये सहज ही काव्य के समीप हैं। कदाचित यही कारण हैं कि सूफी और भक्तिदशन की सर्वाधिक अभिव्यक्ति काव्य के माध्यम से हुई है। जिन दशनों म चितन या बौद्धिक पक्ष की प्रमुखता होती है अथवा जिनमे साधना की ऐसी प्रणालिया प्रचलित हैं जो शारीरिक अभ्यास पर आश्रित है, वे अपने प्रकाशन के लिए काव्य का आधार कम लेते हैं और अधिकतर चितन और साधना के क्षेत्र की वस्तुए बन जाते है। ऐसे दशनो को अपनाने वाले कवि भी हो सकत हैं और हुए है परतु ऐसे कवि भावप्रधान न होकर चितनप्रधान हो गए ह और कई बार काव्य की सीमा का अतिक्रमण करते रहे हैं। वस्तुत दशन का क्षेत्र तत्व की मीमासा और उपलब्धि का क्षेत्र है जबकि काव्य प्रमुखत कवि की मानसिक सौदय मूलक प्रतिक्रियाओ स सबधित है।

जब हम किसी कवि के अथवा उसके काव्य के दार्शनिक पक्ष की चर्चा करत है तब हमारा लक्ष्य यह होता है कि हम उक्त कवि और उसके काव्य के ऐसे अशो को देखे जिनम वह जीवन और जगत सबधी प्रश्नो को उठा रहा है और उनका समाधान दे रहा है। या तो कवि का व्यक्तित्व जीवन सबधी अनुभवो और विचारो स रिक्त नही हो सकता जब कोई कवि विशुद्ध रूप स अपन मनोभावो

को अथवा किसी लौकिक वस्तु या विपय को अपन काव्य म प्रस्तुत करता है तब भी वह किसी न किसी जीवनदृष्टि से प्रेरित और प्रभावित रहता है, पर ऐसे उदगारो और वणनो को जो विशुद्ध रूप स कवि की अपनी भावना और निरीक्षणो के परिणाम है, दाशनिक नही कहा जाता। इन अभिव्यक्तिया और वणना म जब स्पष्ट रूप से कवि के वचारिक पक्ष का योग होने लगता है और जब वह अपने काव्य के द्वारा अपने जीवनदशन का प्रकाशन करता है, तभी काव्य म दाशनिकता का प्रश्न उपस्थित होता है और तभी कवि के दाशनिक पक्ष की चर्चा की जाती है।

कुछ कवि तो अपने जीवनदशन को अथवा अपनी जीवजगत सबधी चिंतना को अपन काव्य से पृथक ही रखते है पर कुछ अन्य कवि उन्ह काव्य के माध्यम से अभिव्यक्त भी करते है। कालिदास जैसे कवि जो स्वभावत एक विशिष्ट दाशनिक रह होगे, अपने काव्य म एसे चरित्रो प्रसगो की अवतारणा करते है जिनसे उनके दाशनिक विचारो का आभास मिलता है परतु कालिदास को दाशनिक कवि कहन की कोई परपरा साहित्यिक इतिहास मे प्रचलित नही है। इसका कारण यह है कि कालिदास प्रमुखत और एकातत कवि है, और दशन को काव्य मे मिलाने के पक्षपाती नही हैं। सस्कृत काव्य मे अधिकतर यही पद्धति प्रचलित रही है। काव्य को काव्य और दशन को दशन माना गया है और अपने प्रकृत रूपो म इनका समिश्रण नही किया गया है। यहा तक कि जयदेव जस कवि भी जो भक्ति-युग के प्रभावो से सचालित हैं अपन काव्य मे शृगारिक स्तर पर ही बने रहे हैं। वह भक्तिदशन के स्वतत्र आख्याता नही है। आग चलकर देशभाषाओ मे कबीर, तुलसी और सूर जस कवियो ने काव्य के साथ विविध दशना का योग अधिक मात्रा म किया इसीलिए ये विशुद्ध कवि की सज्ञा के अधिकारी न होकर सगुणोपासक या निर्गुणोपासक कवि कहे गए है। तात्पय यह कि भारतीय परपरा म काव्य और दशन की पृथक सरणिया मानी गई है और केवल मध्ययुग म दशन अध्यात्म और भक्ति सबधी आदर्शों को काव्य मे समाहित किया गया है।

वतमान युग मे भी प्राचीन पद्धति का अनुसरण करत हुए कवियो न काव्य और दशन का योग प्राय नही किया है। यद्यपि गुप्त (मथिलीशरण) क कथानको और चरित्रो म वष्णव सस्कारो का योग है, परतु वह काव्य की अपनी परिसीमा के बाहर कोई पृथक अस्तित्व नही रखत। प्रसाद दाशनिक कवि है। उनके काव्य म दाशनिकता का विशेष योग है। परतु उन्होन भी काव्यसीमा का अतिक्रमण करके दशन का निरूपण नही किया है। 'कामायनी' काव्य मे रूपक के माध्यम से दाशनिकता लाई गई है परतु इस रूपकतत्व के सबध म स्वय प्रसाद ने यह निर्देश किया है कि जो लोग मनु श्रद्धा और इडा क चरित्रो मे रूपकात्मकता देखना चाहत

है, देख सकते हैं, परतु उन्होंने 'कामायनी' काव्य को प्राचीन उल्लेखो और अनुभूतियो के आधार पर ही तयार किया है। 'कामायनी' काव्य मे प्रसाद की दार्शनिकता के सूचक अनेक प्रकरण आए हैं, और कतिपय समीक्षको ने उसमे आदि से अत तक शवदशन की सपूर्ण रूपरेखा का उल्लेख किया है और स्थान स्थान पर आने वाले उन पारिभाषिक शब्दो का भी विवरण दिया है जो कश्मीरी शैवदर्शन से सबधित हैं। कुछ लोगो ने कामायनी' के सपूण वस्तुविन्यास म शवदशन के सिद्धातो का प्रभाव देखा है, परतु प्रसाद इस काव्य म कही भी कोरे दार्शनिक इतिवृत्त का आधार नही लेते। दार्शनिकता का सकेत देते हुए भी उन्होंने काव्य के मानवीय पक्ष और चरित्र की स्वाभाविक रूपरेखा का दशन का अनुयाई नही बनने दिया है। युगजीवन की मौलिक प्रेरणाए भी उनके काव्य म निहित हैं। वे भी किसी क्रमागत दार्शनिकता का अनुसरण नही करतीं। प्रसाद के काव्य मे दार्शनिकता का स्थान है, पर काव्य की सीमाओ का उल्लघन करके नही। कहा जा सकता है कि उन्होंने काव्य और दशन का सयोग कराने मे वह आदर्श प्रणाली अपनाई है जो भारतीय काव्यपरपरा के अतिशय अनुरूप है।

प्रस्तुत निबध मे हम निरालाकाव्य के दार्शनिक पक्ष का विवेचन इसी क्रमागत प्रणाली पर करेंगे। उनका काव्य एक उदात्त भूमिका का काव्य है और ऐसे सौंदय की झाकियां दिखाता है जो सहज प्राकृतिक उच्छवास की भूमिका से एकदम ऊपर है। यह उच्चतर भावभूमि सभी बडे कवियो म होती है जो उनके दार्शनिक और भावात्मक चिंतन और उन्नयन का परिणाम है परतु हम अपने विवेचन मे निरालाकाव्य के इस भावपक्ष पर यहा विचार नही करेंगे, क्योंकि यह तो उनका काव्य ही है। जिन मार्मिक अनुभूतियो और सौंदयचित्रो के माध्यम से निराला अपने काव्य की सष्टि करते हैं, वे उनकी वैयक्तिक चेतना का परिणाम हैं। हम उन्हें उनके दार्शनिक विवेचन म सम्मिलित नही करेंगे। उनका दार्शनिक विवेचन उनके काव्य के उन अशो के आधार पर किया जाएगा, जो विशुद्ध रूप से उनकी वचारिकता को अभिव्यक्त करते हैं तथा उनकी दार्शनिक दष्टि पर प्रकाश डालते हैं।

प्रत्येक दशन का एक तात्विक पक्ष होता है जिनम सष्टि की चिरतन और आधारभूत जिज्ञासाओ पर विचार किया जाता है और बुद्धिसम्मत निष्कष दिए जाते हैं। इस तत्वदशन के साथ उक्त दशन का एक व्यवहार पक्ष होता है जिसम उन सासारिक तत्वो का समावेश होता है जो उस तत्वदशन की उपलब्धि म सहायक होते है अथवा जिनके द्वारा उनकी उपलब्धि का मार्ग प्रशस्त होता है। इसे कुछ लोग दशन का साधनापक्ष भी कहते हैं परतु अनेक बार ये साधनाए इतनी वयक्तिक हो जाती हैं कि इनका भावात्मक और सामाजिक पक्ष क्षीण पड

जाता है। इसीलिए 'साधना' शब्द की अपेक्षा 'व्यावहारिक' शब्द का प्रयोग हमे अधिक उपयुक्त जान पडता है। इस व्यावहारिक दर्शन की सीमा म कवि का नतिक मानवतावादी पक्ष सम्मिलित रहा करता है।

दर्शन के इन दा आधारा से भिन्न एक तनीय आधार भी है, जिसे हम कवि का युगदर्शन अथवा उसकी सामाजिक दृष्टि कह सकते है। तत्वत कोई कवि किसी विशेष दशन का अनुयायी या आविष्कता भी हो सकता है परतु यह आव श्यक नही कि वह युगीन प्रश्ना और समस्याआ पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त न करे। बल्कि अनक बार तो युगीन जीवनभूमिया ही कवि की दाशनिकता की नियामक हो जाती हैं। युगजीवन के सबध म कवि के विचार और उदगार उसके तत्वदर्शन के अनुकूल ही हो सकत है प्रतिकूल नही। उदाहरण के लिए यदि तात्विक चिनन मे कोई कवि आदर्शवादी या अध्यात्मवादी है तो अपन युगदर्शन म वह यथाथवादी या पदार्थवादी नही हो सकता। इस भूमिका पर वह किसी न किसी ऐसे समन्वय की सष्टि अवश्य करेगा जिससे उसके मूल तत्वदशन का विघटन न हो सके। जा लोग प्रेमचद के कथासाहित्य मे आदशवाद और यथार्थ-वाद की एक साथ सस्थिति देखते हैं अथवा निराला के परवर्ती काव्य म किसी भौतिकवादी विचारणा का प्रभाव पाते है, उन्हे यह समझना चाहिए कि कोई बडा लेखक या कवि इस प्रकार की अव्यवस्थित भूमिका पर साहित्यरचना नही कर सकता। यह सभव है कि समय के परिवतन से उसके विचारा म परिवतन हो और उसकी मूल दार्शनिक दष्टि भी रूपातरित हो जाए परतु तब हम यह कहना होगा कि उस कवि का कोई समरस तत्वदशन नही है, अथवा उसका तत्वचिंतन विशृखल है।

इस आरभिक वक्तव्य के पश्चात हम निराला काव्य के दाशनिक पक्ष पर विचार कर सकते है। हम ज्ञात है कि निराला अपन आरभिक साहित्यिक जीवन म रामकृष्ण आश्रम से सबद्ध रहे हैं। उन्होंने सन 1921-22 म आश्रम से प्रका शित होनेवाली 'समन्वय' पत्रिका का सपादन भी किया था। वह विवेकानद के नव्यवेदात के साहचर्य मे आए थे। भारतीय वेदात अपने व्यापक रूप म उपनिषदा पर आश्रित है। उपनिषद एक ऐसी व्यापक सत्ता की प्रतिष्ठा करते है जिसमे सष्टि के सारे विरोध और नानात्व दूर हो जाते ह 'मैं' और 'तुम' का भेद मिट जाता है। अह ब्रह्मास्मि' और तत्त्वमसि उपनिषदो की ही स्थापनाए है। केवल ब्रह्म सत्य है, जगत का कोई स्वतत्र अस्तित्व नही और जीव भी ब्रह्म ही है। य वेदात के तीन प्रमुख पक्ष ह। निश्चय ही यह औपनिषदिक वेदात भारतीय मनीषा और चिंतना की महान उपलब्धि है। ऐतिहासिक क्रम स इस वेदात की प्रसिद्धि अद्वैतवाद के रूप म हुई और विश्लेपण के क्रम म इसकी एकाधिक व्याख्याए की

गइ। शवागम सिद्धात म शिव और शक्ति तत्वा क माध्यम स इसकी व्याख्या की गइ है। काश्मीर म शैवागम सिद्धात का विकास हुआ था परतु यह सिद्धात दश क अय सास्कृतिक केंद्रा म भी व्याख्यायित हुआ। दक्षिण म शैव अद्वतवाद का यथष्ट विकास हुआ। शकराचाय न औपनिषदिक अद्वतवाद की नवप्रतिष्ठा की। इस प्रकार अद्वतवादी दाशनिकता अनक आराह अवराह दख चुकी है।

मनुष्य की ज्ञानमूलक भावमूलक और क्रियामूलक प्रवृत्तिया का परिताप और समाधान करन क आशय स भारतीय अद्वतदशन ज्ञानयाग, भक्तियाग तथा कमयाग क मार्गों का अवलवन लेता है। वेदात या अद्वतवाद की सीमा म य तीना ही याग समाहित हान है। विशेष विशेष रुचिया के अनुरूप वदात तत्व की ज्ञान मूलक, भक्तिमूलक और कममूलक व्याख्याए की गई ह। इन तीना पक्षा का समाहार हो जान पर समस्त मानव प्रवत्तिया और अभिरुचिया की परितृप्ति हा जाती है। यद्यपि व्याख्याताआ न कभी एक और कभी दूसरे पक्षा का आपक्षिक रूप स कम या अधिक आग्रह किया है, परतु समग्र रूप से वेदात की य तीना धाराए भारतीय चितन में समाहित रही ह। ज्ञान ता वेदातदशन के केद्र म है किंतु भक्ति और कम की निष्पत्तिया भी समान रूप स स्वीकत ह।

परम तत्व की उपलब्धि के लिए सगुण और निगुण उपासनाए प्रचलित हुई थी, जिनके अनक भेदापभेद ह। निर्गुण उपासना प्राय ज्ञानश्रयी कही जाती है, सगुण उपासना भक्ति माग का आश्रय लेती है। इन उपासना पद्धतिया म चरम सत्ता का स्वरूप भिन्न भिन्न नामा स अभिहित हुआ है परतु तत्व एक ही है। भारतीय साधना म योगमाग का भी विशेष महत्व है। चित्तशुद्धि के विभिन्न उपाया स मन को एकाग्र कर समाधि के आनद म लीन करन की पद्धति भारतवष म विशेष समद्ध रही है। सगुण उपासना म कभी पुरुष और कभी नारी रूप की उपासना की गई है। कमयोग की नवोद्भावना और युगोचित परिष्कार अधिक आधुनिक है, जिसका आख्यान भगवद्गीता' के व्याख्याकारा न किया है। निष्काम और नि सग कम का अनुसरण स्वय एक सपूण साधना है।

इन आध्यात्मिक लक्ष्या और साधनाआ के साथ मानवप्रेम समानता और बधुत्व के व आदश भी लगे हुए ह जो चिरकाल स साधन के आवश्यक कतव्य मान गए है। वतमान युग म इन मानवतावादी पक्षा का अधिक आग्रहपूवक विकास किया गया है। इस प्रकार प्राचीन आध्यात्मिक तत्वदशन और साधनाप्रणालिया क समकक्ष युगीन चेतनाआ और आदर्शों का भी उन्नयन हाता रहा है। यहा तक कि राष्ट्रीय चेतना और स्वतनता सघष की भूमिया पर भी हमारी दाशनिक पद्धति योग दती रही है। भावमूलक आर आध्यात्मिक हान क कारण भारतीय तत्वदशन मनुष्य के उन सभी लौकिक पक्षा का प्रेरित करता रहा है जो स्वय किसी

न किसी भावमूलक भूमि पर सस्थित हैं। भारतीय क्रातिकारियों का गीता की पुस्तक लेकर अपने प्राण हथेली पर रखे हुए विदेशी शत्रु को समाप्त करने का सकल्प इसी प्रकार की विचारदृष्टि का परिणाम है। स्वय निराला ने 'जागो फिर एक बार' कविता मे राष्ट्रीय जागृति और बलिदान का सदेश अद्वैतवादी दार्शनिक भूमिका पर दिया है।

निराला के काव्य म दार्शनिक तथ्य अनेक रूपो म आए है। उनके आरभिक काव्य म ऐसे उल्लेख मिलते है जिनसे सूचित होता है कि एक विशेष अवसर पर उनका जीवनक्रम सहसा परिवर्तित हुआ है और एक नव्य प्रकाश के दर्शन से वह अपने व्यक्तित्व का रूपातरण कर सके है। हम आगे देखेंगे कि इस प्रसग का उल्लेख किस कविता म हुआ है। निराला मूलत ज्ञानमार्गी दर्शन के अनुयायी कहे जा सकते हैं। आत्मबोध होने पर ससार की सारी कुरूपता किस प्रकार मिट जाती है और मनुष्य किस दृष्टि से विश्व को देखने लगता है, इस अनुभव को निराला ने अपनी कई कविताओ मे व्यक्त किया है। यद्यपि वह तत्वत आत्मज्ञान के अनुभवकर्ता हैं, परतु उनम भावात्मकता की भी विशिष्टता रही है। 'अधिवास' शीर्षक कविता मे उन्होने करुणा की महत्ता पर बल दिया है। तुम और मैं शीर्षक सुदर कविता मे उन्होने आत्मतत्व और परमात्मतत्व के सबध की सुदर झाकी दिखाई है। विराट सत्ता के प्रति सकेत जहा उनके ज्ञानपक्ष को सूचित करते हैं वहा 'माँ' और 'देवि' आदि सबोधन मातशक्ति का माहात्म्य प्रदर्शित करते है। निराला ने जहा एक ओर अहतत्व का विशेषत्व प्रकट किया है वही दूसरी ओर विनय की अजस्र धारा भी उनके काव्य म प्रवाहित है। विशेषकर अपने परवर्ती काव्य म निराला ने ज्ञानप्रवणता को छोडकर भक्तिप्रवण बन गए थे। यह कहना आसान नही है कि निराला की निष्ठा भारतीय ज्ञानमार्ग की ओर अधिक थी अथवा भक्ति की ओर। हम कह सकते है कि सिद्धाततः वे ज्ञानमार्गी थे, परतु व्यवहार मे उन्हे आत्मनिवेदन और प्रणति भी उतनी ही प्रिय थी। जगत के मिथ्यात्व की धारणा भी उन्हे ज्ञानमार्गियो से ही प्राप्त हुई थी परतु यह जगत ब्रह्म की ज्योति से ज्योतित होने पर चिर सुदर और चिरस्पृहणीय बन जाता है, यह धारणा भी उनके काव्य म बार बार व्यक्त हुई है। निराला की प्रेमकल्पना भी अतिशय उदात्त है। उनकी शृगारिक कविताओ मे जिस प्रेमतत्व की झाकी मिलती है वह वासनारहित, समर्पणशील और आत्मबोधमूलक प्रेम है। इस प्रकार निराला के काव्य म अनेक तत्व अपने उत्कर्ष पर पहुच कर समन्वित हो गए हैं। उनकी करुणा उनका प्रेम, उनकी ओजस्विता, उनकी समर्पणभावना और सर्वोपरि उनका आत्मबोध एक विशाल समन्वय म समाहित हो गए है जो वस्तुत

उनके समाहित व्यक्तित्व और उनकी अद्वैतनिष्ठ दृष्टि का ही पारूप है। 'पचवटी प्रसग' में, जो उनकी एक आरभिक काव्यरचना है, उन्होंने राम के मुख से ज्ञान भक्ति और कर्मयोग का समन्वय ही नहीं उनकी एकात्मकता भी प्रतिपादित की है। इस दृष्टि से उन्हें अद्वैतवाद की भूमिका पर एक महान समन्वय का पुरस्कर्ता कहा जा सकता है।

अब हम निराला के दार्शनिक उल्लेखों को उनकी काव्यरचनाओं से लेकर उनके समग्र दार्शनिक स्वरूप को प्रस्तुत करेंगे। सबसे पहले निराला की वह रचना हमारे सम्मुख आती है जिसमे उन्होंने अपने जीवन मे आनेवाले एक महान परिवर्तन का उल्लेख किया है। आरभ मे माया का आवरण चारो ओर फैला था, जडता का अधकार घिरा था समल निर्मल वासनाए अगणित तरगो मे फैल रही थी। सपूर्ण अज्ञान का राज्य व्याप्त था, सकीर्ण अह भावना, मैं और तुम के भेदो को बढा रही थीं। हास्य में, प्रेम मे क्रोध में और भय में भिन्न भिन्न प्रतिक्रियाए होती थी। इन्द्रिया बार बार बहिर्मुख होती थी। इस मोह दशा से सहसा एक दिन मुक्ति मिली। निराला ने उस मुक्ति का वर्णन इस प्रकार किया है

पहुँचा मैं लक्ष्य पर।
अविचल निज शान्ति मे,
क्लान्ति सब खो गयी—
डूब गया अहकार
अपने विस्तार मे
टूट गये सीमाबध—
छूट गया जड पिड—
ग्रहण देश-काल का,
निर्जीव हुआ मैं—
पाया स्वरूप निज
मुक्ति कूप से हुई
नीडस्थ पक्षी की
तम विभावरी गई—

इस महान परिवर्तन के साथ वह सृष्टि जो मोहमयी थी, अब ज्योतिमयी हो गई। चारो ओर अपना ही परिचय मिलने लगा। एक नए ससार का आविर्भाव हुआ। मन को विकसित कर सृष्टि की सपूर्ण शक्ति में समन्वित हो समस्त त्रिगुणात्मक रूप में रखे गए। बुद्धि चित्त अहकार पचभूत और पचतन्मात्राओ का यह ससार सच्चिदानन्द की सौम्य लहरो की भांति प्रतीत होने लगा। सौन्दर्य

की आभा चतुर्दिक विकीण हो गई। अनक जीवनसबधो मे एक प्रेम ही व्याप्त हो गया। भोग की अभिलाषा जाती रही। सकाम अह के निदय मरोड समाप्त हुए। यह भावात्मक परिवतन था।

कम के क्षेत्र म सेवाभाव और सत्य के आदश विकसित हुए। मुक्त छद का आविष्कार हुआ। अकृत्रिम रूप मे मन का सहज प्रकाशन होने लगा। यद्यपि निराला न इस जागरण की चर्चा वदिक युग के ऋषियो के प्रसग मे की है (देखिए 'परिमल' की 'जागरण' कविता पृ० 241 247 तक) परतु यह वास्तव मे निराला के अपने भावोनयन का भी सपूण परिचय है।

पचवटी प्रसग' म, जो निराला की एक आरभिक रचना है लक्ष्मण के मुख से निराला कम के स्वरूप को ओर भी स्पष्ट अभिव्यक्ति देते हैं। 'जीवन का एकमात्र अवलम्ब सेवा है, माता न यही आदेश दिया है। मा की प्रीति के लिए ही मैं पुष्प चयन करता हू। इसस अधिक न कुछ जानता हू और न जानने की इच्छा करता हू। मेरी मा आदिशक्तिरूपिणी हैं। मेरी माता व हैं जिनके अस्तित्व की छाप प्रणव से लेकर प्रत्येक मत्र के अथ मे व्याप्त है। मैं उन्ही माता का सेवक हूँ। मुक्ति नही चाहता, उनके प्रति भक्ति बनी रह, यही बहुत है।' इन पक्तियो म निराला ने जीवन के उद्देश्य की व्यजना की है। उनकी यह दाशनिकता प्रवृत्तिमुखी है क्योकि व मुक्ति का तिरस्कार कर भक्ति का आवाहन करत हैं। मुक्ति कमसयास की ओर ल जाती है। निवृत्ति का सदेश देती है। परतु भक्ति सासारिक क्षेत्र मे कम की ओर प्रवत्त करती है। माता या आदिशक्ति के प्रति निराला की यह समपणभावना उनके समस्त काव्य म व्याप्त है। यद्यपि सिद्धात की भूमिका पर व मायामोह रहित प्रशात ज्ञान का स्वरूप निर्देश करते हैं परतु कम और व्यवहार के क्षेत्र म व मातशक्ति के प्रति प्रणत होन के अपने अभीष्ट का सूचित करते हैं।

ऊपर हमन निराला के ज्ञान, भक्ति, कम और योग के समन्वय की चर्चा की है। 'पचवटी प्रसग' म राम के मुख से इसी समन्वय का आख्यान किया गया है। राम कहते हैं

> भक्ति, योग, कम, ज्ञान एक ही है
> यद्यपि अधिकारियो के निकट भिन्न दीखते हैं।
> एक ही है, दूसरा नही है कुछ —
> द्वत भाव ही है भ्रम
> तो भी प्रिये,
> भ्रम के ही भीतर से
> भ्रम के पार जाना है।

मुनियो न मनुष्यो के मन की ग!~
सोच ली थी पहले ही।
इसीलिए द्वतभाव भावुको म
भक्ति की भावना भरी—
प्रेम के पिपासुओ को
सेवाजन्य प्रेम का
जो अति ही पवित्र है,
उपदेश दिया।

इन पक्तियो म निराला न केवल विभिन्न योगो को मानने हैं वरन अधिकारी भेद से भिन्न भिन्न लोगो को एक ही लक्ष्य पर पहुचता दिखाते हैं। कर्मयोग को वह 'प्रेम' शब्द द्वारा अभिव्यक्त करते है और उसे सेवाजन्य प्रेम की अभिधा देते हैं। यह प्रेम साधारण जना के लिए दुस्साध्य है, वह कहते हैं

प्रेम का पयोधि तो उमडता है
सदा ही निस्सीम भू पर
प्रेम की महोर्मिमाला तोड देती क्षुद्र ठाट।
जिसम ससारियो के सारे क्षुद्र मनोवेग
तण सम बह जाते हैं।
हाथ मलते भोगी,
धडकते हैं कलेजे उन कायरो के
सुन सुन प्रेम सिंधु का
सर्वस्व त्याग गर्जन घन।

यही प्रेम साधक को कर्म की ओर प्रवत्त करता है। निराला का यह ज्ञान भक्ति और कर्म सबधी निर्देश भारतीय वेदात की शिक्षा के अतिशय अनुरूप है।

कुछ लोग निराला को स्वामी विवेकानद के नव्य वेदात का अनुयायी मात्र मानते हैं, परतु निराला की विचारणा और उनका व्यक्तित्व रामकृष्ण आश्रम की सन्यासचर्या मे सीमित नही रहा है। सन्यासियो के लिए लोकसेवासबधी जो सीमित क्षेत्र आश्रम व्यवस्था म निर्दिष्ट है उतने से निराला को सतोष नही हो सकता था। रोगियो की परिचर्या अकालपीडितो की सहायता तथा ऐसे ही अन्य आय जो आश्रम की सक्रियता के परिचायक हैं निराला के लिए पर्याप्त नही थे। उनकी जीवन चेतना केवल आध्यात्मिक भूमिका म सीमित न रहकर पूर्णत मानवतावादी और मानववादी हो गई है। उनकी यह पक्ति

> मैं करू वरण
> जननि दुख हरण
> पद राग रजित चरण

जहा एक ओर मातशक्ति क प्रति सपूण ममपण और बलिदान की भावना से आपूरित है वही

> प्राण सघात के सिधु के तीर मैं
> गिनता रहूँगा न कितने तरग हैं,
> धीर मैं ज्यो समीरण करूगा सतरण

जसी पक्तिया उनकी अदम्य जीवनाभिलाषा और कर्मोन्मुखता की परिचायक हैं।

विशुद्ध आध्यात्मिक दाशनिक्ता और आधुनिक मानवतावादी दृष्टि म मुख्य अतर यह है कि आध्यात्मिक दशन मनुष्य की भौतिक जीवनचर्या के केंद्रीय स्तरो म अभिरुचि नही रखता, जबकि मानवतावादी प्रवत्तिया भौतिक जीवन से पूणत सपृक्त रहती ह। बल्कि कहा जा सकता है कि वह मनुष्य के लौकिक जीवन से ही सबधित हाती है। इस दृष्टि से देखन पर निराला केवल अध्यात्मवादी दशन के पुरस्कर्ता नही है वरन वे अशेष मानवतावादी भूमिकाओ पर गए है। यहा हम उनके इन दोना पक्षो के कुछ उदाहरण देना चाहगे।

निराला का विशुद्ध अध्यात्मवादी दशन ज्ञान भक्ति, निस्सग कम, प्रेम और याग सबधी भूमिकाओ पर अभिव्यक्त हुआ है। नान की उपलब्धि के बिना अधकार (अविद्या) दूर नही होता और ज्ञान का प्रकाश मिलने पर तम विभावरी' मिट जाती है इसका उल्लेख हम ऊपर कर चुके है। अद्वैत भावना पर पहुचने पर ससार कैसा लगता है या क्या बन जाता है इसके सबध मे निराला का एक गीत इस प्रकार है

> जग का एक देखा तार।
> कण्ठ अगणित दह सप्तक
> मधुर स्वर झकार।
> बहु सुमन, बहुरग, निर्मित एक सुदर हार,
> एक ही कर से गुथा उर एक शाभाभार।
> गध शत अरविद नन्दन विश्व वदन सार,
> अखिल उर रजन निरजन एक अनिल उदार।

यही वह विश्वात्मवादी दृष्टि है, जो निराला की अद्वैत धारणा मे नि सत हुई है। समस्त विश्व को एक ही तत्व से आपूरित देखना, मानवचेतना को मानवतावाद की ओर सीधे अग्रसर करना है। अपनी अनेकानेक कविताओ मे निराला ने विराट के प्रति अपना आकपण व्यक्त किया है। यह विराट' वास्तव में कोई

विशुद्ध अध्यात्मवादी पदार्थ नहीं है, वरन यह समस्त विश्व की व्यापकता और एकात्मता का प्रतीक है। निराला की जो भावना उस महान एकत्व को देखती है, वही बार बार उस शक्ति के प्रति प्रणत होती है, जो एकात्मता के मूल म है। उस विश्वात्मा के प्रति मानव आत्मा का कैसा अभिन्न और मनोरम सबध है, इस निराला न अपनी 'तुम और मैं' शीर्षक कविता म व्यक्त किया है।

तुम शिव हो, मैं हू शक्ति,
तुम रघुकुल गौरव रामचन्द्र,
मैं सीता अचला भक्ति।
तुम आशा के मधुमास
और मैं पिक कल कूजन तान,
तुम मदन पचशर हस्त
और मैं हूँ मुग्धा अनजान।
तुम अबर मैं दिग्वसना,
तुम चित्रकार घन पटल श्याम
मैं तडित तूलिका रचना।

स्पष्ट है कि इस परम सत्ता के प्रति कवि की अशेष अनुरक्ति है। यहा निराला की भक्तिभावना का अच्छा निदर्शन प्राप्त होता है। और यह भावना ही उनकी मानवतावादी दृष्टि का आधार है उनके परवर्ती काव्य मे यह भावना और भी गभीर हो गई है और जो सबध सहज सौंदर्यमूलक थे वे गहन आस्थामूलक हो गए है।

कम की तात्विकता के सबध म निराला को अशेष विश्वास था। उनकी 'अधिवास' शीर्षक कविता म उनकी यह धारणा निरावृत होकर अभिव्यक्त हुई है। नष्कर्म्य की प्रचारक दार्शनिकता म कम मात्र बधन कारक ह परतु निराला कहते ह

देखा दुखी एक निज भाई
दुख की छाया पडी हृदय म मर
झट उमड वेदना आई,
उसकी अश्रुभरी आँखो पर मरे करुणाचल का स्पश
करता मेरी प्रगति अनन्त
किंतु तो भी है नही विमर्श
छूटता है यद्यपि अधिवास,
किन्तु फिर भी न मुझे कुछ त्रास।

इन पक्तियो म निराला की मानवतावादी और लोकोन्मुखी दृष्टि का स्पष्ट

परिचय मिलता है। यहा वे स यासमूलक विचारधारा का अतिक्रमण करते हुए दिखाई देते हैं। वह सीमित अध्यात्म जो कमनिषेध के आधार पर सस्थित है निराला को सतोष नहीं दे पाता।

यद्यपि निराला न कुछ कविताओ मे व्यक्ति के भीतर ही परमतत्व को देखने की योगमार्गी पद्धति भी अपनाई है परतु इस पद्धति का प्रयोग इ होन विरलता के साथ किया है

पास ही रे, हीरे की खान
खोजता कहाँ और नादान ?
कही भी नही सत्य का रूप
अखिल जग एक अध-तम कूप
उर्मि-घूर्णित रे मत्यु महान,
खोजना कहा यहा नादान।

परतु इसी अतरग साधना का एक दूसरा पक्ष वह भी है जहा निराला कहत हैं

श्रमत सतान ! तीव्र
भेद कर सप्तावरण मरण-लोक,
शोकहारी ! पहुँचे थे वहा
जहा आसन हैं सहस्रार—

इससे यह सूचित होता है कि निराला यागमार्गी वैयक्तिक साधना को भी मानवो मे अदम्य शक्ति भर दन के उपाय के रूप म प्रयोग करते है। योगसिद्ध पुरुष के लिए ही उनका कहना है

तुम हो महान,
तुम सदा हो महान्।
है नश्वर यह दीन भाव
कायरता कामपरता,
ब्रह्म हो तुम,
पद रज भर भी है नही पूरा यह विश्व भार

योग की साधनाए आत्म म ही परमात्म तत्व को दखन की किसी वैयक्तिक उपलब्धि के लिए नहीं, वरन मानव आत्मा को अजेय शक्ति प्रदान करने क लिए काम म लाई गई है। यही साधना 'राम की शक्तिपूजा' म घोर निराशा की परिस्थिति म राम को अजेय शक्ति देती और उनकी विजय का कारण बनती है। ऊपर की एक पक्ति म जहा निराला अखिल जग को अधकूप कहत हैं और मत्यु को महान कहकर 'ऊर्मिघूर्णित' बताते हैं, वहा उन पर प्राचीन सत दशन का प्रभाव परिलक्षित होता है।

निराला के प्रेम दशन के उदात्त स्वरूप का उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं। स्त्री पुरुष क लौकिक प्रेम म भी यह उदात्त प्रेम किस प्रकार उच्छलित होता है, यह निराला की प्रसिद्ध कविता प्रिय यामिनी जागी म चित्रित हुआ है। पति के शयनकक्ष स लौटी हुई नारी का यह एक सुदर चित्र है

> हेर उर पट, फेर मुख के बाल,
> लख चतुर्दिक चली मन्द मराल,
> गह म प्रिय स्नह की जयमाल,
> वासना की मुक्ति मुक्ता
> त्याग में तागी।

यहा गहिणी को 'प्रिय-स्नह की जयमाल', 'वासना की मुक्ति' और 'त्याग म तागी हुइ मुक्ता' कहकर निराला न लौकिक प्रेम को महान महिमा से मडित किया है। निराला की य समस्त भावनाए उ ह किसी क्रमागत दशन म बाध नही रखती, वरन जो कुछ स्वाभाविक और स्पृहणीय है, उसकी ओर उन्मुख करती है। निराला की ज्ञान भक्ति कम और प्रेममूलक धारणाए उन्ह किस प्रकार मानववादी और मानवतावादी जीवनपक्षा की ओर प्रेरित कर रही थी, विराट और विश्वात्मवाद के माध्यम से वे किस प्रकार लोक जीवन की भावभूमिका पर प्रत्यागत हो रह थे, इसका कुछ आभास ऊपर दिया गया है। उस उदात्त भूमिका स जब निराला मानव भूमिका पर पदापण करते है, तब उनकी कविता आधुनिक समाज के वषम्यो को भी देखती है और व कहत हैं

> छोड दो जीवन यो न मलो,
> एठ अकड उसके पथ से तुम
> रथ पर यो न चलो।
> मिला तुम्ह सच है अपार धन
> पाया कृश उसने कैसा तन !
> क्या तुम निमल, वही अपावन ?
> सोचो भी सभलो।
> अथवा
> चाल ऐसी मत चलो
> मष्टि से ही गिर रहा जो
> दष्टि से फिर मत छलो।—
> बनो वासन्ती मदुल
> वत्तिका तर की अतुल,
> फिर सुरस सवारिका

मुख सारिका उसकी मुकुल
फिर मधुर मधुदान म नव
प्राण द दकर फलो।

न पक्तियों म निराला की मानवतावादी दृष्टि अत्यत स्पष्ट हो गई है। यह वस्तुत उनक उस अध्यात्मवादी दशन से ही निसृत भावना है। व सामाजिक वपम्यो को एकात्मबोध का अवरोध ही नही, विश्वात्मा का अपमान मानत हैं।

निराला की इस मानवतावादी जीवनदृष्टि का स्वरूप और उसकी प्रेरक आध्यात्मिकता को दख लेन के पश्चात हम उनके जीवनदशन के उस विद्रोही पक्ष पर आत है, जहा वे एक प्रखर और क्रातिकारी समाजद्रष्टा के रूप म दिखाई दत है। 'बादल राग शीषक अपनी आरभिक कविताआ म ही व इस विद्रोह भावना को व्यक्त कर चुके थ। बादल के प्रतीक द्वारा वे उस क्रातितत्व शक्ति का आवाहन कर चुके थे जा सामाजिक वपम्यो को मिटा देन की शक्ति रखता है

भय के मायामय आगन म
गरजो विप्लव के नव जलधर

तथा

रुद्ध कोष है, क्षुब्ध ताष
अगना अग से लिपटे भी
आतक अक पर काप रह हैं
धनी वज्र गजन से बादल
त्रस्त नयन मुख ढाँप रहे है
जीण बाहु है शीण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ऐ विप्लव के वीर।

राजनीतिक क्षेत्र म फले हुए विदेशी शासन के अनाचारो के प्रति क्षुब्ध होकर वे श्यामा का आवाहन करत है

एक बार बस और नाच तू श्यामा!
सामान सभी तयार,
कितने ही हैं असुर, चाहिए कितने तुझको हार?
कर मेखला मुडमालाआ से बन मन-अभिरामा —
एक बार बस और नाच तू श्यामा।

बादल राग' और एक बार बस और नाच तू श्यामा' कविताओ म निराला क्राति का आवाहन प्राकृतिक और आध्यात्मिक प्रतीको के माध्यम स करत हैं। यहा तक उनकी अध्यात्मा मुखी मानव साम्य की प्रेरक और वपम्या की विनाशक विचारधारा

का वह स्वरूप दिखाई देता है जो उनकी मूल दाशनिकता के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। हम देख चुके है य सारी प्रेरणाए उन्हें अपने क्रांतिकारी अद्वैत दशन से प्राप्त हुई हैं यह उनके पूववर्ती काव्य का केंद्रीय दाशनिक पक्ष है। अपने परवर्ती काव्य म निराला की दाशनिकता कुछ नए मोड लेती है और वे आध्यात्मिक सम्पश छोड़कर विशुद्ध लौकिक और सामाजिक भूमिका पर अपनी विचार सरणी को उतार लेत हैं। उनकी इस परवर्ती दाशनिकता का भी परिचय दना आवश्यक है।

परवर्ती दाशनिकता

ऊपर के विवचन म हम देख चुके है कि निराला मूल रूप से भारतीय अद्वत दशन क अनुयायी है और उन पर विवेकानद आदि की नई व्याख्याओ का पूरा प्रभाव है। हमने यह भी देखा कि वेदाती व्याख्याओ से आगे बढकर निराला न मानवता वादी विचार भूमिकाओ को अपनाया है और सामाजिक क्राति का सदश भी दिया है। नारी पुरुप की प्रेम भावना को लेकर उनका जो सौदयवादी और स्वच्छदता वादी काव्य है, उसमे भी इन्ही दार्शनिक और सास्कृतिक परपराओ का योग दखा जा सकता है। निराला का स्वच्छन्दतावाद चाहे वह सामाजिक क्राति के क्षेत्र म हो या नारी और पुरुप के सबधो के क्षेत्र मे सवत्र एक दाशनिक आभा से समन्वित है। पश्चिमी स्वच्छन्दतावाद की तरह वह महान भावोन्मेष की अपक्षा अद्वैतवादी चितन को केंद्र मे रखकर चला है। उनका स्वच्छदतावाद कल्पनामूलक न होकर चितन की प्रेरणाओ से सवलित है।

निराला के परवर्ती काव्य म यद्यपि उनकी दाशनिक चितना और आदश वे ही हैं, जिनका आविर्भाव और पुष्टि उनके व्यक्तित्व के माध्यम से उनकी पूववर्ती काव्य रचनाओ म हुआ था परतु अशत उनका रूपातरण भी हुआ है। अपनी आरभिक रचनाओ म जहा वे किसी महान और व्यापक आध्यात्मिक तत्व का आधार लेना नही भूलत परवर्ती रचनाओ म वैसे उल्लेख अपेक्षाकृत कम हैं। निराला के वैयक्तिक अनुभवो ने उनके आरभिक उल्लास को बहुत कुछ कम कर दिया था और वे सामाजिक जीवन की विकृतियो से क्षुब्ध होने लगे थे। हम स्मरण रखना है कि निराला एक सामान्य परिवार से ऊपर उठकर काव्य साहित्य म प्रविष्ट हुए थे। उनके निजी जीवन म आर्थिक सघर्षों का ताता लगा रहा था। राजनीति के क्षेत्र म उन्होने यह देखा कि नतागीरी भी एक विशेष आर्थिक साच पर प्रतिष्ठित है। इस साचे को उन्होन यत्र-तत्र बड़े कठोर शब्दो म याद किया है

मैं भी होता यदि राजपुत्र —
जितने पेपर, सम्मानित कण्ठ से गाते मेरी कीर्ति अमर,
लक्षपति का यदि कुमार
होता मैं शिक्षा पाता अरब समुद्र पार
देश की नीति के मेरे पिता परम पण्डित
एकाधिकार रखते धन पर भी अविचल चित्त
होते उग्रतर साम्यवादी करते प्रचार,
चुनती जनता राष्ट्रपति उन्हें ही सुनिर्धार,
पसे मे दस राष्ट्रीय गीत रचकर उन पर
कुछ लोग बचते गा गा गदभ मदन स्वर।

'बादल राग' म जा विद्रोह भावना बादल के प्रतीक के माध्यम से व्यक्त हुई है और राजनीतिक क्रांति का जो सदश श्यामा का आवाहन करके प्रस्तुत किया गया है, उसके बदले इन पक्तिया मे निराला की सामाजिक विचारणा माध्यम या आवरण रहित हो गई है। इसे हम निराला के काव्य का नया अध्याय कह सकते है। यही से उनकी उस व्यग्यात्मक दृष्टि का उन्मेष होता है, जिसका सीधा सबध वेदात से न होकर सामाजिक वास्तविकता से है।

इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोडती हुई स्त्री को निराला ने 'स्वराज्य भवन' या आनन्द भवन' के सामन की सडक पर देखा था। उन्होने उसका जो चित्र दिया है, वह इस प्रकार है

कोई न छायादार,
पेड वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार—
चढ रही थी धूप,
गर्मिया के दिन,
दिवा का तमतमाता रूप,
उठी झुलसाती हुई लू,
रुई ज्या जलती हुई भू—
सामने तरु मालिका अट्टालिका, प्राकार।

यह दृश्य आनन्द भवन के सामने का है और इस प्रकार इसम एक निहित राज नीतिक व्यग्य भी है।

निराला की परवर्ती काव्य रचना मे एक द्वद्वात्मकता आदि से अत तक व्याप्त है। एक ओर वे वैयक्तिक अवसाद और पारिवारिक विभीषिकाआ म फसे हुए हैं और दूसरी ओर सामाजिक अन्याय और अनाचार उन्हें उत्पीडित कर रहे हैं। इन दोनो दबावो के परिणामस्वरूप निराला के परवर्ती काव्य मे व्यग्य और विडबना

का प्राधान्य हो गया है। दूसरी ओर वे अपनी उदात्त दार्शनिकता के दृढ मूल सस्कारो से भी आबद्ध हैं। फलत उनकी इस समय की रचनाओ म एक ओर राम की शक्तिपूजा' और तुलसीदास जैसी उदात्त सृष्टिया हैं, वहा दूसरी ओर 'कुछ कर न सका तो क्या जसे करुण सकेत है। परिस्थितिया क इस खिचाव न निराला के काव्य को दो खडो म विभक्त कर दिया है। कुछ लोग उनकी इन दोहरी प्रवृत्तिया म क्रमश आदशवाद और यथार्थवाद के दार्शनिक तथ्यो का आकलन करते है। पर वस्तुत यह निराला के एक ही व्यक्तित्व के दो पृथक प्रतीत होने वाले पहलू हैं। उनकी यथार्थो मुख भावना और प्रवत्तिया न तो किसी भौतिक वादी दशन की उपज है, और न इनम किसी वस्तुवादी कला शैली का ही विन्यास है। वास्तव म ये निराला की सास्कृतिक चेतना के विघटन की सूचनाए है।

कुरूप जीवनस्थितिया

निराला के व्यग्य काव्य म एक प्रखरता है जो आग चलकर क्षीण हुइ है और एक हास परिहास मे परिवर्तित हो गइ है। इस हास परिहास से भी आग बढकर निराला अपने अतिम जीवनकाल मे करुण सवदनाओ के कवि बन गए है। उनके व्यग्य चरण का उल्लेख हम ऊपर कर चुके है। उनकी हास्य विनोद और विडबना की रचनाए 'कुकुरमुत्ता' खजोहरा और 'स्फटिक शिला आदि म दखी जा सकती है। कुकुरमुत्ता मे निराला का दार्शनिक पक्ष एकदम स्पष्ट नही है। कुछ समीक्षका न इसे पूजीवाद और सामतवाद के विपरीत पक्ष म रखकर देखा है। कुछ अन्य समीक्षका न इसम किसी भी रचनात्मक विचारधारा का अभाव पाया है। उनका कहना है कि इस कविता म निराला आदि से अत तक परिहास ही परिहास करत गए है। उसकी इस तलवार म धार ही धार है मूठ है ही नही। य विवचनाए आशिक रूप से ही सही कही जा सकती हैं। निराला वास्तव म सवत्र व्याप्त कुरूपता मे खिन्न और क्लात है। परतु वे अपन उस मूल सास्कतिक आदश को भूल नही है जिसकी दो विकतिया गुलाब और कुकुरमुत्ता क रूप म दिखाई दती हैं। इस कविता म परिहास के अतिरिक्त एक रचनात्मक पक्ष भी है और वह पक्ष है उक्त दोनो विकतियो के स्थान पर एक नइ अभ्युत्थशील सस्कति की प्रतिष्ठा का। इसी प्रकार खजोहरा और स्फटिक शिला के कुरूप वस्तु चित्रण म भी निराला की व्यजना एकदम नकारात्मक नही है। वह कुरूपता से खिन्न है और उसके सस्कार की आशा उनम विद्यमान है।

प्रश्न यह है कि निराला के इस परवर्ती काव्य विकास म कौन सी दार्शनिक दृष्टि क्रियाशील है ? इसके उत्तर म हम कह सकत है कि इसम उनके पूववर्ती काव्य की सी कोई विधायक और सुस्पष्ट दार्शनिकता ढूढ निकालना कठिन है।

वस्तुत यह सीधी प्रतिक्रियायो का काव्य है और इसका चिंतन पक्ष बहुत कुछ प्रकीणक है। अनेक बार तो निराला के अवचेतन मे स्थित दार्शनिक सस्कार भी इस परवर्ती काव्य म अपना प्रभाव दिखा सके हैं। कई बार कवि की तात्कालिक प्रवत्तिया प्रमुख हो गई हैं और वसे स्थला म काव्य का कोई स्वतत्र दार्शनिक आधार नही रह गया है।

1950 के पश्चात निराला पुन अपने आघ्यात्मिक जीवनदशन पर पहुच जात हैं पर एक अतर के साथ। इस बार की दार्शनिकता म ओजस्विता विस्तार और प्रमुख सामाजिक आशय कम हा गया है तथा उसके स्थान पर वैयक्तिक करुणा, विवशता और ऐकातिकता प्रमुख हा गई है। बीच बीच म निराला सामाजिक जीवन की असाध्य विकृतिया की भी चर्चा करत हैं और उनसे त्राण के लिए विश्व शक्ति का आवाहन करत है। परतु यह आवाहन भी करुणा और दया की भिक्षा के रूप म ही किया गया है। इस प्रसग का एक प्रसिद्ध गीत यह है

दलित जन पर करा करुणा।
दीनता पर उतर आय
प्रभु तुम्हारी शक्ति अरुणा।
हरे तन मन प्रीत पावन
मधुर हो मुख मनोभावन,
सहज चितवन पर तरगित
हो तुम्हारी किरण तरुणा।

दो अय भूमिकाआ पर निराला का परवर्ती जीवनदशन अधिक शक्तिशाली और सक्रिय दिखाई दता है। उनम स एक नारी के प्रति निराला की बढती हुई श्रद्धा है और दूसरी प्रकृति के प्रति निराला का बढता हुआ विश्वास है। उनके आरभिक स्वच्छदतावादी काव्य म भी य दाना भावभूमिया आइ है परतु वहा निराला की मुख्य भावना सौंदर्याकन की है। परवर्ती काव्य मे ये दाना पक्ष अधिक गभीर जीवनचेतना के अग वन गए है। नारी के सबध मे निराला की परिणत दष्टि इस प्रकार है

तन की, मन की धन की हा तुम।
नव जागरण, शयन की हो तुम।
काम कामिनी कभी नही तुम
सहज स्वामिनी सदा रही तुम,
स्वर्ग दामिनी नदी बही तुम,
अनयन नयन नयन की हो तुम।

मोह पटल मोचन आराचन,
जीवन कभी नही जन शोचन,
हास तुम्हारा पाश विमाचन,
मुनि की मान, मनन की हो तुम।

यहा निराला नारी शक्ति के प्रति रामटिक दृष्टि से ऊपर उठ गए हैं और उ हान अधिक गभीर भूमिका अपनाई है। इसी प्रकार प्रकृति विषयक निराला का दृष्टि कोण भी परिवर्तित हुआ है। आरभ म प्रकृति की शृ गारिक छवि से निराला अधिक आकृष्ट थ। वे प्राकृतिक चित्रो को मानवीय शृ गार-प्रतीका के सहयाग से व्यक्त करत थे। अनक बार उ होन प्राकृतिक शृ गार और मानवीय शृ गार म कोई अतर नही रहन दिया परतु आग चलकर जब निराला की चेतना म मानवीय जगत की कुरूपता अधिक गहर पैठ गई, तब उ होने प्रकृति का मानव सबधो से अलग कर दिया और प्रकृति को वस्तुमुखी सत्ता के गायक बन गए हैं। इस परवर्ती समय म प्रकृति निराला की अधिक गभीर आशय बन गई है और वे उसे जीवन समृद्धि का अक्षय स्रोत मानने लगे हैं। निम्नलिखित कविता उनकी प्रकृति सबधी परवर्ती दृष्टि का एक उदाहरण है

शरत की शुभ्र गध फैली,
खुली ज्योत्स्ना की सित शली।
काले बादल धीर धीर
मिटे गगन को चीरे-चीर,
पीर गई उर आये पीर,
बदली द्युति मैली।
शीतावास खगो न पकडे,
चहचह से पडा को जकडे,
यौवन से वन उपवन अकडे,
ज्वारा की लटकी है थली।

इसकी तुलना म निराला की इन वर्षों की मानव सबधी कल्पना कितनी कुरूप है

मानव जहा बल घाडा है
कसा तन मन का जोडा है ?
किस साधन का स्वाग रचा यह,
किस बाधा की बनी त्वचा यह,
दख रहा है विन आ ि
बय भाव का य

इस पर मे विश्वास उठ गया,
विद्या से जब मल छूट गया
पक पक कर ऐसा फूटा है,
जसा सावन का फाडा है।

निराला की आरभिक दाशनिकता मे प्राकृतिक और मानव जगत की एक ही सत्ता है, परतु यहा आकर इन दोनो का सपूण विच्छेद हो गया है। इस प्रकार हम देखन है कि जीवन के कटु तीक्ष्ण अनुभवो के फलस्वरूप निराला के दाशनिक आदर्शों और धारणाओ म काफी परिवतन हुआ है। यद्यपि यह भी सच है कि निराला की मूल आध्यात्मिक चितना किसी न किसी रूप मे अपन लिए आधार ढूढती और पाती रही है।

निराला के अद्वतवादी अध्यात्मदशन के साथ किस प्रकार उनकी मानवतावादी और लौकिक सामाजिक सघष की भावना जुडी हुई है, यह हमन ऊपर दखन का प्रयत्न किया है। उनके आरभिक काव्य म बहुत वर्षो तक लौकिक सघष के साथ आध्यात्मिकता का सबध अविच्छिन्न बना रहा है यह भी हम देख सके है। उनके परवर्ती काव्य म इन लौकिक और आध्यात्मिक पक्षो मे खिचाव बढता गया है और कही कही दोना के विच्छिन्न होन की स्थितिया भी आ गई है। प्रकृति और मानव जीवन का एक ही आध्यात्मिक सूत्र म बाध रखन की निराला की आरभिक भावना और कल्पना सबस अधिक आहत हुई है और इसी पक्ष म सबसे अधिक खिचाव दिखाई दिया है। इस खिचाव की दो परिणतिया सभव और सभावित थी। एक यह कि निराला विशुद्ध लौकिक भूमिका पर आ जान और अपनी चेतना के उन तत्वा को जो विश्वात्मवाद मे सबधित थे एकदम ही छोड देते। दूसरी सभावना यह थी कि व अपन मूल आध्यात्मिक दशन को अक्षुण्ण रखकर काव्य रचना करत। निराला ने अतत दूसरी भूमिका ही स्वीकार की है और अपन अतिम गीतो म वे विश्वशक्ति के प्रति अपनी समपण भावना व्यक्त करने लगे हैं। यद्यपि यह आध्यात्मिक भावना थी परतु यह उनके आरभिक अध्यात्म स जो विराट का प्रतीक था और जिसम निराला विद्रोह की प्रेरणा ले रहे थे बहुत कुछ भिन्न अध्यात्म है। इस परवर्ती अध्यात्म म निराला की वयक्तिक और ऐकातिक भावनाओ का अधिक गहरा सस्पश है। इस प्रकार की एकातिक भक्तिभावना एक ईश्वर या त्राणकर्ता की आकाक्षा रखती है और उस अद्वत तत्व म भिन्न हो जाती है जो व्यष्टि और समष्टि म कोई अतर नही दखता तथा जो समस्त सष्टि म व्याप्त होकर भी उसम अतिरिक्त है। ईश्वर तत्व की ईशमुखी कल्पना निराला के आरभिक काव्य म परिलक्षित नही होती। उनकी दो एक रचनाए ऐसी भी है जो अद्वतवाद मे निसत होकर भी निरीश्वरवाद का

सकेत दती हैं। एक कविता इस प्रकार है

कौन तम के पार ? र कह।
अलिख पल के स्रोत, जल जग,
गगन घन घन धार—। रे कह।
ग ध व्याकुल कूल उर-सर,
लहर-कच कर कमल मुख पर,
हष अलि हर स्पश शर सर
गूज बारम्बार। र, कह।
उदय म तम भेद सुनयन
अस्त दल ढक पलक क्ल तन,
निशा प्रिय उर शयन सुख घन,
सार या कि असार ? र कह।

इस गीत म निराला न तम क पार अथवा पाचभौतिक जगत के परे किसी अपर सत्ता के अस्तित्व म शका प्रकट की है। इस कविता का सारा वि यास जगत के समस्त द्वता म अद्वत की व्याप्ति देखता है। जो सत्ता (सूय) उदयकाल म अधकार का भेदन करती है, अस्त के समय वही अपनी पखुडियो का ढक लेती है और वही निशाकाल म प्रिया प्रियतम के मिलनात्मक सुख का आधार बनती है। इस वैविध्य म ही सब कुछ है। इस सार कह या असार। गीष्म ही वर्षा का हतु है। द्रवित जल ही नीहार (हिम प्रस्तर) बनता है। इन दृश्यमान विभेदा म व्याप्त अभेद ही एक त व है। भेदा क परे अभे की कोई पृथक पहचान नहा है। यह दृष्टि अनीश्वरवाद के अत्यधिक समीप है। परतु अपनी परवर्ती कविता म निराला की भक्ति भावना विशुद्ध ईश्वरवादी हो गइ है। वे उपास्य और उपासक सबध के भावस्तर पर आ गए हैं। इस प्रकार हम दखते है कि निराला की आरभिक अद्वत भावनापन्न भक्ति और उनकी परवर्तिनी द्वैतवादी भक्ति म बहुत अतर आ गया है।

अपन परवर्ती का यकाल म निराला न भक्ति और विनय सबधी रचनाआ के अतिरिक्त सहस्राब्दी महात्मा बुद्ध क्या यही दिल्ली है', शीषक सास्कृतिक स्तर की कविताए भी लिखी है, जिनम भारतीय जीवन और सस्कृति क उदात्त तत्वा का आलबन किया गया है। निराला की इन कविताआ म उनके आरभिक काव्य-काल का पुनदशन हाता है यद्यपि यहा भी यह अतर विद्यमान है कि इन परवर्ती रचनाआ म उनका मयन और अध्ययनशील पक्ष अधिक प्रमुखता से प्रतिफलित हुआ है। उनकी आरभिक सास्कृतिक भावनाआ की कविताआ म और इन परवर्ती सास्कृतिक कविताआ म यह अतर है कि उनकी पिछली कविताए अधिक वस्तु-

मुखी, विवरणपूण और पाडित्य की निदशक है। इसी समय उन्होंने रामकृष्ण आश्रम की अपनी पुरानी अभिज्ञता क आधार पर सवा आरभ' जैसी लबी कविता भी लिखी, जा विशुद्ध विवरणात्मक है। भावोन्मेष क क्षणो म जो इतिवृत्तात्मकता या विवरणप्रियता विलीन होकर भावव्यजना और रसव्यजना का आधार बन जाती है वह इन कविताओ म परिस्फुट नही हो सकी, वरन इनम वह इतिवृत्त बनकर ही आई है। इसस यह भी सूचित हाता है कि निराला की यह परवर्ती दाशनिकता उनक व्यक्तित्व स सीधे निसृत न होकर स्वतत्र वस्तु क रूप मे अभिव्यक्त हुई है। निराला के पूववर्ती और परवर्ती काव्य क दाशनिक अतर का हम उपयुक्त रूपो म दख सकत है।

काव्य के माध्यम स अभिव्यक्त निराला के दाशनिक पक्ष का हम मुख्यत चार चरणो म विभाजित दखत है। उनका प्रथम चरण समृद्ध और सशक्त अद्वैतवादी दशन का रहा है जिसक अतरग स उनकी मानवतावादी दृष्टि का उन्मेष हुआ है। यह चरण उनकी सश्लिष्ट दाशनिकता और उनके काव्य का सपूण रूप मे आलोकित कर सका है। उनका द्वितीय चरण दाशनिक भूमिका पर द्विधात्मक हो गया है। एक ओर उनकी सशक्त आध्यात्मिकता है तो दूसरी ओर उनके निजी जीवन के अनुभवो से प्रभावित उनकी व्यग्यात्मक दृष्टि है। यह व्यग्यात्मकता उनकी दाशनिक एकात्मकता म दरारें पदा करती है यद्यपि इनस उनका मूल चिंतन विक्षत नही हुआ था। निराला क ततीय चरण म लौकिक जीवन का कुरूप पक्ष उनकी चेतना का बहुत दूर तक क्षुब्ध कर चुका था और वे जीवन सबधी कुरूप प्रतिक्रियाए व्यक्त करन लग थ। हास्य और विनोद क माध्यम स उनका यह तृतीय दाशनिक चरण अभिव्यक्त हुआ है। इस हम निराला की विघटित दाशनिकता का चरण कह सकते हैं। अपन चतुथ चरण म उन्होन फिर स आध्यात्मिक दशन का पल्ला पकडा था। परतु इस बार वे द्वतभक्ति और शरणागति की ओर अधिक अनुप्रेरित है। यदि काव्य के बाहर जाकर निराला के दाशनिक या वैचारिक परिवतनो को देखें, तो वहा भी इसी प्रकार के चरण दिखाई देंगे। कथा साहित्य म अप्सरा' और 'अलका म उनकी भावात्मक और आदशवादी दृष्टि सक्रिय है। उनकी कहानियो म यत्र तत्र कुरूप जीवनचित्रो का आगमन होन लगा है। त्रिल्लसुर बकरिहा' तथा 'कुल्लीभाट' म उनकी व्यग्यात्मक दृष्टि और प्रचलित सामाजिक मूल्यो पर अविश्वास स्पष्ट हो गया है। य तीन चरण तो स्पष्ट हैं किंतु इसके पश्चात निराला कथासाहित्य की कोई व्यवस्थित कृति प्रस्तुत न कर सक जिसस उनक अतिम वर्षो की चिंतना का हम परिचय मिलता। काव्यरचना म जहा वे अपन अतिम चरण म प्राय 300 सुदर भावात्मक गीत हम दे गए है, उसक समानातर उनकी कोई कथाकृति नही है। परतु निराला की बदलती हुई

दार्शनिक दृष्टि का जो स्वरूप उनके काव्य म अभिव्यक्त हुआ है, उसकी अनुरूपता एक सीमा तक उनके कथासाहित्य म भी दिखाई दती है। इस प्रकार निराला दशन के सबध म हमारा यह विवेचन अपर साक्ष्य द्वारा भी समर्थित हाता है। यद्यपि कवि का काय सौदयसृष्टि है और उसकी दार्शनिकता का मूल्य उस सौदय को पुष्ट बनान और आलोकित करन म है फिर भी किसी कवि के दार्शनिक पक्ष का अनुशीलन स्वतन्त्र रूप स करना भी उपादेय हाता है। ऐसे काय से कवि के व्यक्तित्व और उसके काव्य पर पडन वाले प्रभावो का आलकन करन म सहायता मिलती है। इसी उद्देश्य से यहा निराला काव्य के दार्शनिक पक्ष पर विचार किया गया है।

आधुनिक प्रगीत और निराला

नवजागत राष्ट्रीयता की प्रेरणा से कितने ही नए कवि और लेखक नया साहित्यिक निर्माण करने लगे थे। असहयोग आदोलन से उतना सीधा सबध मथिलीशरण का नही था, जितना उनके छोटे भाई सियारामशरण का था। महात्मा गाधी द्वारा प्रवर्तित राजनीतिक और सामाजिक आदोलन की पहली ही हलचल म सियाराम शरण क भावुकतापूण आख्यानगीत और रामनरेश त्रिपाठी की सुमन, 'पथिक' और 'मिलन' जसी रचनाए प्रकाशित हुइ। गोपालशरण सिह की रचनाओ म भी एक नया प्रभाव दखा गया और गयाप्रसाद सनेही तो अत्यत सीधी और प्रभाव पूण 'राजनीतिक कविता करने लग। राष्ट्रीय आदोलन की इस पहली बहार मे ही हिंदी साहित्य को इन नए कविया और लेखको का उपहार मिला।

परतु य कवि और लेखक राष्ट्रीय आदोलन के इतने सीधे प्रभाव म थे कि उन्होने अपनी राष्ट्रीय भावनाओ को राजनीतिक या सामाजिक आख्यानो' की सीमा म ही बाध दिया। इतनी सीधी और तात्कालिक प्रेरणा स की गई रचनाओ म कदाचित उतनी काव्यात्मक व्यापकता नही आती, जितनी श्रेष्ठ काव्य के लिए अपेक्षित होती है। किसी भी राष्ट्रीय आदोलन के कतिपय पहलुओ को ज्यो का त्यो चित्रित कर देना अथवा उस आदोलन की तात्कालिक प्रतिक्रिया म कोई रचना प्रस्तुत कर देना, कवि की भावना और कल्पना का अधूरा ही आयास कहा जाएगा। इतनी प्रत्यक्षता काव्यसाहित्य के लिए लाभकर नही होती। इस प्रक्रिया म न तो कविकल्पना का पूरा पाचन हो पाता है न रचयिता के भावो के साथ उसके सास्कतिक और साहित्यिक और सामथ्य का पूरा योग हो पाता है। साहित्य कोरी राजनीति नही है, न वह राजनीतिक भावना का उच्छ वास मात्र है। साहित्य वास्तव मे कवि की भावसत्ता क साथ उसक सपूण व्यक्तित्व का समाहार है।

नवीन प्रगीतरूप

य रचनाए नई थी और सुदर भी, किंतु इनम रचनाकारो क व्यक्तित्व का उतना अतरग योग न हो पाया, जितना अपेक्षित था। इस दष्टि से कवियो और लेखको का एक दूसरा वग अधिक प्रशस्त साहित्यिक आधार लेकर आया। इन रचयि-

ताओ ने अपने भावा की अभिव्यक्ति के लिए 'सीधे राजनीतिक आख्याना' का सहारा नही लिया वे मुक्तका और भावगीता म अपनी भावना का प्रकाशन करने लगे। यद्यपि उनकी भावना भी राष्ट्रीयता से पूरी तरह अनुप्रेरित थी, परतु उसके प्रकाशन का माध्यम उतना समीपी या सन्निकट न था। इस दूरवर्ती माध्यम को अपना लेने स दो लाभ हुए। एक तो कविया की भावना म व्यापकता आई और उन्ह 'सीधी राजनीतिक प्रेरणा स छुटकारा मिला और दूसरे उन्ह प्रगीतमुक्तक के रूप म एक नई काव्यशली का निर्माण करन का अवसर प्राप्त हुआ।

पुराने विवचको न हम यह समझाया है कि आख्यानक या कथात्मक काव्य मुक्तक या प्रगीत की अपक्षा काव्यदृष्टि स अधिक प्रशस्त या समुन्नत होता है और इसके कई कारण भी उन्होंने बताए है। प्रबधकाव्य या सगवद्ध रचना लबी होती है और उसम जीवन के अनकानक रूपा और मानवसबधो का चित्रण और व्याख्या की जा सकती है। यह बात अशत ठीक हो सकती है, पर दूसरी दृष्टि स दखने पर प्रगीत की विशेषताए भी स्पष्ट हो जाती है। प्रगीतकाव्य म कवि की भावना की पूण अभिव्यक्ति होती है, उसम किसी प्रकार के विजातीय द्रव्य के लिए स्थान नही रहता। प्रगीता म ही कवि का व्यक्तित्व पूरी तरह प्रतिबिंबित होता है। वह कवि की सच्ची आत्माभिव्यजना होती है। कथानककाव्या म जीवन के भावात्मक सघप और चरित्रो की रूपरेखा रहा करती है पर कवि के अतस्तल का उद्घाटन प्रगीत म ही सभव है। प्रबधकाव्य म दृश्यचित्रण और वस्तुचित्रण के साथ बहुत सा इतिवृत्त भी लगा रहता है, परतु प्रगीतरचना म कविता इन समस्त उपचारो से विरत होकर केवल कविता या भावप्रतिमा बनकर आती है। सगीत के स्तरो की भाति प्रगीत के शब्द ही अपनी भावना इकाइयो से कविता का निर्माण करते है उनम शब्द और अथ, लय और छद अथवा रूप और निरूप्य की अभि न्नता हो जाती है। प्रबधकाव्य कविता का आवृत और आच्छादित रूप है। प्रगीतकाव्य उसका निर्व्याज निखरा हुआ स्वरूप है। प्रबधकाव्य यदि कोई रसीला फल है जिसका आस्वादन छिलक, रेशे और बिए आदि निकालन पर ही किया जा सकता है तो प्रगीतरचना उसी फल का द्रवरस है जिसे हम तत्काल घूट घूट पी सकत हैं।

ऊपर जिस नई प्रगीतसृष्टि की चर्चा की गई है उसके आरभिक स्रष्टा कानपुर की प्रभा' के कवि थे। इनम माखनलाल चतुर्वेदी और बालकृष्ण शर्मा नवीन' क नाम मुख्य रूप स लिए जा सकत है। इस नए काव्यस्वरूप का नवनिमाण बडे भावुक हाथा म हो रहा था। राजनीतिक और राष्ट्रीय भावना से अनुप्रेरित य प्रगीत, स्वरूप म अति लघु और सख्या म अति स्वल्प थ जिसस यह सूचित होता है कि प्रगीत की कला हिंदी म अभी अवतरित हा रही थी,

परतु नई कविता का यह नया वाहन इन राष्ट्रीय कवियो द्वारा भी पूरी तरह तयार न किया जा सका। अभी इसका परिपूर्ण विकास शेष था। कवि प्रसाद, मुकुटधर पाडय और रूपनारायण आदि स्वतन्त्र रीति से इस नए काव्यभाजन प्रगीत का निमाण करन मे लग हुए थे। ये कवि केवल राष्ट्रीय न थ, य नव-जीवन की अधिक व्यापक भावनाभूमि पर काम कर रह थे। प्रसाद का 'झरना' नए जीवनस्रोत से समन्वित था। रूपनारायण के 'वनवभव म नई स्वच्छद भावना का अच्छा योग था। मेरे जीवन की सरिता आखो क आसू म ढल जा' ह अनजान विदशी आज जैसी रचनाओ म नए युग की भावना और कवि की वैयक्तिक चेतना या सवेदना समस्त साहित्यिक सामाजिक रूढियो और पूव सस्कारो का बोझ त्यागकर निरावरण हो रही थी और उसी मात्रा म नए प्रगीत का भी निर्माण और निखार हो रहा था।

इस निमाण की रही सही कमी पूरी की पत और निराला न जिन्होने नए प्रगीत का नितात नई कल्पना मे अभिषेक किया, भाषा को नई वश भूषा दी, अभिव्यजना की नूतन मुद्राए और भगिमाए भट की। कविताकामिनी अब नए स्वरूप म मजकर प्रस्तुत हो गई। इसे नया रूप और नई काति, नया कलेवर और नई लयगति इन दोनो कवियो ने प्रदान की। प्रगीत नए युग का काव्यप्रतीक बना। इसके निर्माण मे किसी ओर से नई भावना नई अभिव्यजना अथवा नए काव्यमाचे की दृष्टि से कोई कमी तो नही रह गई है, इसी की परीक्षा के लिए निराला न इस नए काव्यपात्र प्रगीत को ठोक बजाकर दखा, मुक्तछद के द्वारा इसे बलपूवक झकझोर कर देखा और जब किसी ओर मे कोर कसर नही दीखी, तब इसे नए युग के प्रतिनिधि काव्यभाजन की प्रतिष्ठा दी गई।

ऊपर कहा जा चुका है प्रगीतकाव्य म शब्द और अथ, लय और छन्द, तथा रूप और वस्तु एक दूसरे के समीप आकर अभिन्न हो जात हैं। इसी क साथ यह भी जान लेना चाहिए कि प्रगीत म कवि की भावना कल्पना उसकी अभिव्यजना और उसके द्वारा निर्मित प्रगीत के रूप म भी एकता या तादात्म्य स्थापित हो जाता है और उमी अवस्था म प्रगीत अपने वास्तविक काव्यात्मरूप को प्राप्त करता है। इन द्विविध तत्वो के एकदम समीप आ जाने और अतर खो दने म ही प्रगीत का प्रगीतत्व है। इस दृष्टि से हम यह भी कह सकत हैं कि प्रगीतकाव्य की निमात्री भावना म और उस भावना द्वारा निर्मित प्रगीत भाजन म तात्विक एकता होती है। एक विशेष प्रकार या अवसर की भावना या अनुभूति, जिसम कवि का व्यक्तित्व पूरी तरह खो गया हो और साथ ही जिसम किसी रूढ भावना या सस्कार का याग न हो प्रगीत का निर्माण करती है अतएव इस काव्यरूप

'आँसू' के पहले के प्रगीतों में भी नई कल्पना का योग हो चुका था। 'आंसू' पर पहुंचते पहुंचते हिंदी प्रगीत अपनी पखुडियां खोलने लगा था यद्यपि यह मानना पडेगा कि प्रगीत का परिपूर्ण विकास निराला और पंत की रचनाओं में ही दिखाई दिया। निराला में प्रयोगों का बाहुल्य है जो उनके काव्याधिकार का परिचायक है। उन्होंने प्रगीत की अनेक शैलियों का आविष्कार किया। पंत की प्रगीतसृष्टि में कल्पना और सौंदर्यानुभूति चरम सीमा पर पहुंची हुई है।

प्रगीत रचनाएं

अब हम नवीन प्रगीतकाव्य के तीन प्रतिनिधि कवियों प्रसाद निराला और पंत —को लेकर उनके काव्यविकास की संक्षिप्त चर्चा करेंगे। यह उल्लेख किया जा चुका है कि 'प्रभा' के कवियों ने किस प्रकार राष्ट्रीय भावना का पथिक और 'सुमन' जैसे आख्यानों और सनेही के स्फुट 'राजनीतिक' पद्यों की सीमा से अलग निकाल कर मुक्तक गीतों का स्वरूप दिया। परन्तु जैसाकि कहा जा चुका है केवल राष्ट्रीयता की भावना देश और समाज के सांस्कृतिक जीवन के बहुमुखी पहलुओं का स्पर्श नहीं करती और एक बड़ी सीमा तक एकांगी बनी रहती है। कदाचित इसीलिए बहुत समय तक और बहुत दूर तक 'राष्ट्रीय' कविता नहीं की जा सकती। विश्वसाहित्य में भी श्रेष्ठ, किंतु कोरी राष्ट्रीय कविताओं की संख्या थोड़ी ही है। नवयुग के कवियों ने इस तथ्य को स्वभावत समझ लिया था और इसीलिए उनकी रचनाएं 'राष्ट्रीय' न रहकर अधिक राष्ट्रीय और सांस्कृतिक भूमियों पर पहुंची थीं।

प्रसाद के प्रगीत अतीत की सुखद स्मृतियों से एक हल्के विषाद में भरी प्रतिक्रिया लेकर आए थे। साथ ही उनकी आरंभिक रचनाओं में यौवन और शृंगार की अतृप्त अतिशयता भी लगी हुई थी। 'चित्राधार' और 'कानन कुसुम' के छाया संकेतों में इन्हीं दबी भावनाओं का आभास मिलता है और 'झरना' की छोड़ मत यह सुख का क्षण है' उत्तेजित कर मत दौड़ाओ यह करुणा का थका चरण है आदि पंक्तियों में इसी की गूंज है। आँसू में प्रसाद के कवि का यह वैयक्तिक पक्ष पूरी तरह उभर आया है परंतु इसी के साथ कवि की एक अभिनव दार्शनिकता उतनी ही प्रभावशालिता के साथ काव्य का अंग बन गई है। उद्दाम शृंगारिक स्मृतियों के साथ संपूर्ण समाधानकारक दार्शनिक अनुभूति 'आंसू' की विशेषता है। भावनाओं के असाधारण उद्वेग के साथ उतनी ही प्रगाढ दार्शनिक अनुभूति का योग रचना में एक अपूर्व मार्मिक संतुलन ले आता है। और यह दर्शनशासित मार्मिक प्रेमगीति नई कल्पना तथा नए काव्याभरण का योग पाकर युग की एक प्रतिनिधि कृति हो गई है। अनेक कवियों ने इस

प्रगीत के निर्माण म इस युग की काव्यभावना का इतिहास भी सलग्न है, यह हम अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। दूसर काव्यरूपा या काव्यभाजना का विकास भी युगा की काव्यसाधना का परिणाम होता है, परतु प्रगीत का कवि के व्यक्तित्व और उसकी निजी भावना से एकमात्र सबध होन के कारण सक्षेप म प्रगीत के 'सब्जेक्टिव आट' होन की विशेषता के कारण नए युग क इस काव्यरूप के विकास म नवीन कवियो की भावनाधारा का विकास भी छिपा हुआ है।

नए युग मे प्रगीत के इस काव्यरूप के विकास का अध्ययन इसीलिए अत्यत मनोरजक है। हम मथिलीशरण को वह केंद्रबिदु मान सक्त है, जहा स नवीन आख्यानक काव्य और साथ ही नवीन प्रगीत की एक साथ उदभावना होती है। मैथिलीशरण गुप्त की आरभिक काव्यरचनाए, जिनका हम ऊपर उल्लेख कर चुके है, निबधात्मक होती थीं। इन निबधा म कभी किसी आख्यान का माध्यम रहा करता था। और कभी बिना आख्यान के ही कोई बात कही जाती थी —जसे नर हो न निराश करो मन को'। गुप्त के इन दोना आरभिक काव्य प्रकारा म निमाण की दृष्टि स अधिक अतर नही था—थोडा बहुत अतर था तो आकार का। आख्यान कुछ लबे होत थे आर निराख्यान रचनाए कुछ छोटी होती थी। यद्यपि इसके अपवाद भी मौजूद है और मिल जात है। गुप्त क इन्ही प्रारभिक प्रयोगा स नवीन कथानककाव्य की और नवीन प्रगीतकाव्य की भी सष्टि माननी चाहिए। कथानककाव्य तो स्वय गुप्त के खडकाव्यो गुरुभक्तसिंह के नूरजहा काव्य और 'हल्दीघाटी जस वीराख्याना का पार करता हुआ कामायनी की प्रतिनिधि काव्यसष्टि म परिणत हुआ और इस परिणति के बाद भी 'कुरुक्षेत्र और 'कैकेयी' जैसी नवीन कृतिया प्रस्तुत की गइ, परतु प्रगीतकाव्य क विकास की मजिलें और भी स्पष्ट है। मैथिलीशरण के प्रौढ काल के भावगीत, हरिऔध तथा उनके समसामयिका की 'चतुदशपदिया' आदि नवीन प्रगीत के आरभिक प्रयाग है। इनम कवि क व्यक्तित्व का याग आशिक है। व विषय प्रधान और वस्तु मुखी कृतिया ह। दूसर चरण म माखनलाल चतुर्वेदी के व स्फुट मुक्तक गीत आत है जो आकार म प्राय छोट और अभियजना म प्राय थोडी सी जटिलता लिए होत ह। इनक आकार म ज्याही कुछ वद्धि होती है, जटिलता और भी बटन लगती है। एसा प्रतीत हाता है कि कवि की भावना अधिक विस्तार सहन नही करती। कदाचित इसीलिए चाह नहीं है सुरबाला क गहना म गूथा जाऊं जसी छोटी रचनाए अधिक निर्दोष हैं और प्रगीत का पूरा आभास लिए हुए हैं। निश्चय ही य गुप्त के वस्तुप्रधान भावनागीता स एक श्रेणी आग की कलासष्टि है। तीसरा महत्वपूण याग स्वय प्रसाद का है जिनके

'आँसू' के पहले के प्रगीतो म भी नई कल्पना का योग हो चुका था। 'आसू पर पहुचते पहुचते हिन्दी प्रगीत अपनी पखुडिया खोलने लगा था, यद्यपि यह मानना पडेगा कि प्रगीन का परिपूर्ण विकास निराला और पत की रचनाओ म ही दिखाई दिया। निराला म प्रयोगो का बाहुल्य है, जो उनक काव्याधिकार का परिचायक है। उन्होने प्रगीत की अनेक शैलिया का आविष्कार किया। पत की प्रगीतसृष्टि मे कल्पना और सौंदर्यानुभूति चरम सीमा पर पहुची हुई है।

प्रगीत रचनाए

अब हम नवीन प्रगीतकाव्य के तीन प्रतिनिधि कवियो- प्रसाद, निराला और पत —को लेकर उनके काव्यविकास का सक्षिप्त चर्चा करेग। यह उल्लेख किया जा चुका है कि 'प्रभा' के कवियो न किस प्रकार राष्ट्रीय भावना को पथिक और 'सुमन' जैसे आख्यानो और सनेहो के स्फुट राजनीतिक' पद्यो की सीमा स अलग निकाल कर मुक्तक गीतो का स्वरूप दिया। परतु, जैसाकि कहा जा चुका है केवल राष्ट्रीयता की भावना देश और समाज के सास्कृतिक जीवन के बहुमुखी पहलुओ का स्पश नही करती और एक बडी सीमा तक एकागी बनी रहती है। कदाचित इसीलिए बहुत समय तक और बहुत दूर तक 'राष्ट्रीय कविता नहा की जा सकती। विश्वसाहित्य म भी श्रेष्ठ किंतु कोरी राष्ट्रीय कविताओ की सख्या थाडी ही है। नवयुग क कवियो न इस तथ्य को स्वभावत समझ लिया था और इसीलिए उनकी रचनाए राष्ट्रीय न रहकर अधिक राष्ट्रीय और सास्कृतिक भूमियो पर पहुची थी।

प्रसाद के प्रगीत अतीत की सुखद स्मृतियो के एक हल्के विषाद स भरी प्रतिक्रिया लेकर आए थ। साथ ही उनकी आरभिक रचनाओ म यौवन और शृगार की अतृप्त अतिशयता भी लगी हुई थी। चित्राधार' और कानन कुसुम के छाया सकेतो म इन्ही दबी भावनाओ का आभास मिलता है और 'झरना' की छेडो मत यह सुख का कण है' उत्तेजित कर मत दौडाओ यह करुणा का थका चरण है आदि पक्तियो म इसी की गूज है। आँसू' म प्रसाद के कवि का यह वयक्तिक पक्ष पूरी तरह उभर आया है परतु इसी के साथ कवि की एक अभिनव दार्शनिकता उतनी ही प्रभावशालिता क साथ काव्य का अग बन गई है। उद्दाम शृगारिक स्मृतियो के साथ सपूर्ण समाधानकारक दार्शनिक अनुभूति आसू की विशेषता है। भावनाओ के असाधारण उद्वेग के साथ उतनी ही प्रगाढ दार्शनिक अनुभूति का योग रचना म एक अपूर्व मार्मिक सतुलन ल आता है। और यह दर्शनशासित मार्मिक प्रेमगीति नई कल्पना तथा नए काव्या-भरण का योग पाकर युग की एक प्रतिनिधि कृति हो गई है। अनेक कवियो न इस

छन्द और इसी भावधारा की अनुकृति की है। इससे केवल इतना ही लक्षित होता है कि इस रचना के प्रति साहित्यक्षेत्र में असाधारण आकर्षण रहा है। 'आंसू' के अनंतर प्रसाद के प्रगीतों में वह उद्वेग नहीं मिलता। 'लहर' में अधिक परिष्कृत सौन्दर्य चित्रण और संयमित भावन धारा है। दो चार गीतों में अतीत की मनोरम स्मृतियां भी आई हैं पर उनमें आंसू की सी अभाव या शून्यता की व्यंजना नहीं है। अब तो वे मनोरम क्षण जगत में नया सौंदर्य लाने की आशा रखते हैं। 'ओ सागर संगम अरुण नील' जैसे कुछ गीत प्रसाद की पूरी यात्रा के स्मारक हैं, और प्राकृतिक सौन्दर्य की अनोखी झांकी से समन्वित हैं। प्रेम और करुणा की तात्विक भावना का चित्रण 'लहर' में महात्मा बुद्ध के जीवनप्रसंग और उनकी दार्शनिकता की पार्श्वभूमि पर किया गया है। 'शेरसिंह का शस्त्र समर्पण' और 'प्रलय की छाया' रूप में दो नाटकीय आख्यानक, गीतियां भी 'लहर' में हैं जिनमें क्रमशः पराजित वीरत्व और सौंदर्यगर्व का विवरणपूर्ण चित्रण है। प्रसाद की रेखाएं इन चित्रणों में पर्याप्त पुष्ट हैं जो उनकी मनोवैज्ञानिक और कलात्मक समृद्धि का परिणाम कही जा सकती है। इसी 'लहर' में 'बीती विभावरी जाग री', शीर्षक वह जागरणगीत है, जो कदाचित प्रसाद के संपूर्ण काव्यप्रयास के साथ उनकी युगचेतना का परिचायक प्रतिनिधि गीत कहा जा सकता है।

मुक्तछंद और निराला

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला के आगमन से क्रांति की धारा और आगे बढ़ी। उनके आरंभिक प्रयोग छन्द संबंधी थे। हिंदी काव्य इसके पूर्व छन्दों के बाहर कभी नहीं गया था। काव्य में छन्दों के रहने से यह भावना घर कर लेती है कि काव्य और छन्द दो पृथक तत्व हैं और दोनों की स्वतंत्र सत्ता है। भावपक्ष और शैलीपक्ष के नाम से इनका विभाजन और विवेचन होने लगता है। नई काव्यरूढ़ियां उत्पन्न होती हैं और क्रमशः छन्द वह कठघरा बन जाता है जिसमें कविता कामिनी बन्दिनी हो जाती है। कठघरा न कहिए उसे कवितारानी का रनिवास या अंतःपुर कह लीजिए। अंतःपुर की सारी परतंत्रता उसे सहन करनी पड़ती है। निराला अंतःपुर के समस्त वैभव और उसकी सारी स्वतंत्रता से मुक्त कर कवितादेवी को खुली हवा में लाए। उन्होंने कवितानारी के बुरके या पर्दे को दूर कर दिया। पर्दा प्रथा के समर्थकों के लिए यह एक अनहोनी और असह्य बात थी। इसीलिए निराला के विरुद्ध उस समय बड़ा आंदोलन चला था परंतु कविताकामिनी को खुली हवा में ले आने के बाद नए युगोपयोगी परिधान भी उसे पहनाए गए। नए कवियों ने साथ निराला ने इस कार्य में पूरा योग दिया। स्वयं मुक्तछंद में लय की ऐसी सुघरता ला दी कि कविता नग्न न रही। आगे चलकर निराला ने स्वतः उसे

अनेक छन्दों से सजाया। पूछा जा सकता है कि जब नए छंद प्रयोग में आए ही तब पुराने छन्दों ने ही क्या बिगाड़ा था— और इतने से ही क्या छंद की अनिवार्यता सिद्ध नहीं होती ? इसके उत्तर में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि पुरानी कोठियों और महलों में जो दूसरे वातावरण में बन थे बाहर निकल आना भी कभी क्रांति कहा जा सकता है और नए आवास बनाकर रहना भी नए वातावरण का निर्माण करना कहा जा सकता है। ठीक यही बात निराला जी के मुक्तछंद और उनकी छन्दोबद्ध रचनाओं के संबंध में कही जा सकती है।

मुक्तछंद के कवि के लिए यह स्वाभाविक ही है कि उसकी कविता में सुकुमार प्रसाधन, कल्पना की बारीकी और अनावश्यक आभरण या अलंकार न हो। कहीं लटें बिखरी हों, कहीं गुनी धूप में मुँह तमतमाया हो। स्वच्छन्दता का जो अगाध स्वरूप निराला की रचनाओं में देखा जाता है, उसकी तुलना इस युग के किसी दूसरे कवि में नहीं हो सकती भाषाप्रयोग में भी जितनी स्वतंत्रता वे बरतते हैं – सामयिक और दुरूह संस्कृत से लेकर अप्रयुक्त उर्दू तक उतनी कोई दूसरा कवि नहीं बरतता। पर इसका यह अर्थ नहीं कि भावना और शब्दविन्यास की विशृंखलता उनके काव्य का कोई लक्षण है। स्वच्छता प्रवाह और गांभीर्य उनकी कविता के मुख्य गुण हैं।

पंचवटी प्रसंग' में निराला का काव्य आरंभ होता है। राम और सीता की परंपरागत गरिमा को छोड़कर लक्ष्मण के स्वतंत्र प्रकृतिविहार और स्पर्शविता शूर्पणखा की रूपवर्णना के साथ कविता आगे बढ़ती है। पहली बार शूर्पणखा की राक्षसी भयंकरता न देकर नारीरूप में नारी की मनोभावनाओं के साथ चित्रित किया गया है। शिवाजी का पत्र दूसरी लंबी कविता है, पर परिमल' की अधिकांश रचनाएं स्फुट भावना या तात्कालिक वस्तु या दृश्य से संबंध रखती हैं। इनमें से कुछ जैसे विधवा, भिक्षुक, वह', संध्या सुंदरी, शरतपूर्णिमा की विदाई'—में वस्तु अंकन की हल्की रेखाओं के साथ प्रभाव-अंकन की ही विशेषता है। शेष कुछ रचनाएं विशुद्ध भावात्मक हैं —कल्पना के सामर्थ्य से सजी हुई जैसे 'तुम और मैं, जूही की कली'। कुछ अन्य रचनाएं भावात्मक होती हुई भी चमत्कारप्रधान हैं, जैसे युक्ति', 'बादल आदि। कुछ अत्यंत छोटे गेय पद हैं और कुछ थोड़ी सी कल्पनाविशिष्ट लंबी रचनाएं भी हैं जैसे यमुना के प्रति और 'स्मृति आदि। ये सभी हिंदी प्रगीत के नए उदाहरणों में से हैं। परिमल' के पश्चात 'गीतिका का प्रकाशन हुआ, जिसमें हल्की सौंदर्य रेखाओं से सजाई शृंगारिकता ही प्रमुख होकर आई है। संयोग शृंगार की विनोदात्मक किंतु सजीव और वास्तविक भावना एक ओर पंत की काल्पनिक सौंदर्यप्रसाधना की वायवीयता से अंतर रखती है और दूसरी ओर यह नए कवियों की आदर्शपूर्ण

मिलनाकाक्षाओ से एकदम पृथक है। यदि कही इन गीतो की भाषा थोडी और सरल होती तो ये जन समाज के काम के गीत होते, पर जैसे भी है इनका हिंदी काव्य मे स्पृहणीय स्थान है।

इसके आगे निराला के वहत्तर प्रयोग आते हैं जिन्हे हम तुलसीदास, राम की शक्तिपूजा, सरोजस्मति' जैसी लबी रचनाओ मे देखते हैं। सरोजस्मति' पूर्णत सतुलित भावात्मक कृति है। 'तुलसीदास और 'शक्तिपूजा' मे मनोवैज्ञानिक चित्रण के साथ भाषा का गाम्भीर्य दर्शनीय हुआ है, यद्यपि इस पिछली विशेषता के कारण रचना मे आवश्यक गति और सरलता की कमी भी आ गई है। फिर भी ये हिंदी मे अपने ढग के अकेले उदाहरण है। इसी के पीछे दो और बडे काव्य कुकुरमुत्ता' और खजोहरा' भी प्रकाशित हुए। कुकुरमुत्ता मे विनोद की सष्टि अतिरजित वर्णनो द्वारा की गई है। यत्र तत्र 'यथार्थवादी' चित्रण की प्रवत्ति भी दिखाई देती है जैसे सोना मालिन और उसकी लडकी के वर्णन मे। 'खजोहरा' मे यथार्थवादी प्रवत्ति और आगे बढ गई है, जिससे रचना मे एक अनाकाक्षित मानसिक बोझ आ बैठा है। रवीन्द्रनाथ की विजयिनी' के विरोधी दृष्टिकोण को व्यजित करने के लिए इतनी अधिक दूर तक जाना आवश्यक न था।

परतु इन नवीन प्रयोगो के साथ निराला अपनी पुरानी भूमिका पर भी काम करते गए हैं जिसके परिणामस्वरूप अणिमा' और अर्चना के गीत और सवा प्रारम्भ जसी दो एक लबी कृतिया भी मिलती है। कहने की आवश्यकता नही कि यह ही निराला की मूल और वास्तविक प्रवत्तियो की परिचायक रचनाए है। बेला और नये पत्ते भी उनके प्रासगिक प्रयोग ही है। हाल मे प्रकाशित अर्चना के कुछ गीतो मे भाषा अत्यत सरल रूप ग्रहण कर चुकी है और भावना मे प्राचीन भक्तकवियो की सी तन्मयता है। फिर भी यह कहना होगा कि निराला की सुदरतम रचनाए वे है, जिनमे उन्हे भावव्यजना के लिए वस्तुचित्रण का स्वल्प अवकाश मिला है जैसे जूही की कली' सध्या सुदरी' 'भिक्षुक' आदि। लबे चित्रणो मे सरोजस्मति जसी रचना मे ही प्रगीत का पूरा सौदर्य निखरा है। इसके बाद ही साम्य की दृष्टि से दूसरा स्थान निराला के गीतो का आता है। तीसरे प्रकार की सुदर रचनाए बादल राग जागो फिर एक बार तुम और मै जसे स्फुट प्रगीत हैं। उनकी प्रयोगात्मक कृतियो मे कुकुरमुत्ता कदाचित सबसे सुदर है।

पत का प्रवेश

सुमित्रानदन पत जब अपनी नवीन वीणा लेकर हिंदी मे आए तब हिंदी प्रगीत की परमोच्च सभावना उनमे केन्द्रित हो गई। कुछ वर्षों तक उन्होने हमारी

इस आशा को पल्लवित भी किया। उनके आरंभिक प्रगीतों में भावना की जो स्वच्छता, कोमलता और रमणीयता पाई गई और भाषा की जो अनुपम मिठास और परिष्कृति देखी गई, वह कदाचित विश्व के थोड़े कवियों की आरंभिक रचनाओं में देखी और पाई गई होगी। इसलिए 'वीणा', 'ग्रंथि', 'उच्छवास' और 'पल्लव' के कवि में यदि हिंदी काव्य अपनी उच्चतम पहुंच और उज्ज्वलतम भविष्य का आभास पाने लगा, तो यह अनुचित या असंगत न था। वीणा की पहली मीठी झंकार से लेकर 'पल्लव' में 'परिवर्तन' के मंद्र गंभीर संगीत तक पंत का विकासक्रम अत्यंत स्वाभाविक और उपयुक्त रीति से परिस्फुट होता गया है। 'वीणा' की अभिनव कोमल आदर्शवादिता और तरल बालभावना से आरंभ कर 'उच्छवास' की ईषत् वयक्तिक प्रेमचर्चा में किशोरवय की सुंदर झांकी देखते हुए हम 'ग्रंथि' में वियोग या विच्छेद की एक मर्मपूर्ण अनुभूति तक पहुंचते हैं। 'पल्लव' की रचना इस वयक्तिक अनुभूति के अवसाद से दूर होकर अतिशय सजीव कल्पनासृष्टि का रूप ग्रहण करती दिखाई देती है। 'परिवर्तन' में आकर हम जगत और जीवन के संबंध में कवि की मनस्वी धारणाओं को अत्यंत सुंदर रूपकों के आवरण में देख पाते हैं। ये रूपक उन सुंदर प्रस्तरखंडों के सदृश हैं जिनकी सहायता से कवि अपने आगामी विशाल निर्माण की भूमिका बांधता जान पड़ता है। इसी समय हम हिंदी प्रगीत की उच्चतम परिणति की कल्पना करने लगे थे। सन् 25 से 35 तक हमें मिलता था शैली का वह विद्रोही स्वर, उसकी वह दिगंतगामिनी पुकार, जो युग को नहीं, युगों को अपने नैसर्गिक आह्वान से चकित और विस्मित कर देती है। हमें मिलनी थी गांधी की ज्वलंत दार्शनिकता, प्रखर मार्मिक वाणी और अबाध क्रियाशीलता का तेजस्वी काव्य प्रतिरूप, परंतु खेदपूर्वक कहना पड़ता है कि हमें मिली 'ज्योत्स्ना' और 'गुंजन', 'गीतिका' और 'कुकुरमुत्ता' तथा अन्य भली और मीठी रचनाएं, किंतु ओजस्विता और महान निर्माण की प्रेरणा में बहुत कुछ रिक्त।

अपने मंतव्य को स्पष्ट करने के लिए हम यह कहना चाहते हैं कि हम हिंदी प्रगीत से गांधीवाद या गांधीनीति का खाका नहीं चाहते थे, न गांधी के आदर्शों अथवा उनकी जीवनी का चित्रण या स्तवन ही हमें अभीष्ट था। हम तो प्रतीक्षा करते थे उस उदात्त और तेजस्वी स्वर की, उस सरल निष्कपट और अडिग वाणी की, जो हमारी राष्ट्रीय क्रियाशीलता का सच्चा काव्यप्रतिबिंब होती, जो वर्गों की विडंबना से हीन, विश्व का सर्वयुगीन साम्य का संदेश दे सकती। संदेह में हम महात्मा गांधी के सजीव व्यक्तित्व का काव्यस्मारक चाहते थे पर ऐसा जान पड़ता है कि किसी महान व्यक्तित्व अथवा महती क्रियाशीलता को काव्य में मूर्तिमान करने के लिए कुछ समय का अंतर आवश्यक होता है। कदाचित प्रगीतकाव्य

इसके लिए अच्छा माध्यम भी न माना जाए।

ज्योत्स्ना' और 'गुंजन' तक हम किसी प्रकार धैर्य धारण कर सकते थे, पर इसके पश्चात नहीं। पर इसके पश्चात ही पंत ऐसे बिछले कि हमारी सारी आशाओं पर पानी फिर गया। वे प्रगीत के भावनाक्षेत्र से बाहर निकलकर ऐसी सष्टियां करने लगे, जिन्हें साहित्य में 'प्रगीत' की संज्ञा तो नहीं ही दी जा सकती। पर आश्चर्य तो यह है कि अपने इस अकाव्यत्व का ज्ञान स्वयं पंत को तो था, पर उनके किसी भी प्रशंसक या समीक्षक को नहीं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल से लेकर प्रकाशचंद गुप्त और शिवदान सिंह चौहान, सभी इस भयंकर दुर्घटना से ग्रस्त हो गए और हिंदी साहित्य को भी इसी दुर्घटना का शिकार बना गए। आगे चलकर जब पंत ने एक दूसरा मोड़ लिया और मार्क्सदर्शन से अरविंददर्शन की ओर आए तब सहसा हमारे प्रवीण साहित्यिक मित्र रामविलास शर्मा ने यह पहचाना कि पंत अपने 'पल्लव' वाले काव्यस्तर से कितनी दूर चले गए हैं। 'हंस' में प्रकाशित उनकी 'उत्तरा' की आलोचना उनकी असंदिग्ध साहित्यमर्मज्ञता का प्रमाण है। ऐसी मार्मिक समीक्षाएं आज के जमाने में कम ही देखने को मिलती हैं पर पता नहीं रामविलास ने 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' आदि पर इसी प्रकार कृपादृष्टि क्यों नहीं की।

इस प्रसंग को अधिक विस्तार न देकर यहां इतना ही कहना है कि सन '32 या उसके आसपास से पंत कवि के बदले कलाकार अधिक हो गए और काव्यरचना के स्थान पर कुछ ऐसी कृतियां करने लगे, जो ललित की अपेक्षा उपयोगी अधिक थीं, अथवा जो सीधे ही क्यों न कहें काव्य की अपेक्षा काव्याभास अधिक थीं। साहित्य और कविता की शैलियां बदलती हैं पैमाने बदलते हैं पर इतना नहीं कि कविता और साहित्य बेपहचान हो जाएं। हम यह भी मानते हैं कि पंत सरीखे प्रतिभावान कवि फिसलते फिसलते भी कहां तक फिसलेंगे। अब भी उनकी समस्त कृतियों में सुंदर कला कौशल है यत्र तत्र मार्मिक रूपयोजना और सूक्ष्म वस्तु चित्रण है पर जहां तक प्रगीतकाव्य का संबंध है हिंदी का शैली हिंदी में जाता जाता ही रह गया।

सन '35 या उसके कुछ पूर्व पश्चात हिंदी प्रगीतों का एक अन्य युग आरंभ होता है जिसके दो प्रमुख प्रतिनिधि महादेवी वर्मा और बच्चन हैं। यद्यपि महादेवी छायावादी परंपरा को ही लेकर आगे बढ़ी, पर वे क्रमशः प्रसाद निराला और पंत की सामाजिक पृष्ठभूमि पर की गई काव्यरचनाओं से दूर होती गईं और अंत में अब वे अपने काव्य को अत्यंत वैयक्तिक सीमा भूमि पर ले जाने में समर्थ हुई हैं। प्रश्न किया जाता है कि ऐसे कवि और उसकी रचना का साहित्यिक महत्व क्या है जो समाज की वास्तविक और प्रगतिशील चेतना से इतनी दूर चली गई हो

महादेवी के काव्य की इस अतर्मुखी प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप जो रचनाए प्रस्तुत की जा रही हैं उनके साहित्यिक मूल्य के सबध म वाली प्रवृत्तिया न रखनवाले समीक्षका क बीच भी बडा मतभेद दिखाई देता है। यह समस्या हिन्दी साहित्य के नए इतिहासलखक के सम्मुख आती है। हम यहा इस साहित्यिक प्रश्न की आर ध्यान आकृष्ट कर ही सतोष करेंगे। सक्षेप म प्रश्न यह है कि साहित्यिक रचना का एकदम स्वतत्र मूल्य है अथवा उसका मूल्य उसके सामाजिक सपक और प्रभाव म है, और यदि साहित्य सामाजिक और वास्तविक जीवनस्रोत म अपना रसग्रहण छोड देता है, तो केवल कल्पना या वैयक्तिक सवदना की भूमिका पर की गई रचना का साहित्यिक, सामाजिक और सास्कृतिक मूल्य किस प्रकार आका जाए ?

हम यह स्वीकार करते है कि महादेवी के प्रगीता न साहित्यिक मूल्याकन की नइ समस्या उत्पन्न की है। कदाचित उन्हीकी रचनाआ म पहले पहल वयक्तिक भावना का इतना गहरा पुट पाया गया। बाह्य जीवनव्यापारा प्रकति के व्यक्त स्वरूपो और सौंदयदृश्या का महादवी के काव्य म स्वतत्र अकन नहीं है। वह प्रतीक रूप म ही इनका उल्लेख करती हैं। 'रजनी ओढे जाती थी झिलमिल तारा की जाली, उसके बीत वैभव पर तब रोती थी उजियाली' म रजनी, तारे' और 'उजियाली' यथाथ नही है, वे महादेवी को किसी कल्पित नारी के रूप को प्रत्यक्ष करने के लिए प्रतीक का ही काम देते है। यह अतर्मुखी कल्पना और उसम प्रतीका की योजना का यह स्वरूप महादेवा की वह विशेषता है, जो उन्हे पूववर्ती प्रगीत-कारा की प्रकतिप्रेमी स्वच्छद धारा से एक भिन्न श्रेणी म ल जाती है। इस नई शैली और श्रेणी के काव्य के मूल्याकन की समस्या हिंदी काव्यसमीक्षा के सम्मुख उपस्थित हुइ है।

बच्चन की आरभिक रचनाआ म भी वैयक्तिक अनुभूति की तीव्रता थी, जो इन्हे 'हालावाद की ओर ले गई थी। इस प्रकार की अनुभूतिया हिंदी क लिए अपरिचित थी और हिंदी काव्य की किसी गृहीत परपरा म नही आती थी। साथ ही इनका सामयिक जीवनप्रगति म भी कोई सुस्पष्ट योग न था। निराशावादी प्रतिक्रिया क रूप म ही इनकी परख हुई थी, परतु बच्चन के इन प्रगीता म नए काव्यसाधनो का प्रयोग हुआ था—नई सामान्य भाषा और नया सरल भाव-विन्यास—जो इन्हे एक स्वतत्र काव्यस्वरूप और रचनात्मक विशषता दत थ।

आग चलकर हालावाद या मादक उत्तेजना का प्रभाव कम हुआ और बच्चन ने 'एकात सगीत' 'निशा निमत्रण' जसी रचनाए प्रस्तुत की, जिनम वस्तुचित्रण और रूपनिर्माण की उच्चतर प्रवृत्तिया भी दिखाई पडती है। यद्यपि इन चित्रणो म भी कवि की अनुभूति सुसयत नही है किंतु कला की एक स्वस्थतर उदभावना इन रचनाआ म दखी जाती है। इन रचनाआ म भावना की अनोखी एकाग्रता

इसके लिए अच्छा माध्यम भी न माना जाए।

'ज्यात्स्ना' और 'गुजन' तक हम किमी प्रकार धय धारण कर मकन थ पर इसक पश्चात नही। पर इसके पश्चात ही पत एसे बिछल कि हमारी सारी आशाआ पर पानी फिर गया। वे प्रगीत के भावनाक्षेत्र स बाहर निकलकर एसी सष्टिया करने लगे, जिन्ह साहित्य म 'प्रगीत' की सज्ञा तो नही ही दी जा सकती। पर, आश्चय तो यह है कि अपन इस अकाव्यत्व का ज्ञान स्वय पत का तो था पर उनके किसी भी प्रशसक या समीक्षक को नही। आचाय रामचद्र शुक्ल स लेकर प्रकाशचद गुप्त और शिवदान सिंह चौहान सभी इस भयकर दुघटना स ग्रस्त हा गए और हिंदी साहित्य को भी इसी दुघटना का शिकार बना गए। आग चलकर जब पत न एक दूसरा मोड लिया और मार्क्सदशन स अरविंददशन की आर जाए तब सहसा हमारे प्रवीण साहित्यिक मित्र रामविलास शमा न यह पहचाना कि पत अपन पल्लव' वाले काव्यस्तर से कितनी दूर चले गए ह। हस म प्रकाशित उनकी उत्तरा' की आलाचना उनकी असदिग्ध साहित्यममज्ञता का प्रमाण है। एसी मार्मिक समीक्षाए आज के जमान म कम ही दखने को मिलती है पर पता नही रामविलास न युगवाणी' और ग्राम्या' आदि पर इसी प्रकार कृपादृष्टि क्या नही की।

इस प्रसग को अधिक विस्तार न देकर यहा इतना ही कहना है कि सन '32 या उसके आसपास से पत कवि के बदले कलाकार अधिक हा गए और काव्यरचना के स्थान पर कुछ एसी कतिया करन लगे जा ललित की अपक्षा उपयागी अधिक थी, अथवा जो सीधे ही क्या न कह काव्य की अपक्षा काव्याभास अधिक थीं। साहित्य और कविता की शलिया बदलती है समान बदलन है पर इतना नही कि कविता और साहित्य बपहचान हा जाए। हम यह भी मानत हैं कि पत सरीख प्रतिभावान कवि फिसलत फिसलत भी कहा तक फिसलेंगे। अब भी उनकी समस्त कृतियो म सुदर कला कौशल है, यत्र तत्र मार्मिक रूपयोजना और सूक्ष्म वस्तु चित्रण है पर जहा तक प्रगीतकाव्य का सबध है हिंदी का शली हिंदी म आता आता ही रह गया।

सन 35 या उसके कुछ पूव पश्चात हिंदी प्रगीता का एक अन्य युग आरभ हाता है, जिसके दो प्रमुख प्रतिनिधि महादेवी वमा और बच्चन हैं। यद्यपि महादवी छायावादी परपरा का ही लकर आगे बढी, पर व क्रमश प्रसाद निराला और पत की सामाजिक पृष्ठभूमि पर की गई लाकरचनाआ म दूर हाती गइ और अत म अब व अपन काव्य का अत्यत वयक्तिक सीमा भूमि पर न जान म समथ हुइ है। प्रश्न किया जाता है कि एस कवि और उसकी रचना का साहित्यिक महत्व क्या है जा समाज की वास्तविक और प्रगतिशील चेतना म इतना दूर चली गइ हा

है और लडिया खूब मजी हुई हैं।

बच्चन की यह विशेषता है कि वह क्रमश भावना की मादक गहराइयो म ऊपर उठकर प्रेम की निखरी रागिनी का भी आलाप कर सके हैं और निकट वत मान म उनकी कृतिया सावजनिक भावना को अपनाती जा रही हैं।

परवर्ती प्रगीत

बच्चन के बाद प्रगीतकाव्य किसी दिशा म उल्लखनीय प्रगति नही कर पाया है। छायावादयुग म का य की जो समवेत धारा थी और भिन्न भिन्न कवि जिस धारा म अपनी अनुभूतियो का जल मिला रहे थे वह धारा टूटकर आज तीन प्रणालियो म बह रही है। महादेवी और बच्चन की ऐकातिक रचनाए और वैयक्तिक भावना अधिक नए कवियो म पहुच कर राष्ट्र और समाज के लिए पूरी तरह अनुत्तरदायी हो गई है। उनम कही 'मत्यु आवाहन' और कही 'कामिनी का आमत्रण तथा दूसरे प्रकार के नग्न चित्रणो की प्रवृत्ति बढ रही है। प्रगीत-भावना की स्वच्छदता के नाम पर सारी सभ्यता ताख पर रखी जा रही है और समाज के सम्मुख मत्यु अभिलाषा तथा विभिन्न प्रकार के रतिमक्त प्रस्तुत किए जा रहे हैं। यह अति यथाथवाद हिंदी म प्रचलित होने लगा है। कवल मनोविज्ञान की दृष्टि से इसका विश्लेषण ही नही किया जाता, इसके सबध म सद्धातिक व्याख्याए भी की जाने लगी हैं। समझ म नही आता कि कोई भी सैद्धातिक व्याख्या इन निकम्मी कृतियो की निमाणभूमिका म जाकर क्या लाभ उठाएगी।

दूसरी प्रणाली प्रयोगवादियो की है, जो प्राय बौद्धिक व्यक्तियो द्वारा रची जा रही है। वास्तव म य निबध लेखक और उपन्यासकार हैं जो कविता की भूमि म अनायास आ गए है, परन्तु इन भले आदमियो को इतना तो समझना ही चाहिए कि कविता के क्षेत्र म कोरा बुद्धिवाद अधिक दूर तक नही चल सकता। कहा जाता है कि हिंदी कविता को भावना की निरथक और असामाजिक गह राइयो स ऊपर उठाकर स्वस्थ भूमि पर रखने मे इन बुद्धिवादियो न अच्छा योग दिया है और अब भी द रहे है, परन्तु प्रश्न यह है कि इस योगदान म वास्तविक कविता कितनी है ?

तीसरी प्रणाली सामाजिक प्रगतिवादियो की है। इनके द्वारा एक नए प्रकार की व्यग्यात्मक रचना का आरभ हो रहा है जो हिंदी के साथ स्थानिक बोलियो का पुट मिलाकर नया प्रभाव उत्पन्न करती है। जहा कही इन रचनाओ म मत विशेष के प्रचार का पक्ष प्रबल नही हो गया है, वहा इनम एक अच्छी सजीवता दिखाई देती है परतु एसी रचनाओ की सख्या कम है। इनका भी अभी उदभव हो रहा है। ऊपर की इस त्रिधारा की परख नए इतिहासलेखक को करनी होगी।

प्रसाद और निराला

पिछले कुछ समय से हिन्दी साहित्य क्षेत्र में यत्र तत्र यह प्रश्न उठाया जा रहा है कि कवि के रूप में प्रसाद और निराला में श्रेष्ठतर प्रतिभा किसकी रही है और हिंदी काव्य में किसका प्रदेय अधिक मूल्यवान और महत्वपूर्ण है ? विशेषकर निराला के स्वर्गवास के पश्चात इस प्रश्न को साहित्यिकों के बीच आग्रहपूर्वक विचार का विषय बनाया जा रहा है। यद्यपि दो विशिष्ट कवियों की तुलना इतने स्वल्प काल में प्राय नहीं की जाती और इस प्रकार के प्रश्न के निर्णय के लिए लंबे समय का व्यवधान आवश्यक माना जाता है परंतु इस प्रश्न के उठाए जाने का कुछ न कुछ कारण भी है ही। हमारी दृष्टि में इसका कारण यह है कि निराला के प्रति पिछले वर्षों में हिंदी के साहित्यिक समाज में अतिशय श्रद्धा और सम्मान की भावना उत्पन्न और व्याप्त हो गई है, जिसका मुख्य कारण निराला की वैयक्तिक विषम स्थिति थी। वह न केवल शारीरिक और मानसिक व्याधियों से आक्रांत थे, वरन उनकी आर्थिक दशा भी शोचनीय थी। अंतिम वर्षों में उनकी सेवा शुश्रूषा और चिकित्सा आदि की उपयुक्त व्यवस्था नहीं हो सकी थी जिसके कारण लोगों की सहानुभूति उनके प्रति अत्यधिक मात्रा में उभर उठी थी। दूसरी बात यह है कि इन विपरीत परिस्थितियों के रहते हुए भी निराला ने इन वर्षों में उत्तम कोटि की काव्य रचना की, जिसमें उन्होंने सामयिक जीवन की असंगतियों पर तीव्र व्यंग्यात्मक प्रकाश डाला और साथ ही अनेकानेक आत्मनिवेदनात्मक गीत भी लिखे जो श्रेष्ठ काव्य के निदर्शक हैं। यही नहीं इस परवर्ती काल में उन्होंने बहुत कुछ सरल भाषा और सुंदर उक्तियों का प्रयोग किया है जो हिंदी काव्य को उनकी नई देन कही जा सकती है। जिन लोगों ने निराला की पूर्ववर्ती रचनाओं को क्लिष्ट और दुरूह बताया था, उन्हें भी उनकी इस नई शैली की रचनाओं ने आश्चर्यचकित कर दिया और वह अपने पुराने आरोप को बहुत कुछ भूल गए। निराला की आरंभिक शृंगारिक और वीर-भावना पूर्ण रचनाओं की तुलना में जब उन्होंने इस हास्य व्यंग्य और शांत करुण रस की रचनाओं को एक साथ रखकर देखा तब उन्हें निराला की बहुवस्तु-व्यापिनी प्रतिभा का पूरा प्रत्यय प्राप्त हुआ। उन्हें हिन्दी में दूसरा कोई कवि नहीं दिखाई दिया जो इतने विविध विषयों, शैलियों और भावयोजनाओं का

एक साथ अभिव्यक्त कर सका हो। यह तो निराला के प्रति अनुदार भावना रखनेवालों की बात हुई। जो लोग आरंभ में ही निराला के प्रशंसक थे, उन्हें तो निरालाकाव्य के इस परवर्ती चमत्कार में और भी अधिक अभीप्सित वस्तु मिली और कवि के प्रति उनकी धारणा विशेष रूप से समर्थित और पुष्ट हुई। इसी परिस्थिति में निराला और प्रसाद के आपेक्षिक वैशिष्ट्य का प्रश्न उठाया गया है और साहित्यिक समाज में इसकी चर्चा आरंभ हुई है।

निराला और प्रसाद की इस तुलना का एक और आशय भी दिखाई देता है। यह न केवल दो कवियों की व्यक्तिगत तुलना है वरन् एक प्रकार से बीसवीं शताब्दी के संपूर्ण काव्य के शीर्ष अंश का समाकलन है। प्रसाद और निराला आधुनिक हिंदी काव्य की दो सर्वोत्तम प्रतिभाएं हैं जो वर्तमान युग के समस्त काव्यप्रयास के उत्कृष्ट उदाहरण के रूप में देखी जाती हैं। हिंदी साहित्यिकों ने एक ओर द्विवेदीयुग के समस्त काव्य पर दृष्टिपात किया, दूसरी ओर छायावाद और उसके परवर्ती विकास को भी देखा, और इस समस्त काव्यसृष्टि में दो सर्वप्रथम प्रतिभाओं का चयन किया, जो क्रमश: प्रसाद और निराला की प्रतिभाएं हैं। अतएव प्रसाद और निराला की तुलना की प्रेरणा समस्त हिंदी काव्य के श्रेष्ठ अंश के निर्वाचन की अभीप्सा भी कही जा सकती है। यों ऐसे अनेक कवि हो सकते हैं जिनकी एक या अनेक कृतियां हिंदी काव्य में अपूर्व और अतुलनीय हों, परंतु जब समग्रता में विचार किया जाता है, तब ये स्फुट रचनाएं एक किनारे रख दी जाती हैं और सारा ध्यान प्रसाद और निराला के काव्य पर केंद्रित हो जाता है। इस स्तर पर प्रसाद और निराला की तुलना का यह आशय नहीं है कि हिंदी में उनके प्रतिस्पर्धी अन्य कवि हैं ही नहीं परंतु संपूर्ण काव्यव्यक्तित्व के रूप में इन दो को सर्वोपरि स्थान देने का आशय अवश्य रहा करता है।

वस्तुत: प्रसाद और निराला का काव्य इस युग का सर्वश्रेष्ठ काव्य है। श्रेष्ठ काव्य के जो भी प्रतिमान स्थिर किए जाएं, उनका विनियोग इन दो कवियों के काव्य में निर्बाध रूप से किया जा सकता है। सबसे पहली बात जो इन दोनों कवियों में समान रूप से पाई जाती है जीवनानुभव की वास्तविकता व्यापकता और गहराई की है। अनुभव की वास्तविकता से यहां आशय है कि इन दोनों कवियों के भावजगत में जीवन की विविध स्थितियों और मनोदशाओं का यथार्थ योग है और इनका दृष्टिकोण वास्तविक मानवजगत की सच्चाइयों का आकलन करना है। ये दोनों कवि न तो कोरे भावनावादी हैं न कल्पनावादी, इनके काव्य में मानव अनुभूतियों की यथार्थता सन्निविष्ट हुई है। दूसरे शब्दों में ये दोनों कवि सच्चे अर्थों में मानवजगत की स्थितियों और अनुभूतियों के कवि हैं। इनके काव्य का केंद्रीय तत्व जीवन को ऊपर से न देखकर उसके अंतरंग में जाकर देखने का

है। यही कारण है कि जब अन्य अनेक कवि जीवनस्थितियों को छोड़कर केवल उसके आदर्श या अभिलषित रूप का निरूपण करने लगे हैं, तब इन दो कवियों ने मानव अनुभवों का यथार्थ संस्पर्श कभी नहीं छोड़ा।

एक दूसरी विशेषता जो इन कवियों को श्रेष्ठता प्रदान करती है इनकी काव्य के प्रति अप्रतिम निष्ठा है। उन्होंने अपनी काव्यरचना में काव्य के बाह्य उपकरणों का प्रयोग नहीं किया। वर्तमान युग के बहुत से कवि नाना प्रकार के वैचारिक तथ्यों और आदर्शों को काव्य में सन्निहित करने का प्रयत्न करते रहे हैं। परंतु उनकी रचनाओं में इन दोनों तथ्यों का समग्र समन्वय नहीं हो सका है। काव्यात्मक अलंकृतियाँ और अन्य उपकरण एक ओर जा रहे हैं तो वैचारिक और बौद्धिक तत्व दूसरी ओर जा रहे हैं। कवि के व्यक्तित्व के गहरे संस्पर्शों से इन दोनों का योग नहीं हो पाया। फलतः इन अनेक कृतियों में सामंजस्य की कमी के कारण एक बिखराव आ गया है। कुछ समीक्षक इस प्रकार के असंश्लिष्ट काव्य प्रयोगों का समर्थन करते भी देखे जाते हैं। परंतु महान काव्य की विशेषता सदैव संश्लेषण में ही हुआ करती है। जीवन की बहुविध विकास और आदर्शभूमियों का कवि के व्यक्तित्व में समाहार होने पर ही वास्तविक काव्य की सृष्टि होती है। अन्यथा काव्य में जीवंत और अटूट समग्रता निर्मित नहीं हो पाती और कविता अपने सर्वोत्तम उत्कर्ष पर नहीं पहुँचती।

दो अन्य शब्दों का प्रयोग ऊपर किया गया है—जीवन अनुभव की व्यापकता और गहराई। अनुभव की व्यापकता कवि के सामाजिक संस्पर्श से संबंधित है जब कि उसकी गहराई का संबंध कवि के वैयक्तिक प्रेरणा स्रोतों से है। सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि जो कवि जितना ही वस्तुमुखी होगा, उसमें अनुभवों की व्यापकता उतनी ही अधिक होगी। कवि अपने वैयक्तिक जीवन के संकल्पों और विकल्पों को छोड़कर वास्तविक और बहिर्मुखी जीवन से अपनी काव्य सामग्री का संचय करेगा। दूसरी ओर जो कवि अधिक अंतर्मुखी होंगे और अपने जीवन के अंतरंग द्वंद्वों को काव्य में प्रतिबिंबित करना चाहेंगे उनके काव्य में व्यापकता के स्थान पर गहराई का तत्व अधिक होगा। यों तो विशिष्ट काव्यप्रतिभा इस प्रकार के सभी बंधनों का अतिक्रमण कर जाती है पर सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि काव्य में जीवनानुभव की व्यापकता कवि की वस्तुमुखी दृष्टि पर आश्रित रहती है जब कि गहरे संवेदनों की सृष्टि कवि के अंतरंग जीवनद्वंद्व से संबंधित होती है। इस दृष्टि से देखने पर प्रसाद और निराला काव्य के दो विभिन्न निर्माणस्तर दिखाई देते हैं। प्रसाद का काव्य अंतर्द्वंद्व से संबंधित है और इस अंतर्द्वंद्व की समस्त मार्मिकता और गंभीरता उनके काव्य में प्रतिफलित हो सकी है। निरालाकाव्य में वस्तुमुखी और बहिरंग तत्व की प्रमुखता है। उनके

काव्य म अतद्वद्वो से उत्पन्न भावाकुलता और भावोत्कप नही है, उसके बदले एक
महान तटस्था और औदात्य का उत्कप उनके काव्य की विशेषता है। इसके साथ
ही निराला का कलापक्ष–रूपात्मक छवियो की कलना भाषा और छदो की योजना,
दाशनिक समाहार—आदि प्रसाद की अपक्षा कही अधिक समृद्ध है। इन सबके
वदले प्रसाद वे काव्य म उनके अतरग जीवनपक्ष का अधिक मार्मिक और गहरा
समाकलन हा पाया है। जबकि निराला क काव्य का मूल स्वर नि सगता और
तटस्थता के आधार पर निर्मित है प्रसाद क काव्य का मूल स्वर उनके वैयक्तिक
जीवनद्वद्वा से सगठित है। निराला के काव्य मे जा बहुरूपता और विस्तार है
उसका मुख्य कारण उनकी निजी अनासक्ति है। प्रसाद के काव्य म उत्कप की
अधिकतर भूमिगा एक गभीर और स्थाई विच्छेद भावना से उद्भूत है। इसलिए
निराला क काव्य म शृगार और शात रसा की प्रमुखता है जब कि प्रसाद वे
काव्य म आत्मिक सघर्षों और करुण तत्वो की प्रमुखता है।

उपयुक्त वक्तव्य को स्पष्ट करन के लिए निराला और प्रसाद वे काव्य ने
कुछ विवरणा म जाना आवश्यक होगा। निराला न अपनी कविता का आरभ
मुक्तछद म किया जो काव्य की क्रमागत भूमिका पर एक अभिनव क्राति थी।
निराला न उस छद को जन्म दिया जिस पर आगे चलकर हिंदी काव्य की एक
नई सारणी ही तयार हुई। इस दष्टि से निराला का प्रभाव अत्यधिक व्यापक
कहा जा सकता है। मुक्तछद के आविर्भाव क पश्चात निराला न न केवल
छदात्मक प्रगीता की सष्टि की वल्कि बहुत ही सधे हुए गीत भी लिख जो केवल
छदगति स पाठय ही नही हैं सगीत की भूमिका पर गेय भी हैं। इतना ही नही,
उनके छदो म बहुत बडी विविधता भी है। उन्होन अनकानक छद प्रयोग किए है।
छदो की इतनी विविधता म प्रमाद नही गए। निराला का काव्य जूही की
कली से आरभ होकर भव अणव की तरणी तरुणा तक पहुचा है। शृगार से
लेकर शान रस तक उन्होने समस्त रसभूमियो को आत्मसात किया था। उनके
आरभिक काव्य मे शृगार और वीर रस की भूमिका प्रचुर मात्रा म मिलती है,
पर विनय और प्राथना के व गीत भी मिलते हैं जो आगे चलकर उनके आत्म-
निवदनात्मक काव्य की पीठिका बन गए ह। इसके साथ ही उनके हास्य, व्यग्य और
विनोद के अनेकानक निदशन 'कुकुरमुत्ता' आदि के रूपात्मक और वस्तुमूलक
प्रयोग भी उनकी काव्यरचना म विद्यमान हैं। यह सब निराला क भावविस्तार
के परिचायक उपकरण हैं।

दूसरी ओर निराला न भाषा सबधी वविध्य की अनक रूपरखाए प्रस्तुत की
हैं। भाषा के क्षेत्र म निराला एकदम निराले है। उनकी सी भाषाप्रयोग की
अबाध गति अन्यत्र दिखाइ नही देती। आरभ म उन्होन सस्कृत हिंदीमिश्रित

गतिशील और परिष्कृत काव्यभाषा के उदाहरण उपस्थित किए। कहीं इस परिनिष्ठित भाषा में संस्कृत पदावली का बाहुल्य है तो कहीं हिंदी की ठेठ पदरचना अपने विशेष वैभव में है। आगे चलकर, निराला ने अपने उदात्त काव्य के लिए अधिक संस्कृतप्रचुर प्रयोग किए हैं, जिन्हें हम 'राम की शक्तिपूजा', 'तुलसीदास' आदि में देखते हैं। उन्होंने हिंदी और उर्दू के सम्मिलित प्रयोगों का पथ भी अपनाया, यद्यपि इस दिशा में वह बहुत दूर तक आगे नहीं गए। अपनी काव्यरचना के अंतिम वर्षों में उन्होंने फिर एक नई काव्यभाषा का प्रतिमान निर्मित किया, जिसमें ठेठ हिंदी की सरलता, विशदता और उक्तिसामर्थ्य है। इन विभिन्न भाषाप्रयोगों में निराला का इतना अधिकार रहा है कि उनकी कृतियों में कहीं भी अशक्तता दृष्टिगत नहीं होती बल्कि कहा जा सकता है कि उन्होंने शब्दचयन और वाक्ययोजनाओं में क्रमागत भूमिकाओं को नया विस्तार दिया है। कुछ वर्ष पहले जो निरालाकाव्य की क्लिष्टता कही जाती थी, आज वह उनका ऐश्वर्य माना जाता है।

काव्यरूपों के क्षेत्र में निरालाकाव्य अत्यधिक समृद्ध है। उनके से सुविन्यस्त गीत हिंदीकाव्य में विरलता से उपलब्ध होंगे छोटे प्रगीतों में, जिनमें से अनेक मुक्तछंद में लिखे गए हैं निराला का कौशल दर्शनीय हुआ है। 'संध्या सुंदरी', 'विधवा', 'भिक्षुक' आदि उनके प्रारंभिक प्रगीत अन्विति के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। दीर्घ प्रगीतों में भी निराला की अबाध गति रही है, यद्यपि इस क्षेत्र में उनके कुछ प्रगीत वर्णनात्मक और इतिवृत्तप्रधान भी हो गए हैं। 'सरोजस्मृति' दीर्घ-प्रगीत का श्रेष्ठतम और सफलतम उदाहरण है। दीर्घ प्रगीतों से और भी आगे बढ़कर निराला की 'राम की शक्तिपूजा' और 'तुलसीदास' जैसी प्रबंधमूलक काव्यरचनाएं भी पाई जाती हैं। इन प्रबंधों का विन्यास काव्यरूप की दृष्टि से इतना सधा हुआ है कि उनमें प्रगीत की समस्त अन्विति भी उपलब्ध हो जाती है। फलतः समीक्षकों ने अब भी यह निर्णय नहीं किया कि ये रचनाएं प्रबंधकाव्य की श्रेणी में रखी जाएं या दीर्घप्रगीत मानी जाएं।

कलापक्ष की इस समृद्धि के साथ हम निराला के भावजगत में प्रवेश करते हैं तो हमें प्रसन्न स्वस्थ और उदात्त भावलोक के दर्शन होते हैं जिसमें एक सामाजिक क्रांति का स्वर भी मिला हुआ है। निरालाकाव्य में यह क्रांतिभावना उन्हें एक प्रगतिशील कवि का महत्व भी देती है। सामाजिक भूमिका पर नारी और पुरुष की समानता का पूरा प्रत्यय उनके काव्य में पाया जाता है। बाह्य वैषम्यों के प्रति उनकी दृष्टि विद्रोहात्मक है। अपने इस प्रगतिशील स्वर में निराला की काव्यचेतना समसामयिक सभी कवियों से प्रखर है। परंतु अन्यत्र निराला सौम्य और संयत शृंगार के कवि हैं। उनकी शृंगारिक भावना में किसी प्रकार

की वैयक्तिक कुंठा का खिचाव नहीं है। निराला के शृंगारिक चित्रों में स्वस्थता का गुण सर्वत्र पाया जाता है। कदाचित् इस स्वस्थता के कारण ही निराला छायावादियों की ऐकान्तिकता की ओर नहीं गए। उन्होंने वीर शांत और हास्य रस तक की भावभूमियों का परिदर्शन किया है। जहां तक निराला के वीर काव्य का प्रश्न है उनकी ओजस्विता सर्वविदित है। इस ओजस्विता की सृष्टि के लिए उन्होंने अनुरूप भाषा का निर्माण किया था। निराला इस युग के प्रशस्त और उदात्त भावना के कवियों में अन्यतम कहे जा सकते हैं।

जयशंकर प्रसाद का काव्य का एक वैयक्तिक वेदना के मूल स्रोत में समन्वित है। इस वेदना की गहराइयों के अनुरूप ही प्रसाद के काव्य का क्रमविकास देखा जा सकता है। उनकी आरंभिक रचनाओं में इस वेदना के कुछ अस्पष्ट चित्र मिलते हैं परन्तु 'आँसू' में प्रसाद ने उस वैयक्तिक वेदना को पूरी तरह निरावृत कर दिया है। स्पन्दन की जो विशिष्टता प्रसाद में पाई जाती है, अन्यत्र दुर्लभ है। इंद्रिय संवेदनाओं की मूलभूमिका में उत्थित होकर प्रसाद का स्पन्दन रहस्यवादी ऊंचाइयों तक पहुंचा है। प्रेम और सौंदर्य के शारीरिक उपादानों में लेकर अतिशय आध्यात्मिक भावस्तर पर ले जाने का श्रेय प्रसाद को ही दिया जा सकता है। इस प्रेम और सौंदर्यदर्शन की समग्रता प्रसाद के 'कामायनी' महाकाव्य में पूर्णत: प्रतिफलित हुई है। मनु के चरित्र की समस्त उच्छृंखलता, उद्वेग उसकी सारी अतृप्ति और असंतोष 'कामायनी' काव्य के आरंभिक सर्गों में व्यक्त हुई है। मनु की महत्वाकांक्षाएं भी उसकी अभावात्मक मन स्थिति का ही परिणाम है। दूसरी दिशा में श्रद्धा या कामायनी है जो नारी के समस्त संयम और कल्याणभावना की प्रतिनिधि है। प्रसाद ने श्रद्धा और मनु नारी और पुरुष के छाया आलोक में 'कामायनी' काव्य में बहुरंगी चित्र सर्जित किए हैं। मनु का प्रत्यावर्तन और उसकी उद्वेगशांति के लिए भी प्रसाद ने श्रद्धा का ही प्रयोग किया है। कामायनी काव्य के अनेक पक्ष हैं, नाना व्याख्याएं हैं। पर उसकी मूल भावभूमिका प्रसाद के निजी व्यक्तित्व का ही महान प्रतिक्षेपण है। आधुनिक युग के किसी अन्य कवि में प्रतिक्षेपण की यह अद्वितीय शक्ति नहीं पाई जाती। 'लहर' के प्रगीतों में प्रसाद की प्रतिक्रिया अधिक स्वच्छ हो गई है। 'प्रलय की छाया' में उन्होंने कमला के माध्यम से ऐसे चरित्र की उद्भावना की है जो सौंदर्यगर्व की साक्षात प्रतिमूर्ति है परन्तु जीवन की अनेक संधियों और मोड़ों को पार करती हुई एक महान पश्चात्ताप में पर्यवसित हुई है। प्रेम और सौंदर्य की समग्र परिकल्पना प्रसादकाव्य की विशेषता है। प्रसाद की काव्यवाणी में जो माधुर्य प्राप्त होता है वह आधुनिक युग के किसी अन्य कवि में नहीं।

कला की आकृतिमूलक और बहिरंग योजनाओं में प्रसाद के समक्ष संस्कृत

काव्य का अशेष आधार और आदश रहा है। अपनी 'जयशकर प्रसाद' शीषक पुस्तक म मैंने 'अभिज्ञानशाकुतल' की वस्तुयोजना से 'कामायनी' की वस्तुयोजना की समानता और अनुरूपता दखने का प्रयत्न किया है। दोनों ही सृष्टियां आशा और प्रमोद के वातावरण से आरभ होकर नियति के गभीर प्रवाह मे उतरती दिखाई दती है और फिर एक अनोखी प्रत्यभिज्ञा स परिचालित होकर स्वर्गीय आनद की भमिका पर पहुचती हैं। दोना कृतियो म यह वस्तुयोजना इतनी समरूप है कि इसकी ओर ध्यान न जाना सभव ही नही। अलकृतियों की विशेपताए भी प्रसाद मे सस्कृतकाव्य की अशेप राशि से प्रतियोजित है। प्रसाद को जब भारतीय सस्कृति का कवि कहा जाता है तब उसका अथ केवल भारतीय दशन म देखना पर्याप्त नही है। प्रसाद के समस्त काव्यसजन म भारतीय काव्यपरपरा का मूल्यवान प्रदय सन्निहित है, परतु प्रसाद न अपनी अतिक्रामक प्रतिभा के द्वारा इस परपरा का सभी दिशाओ म आगे भी बढाया है। प्रसादकाव्य की लाक्षणिकता उनकी अपनी विशेपता है। इसकी दीप्ति उनके काव्य का चतुर्दिक आलोकित करती है।

प्रसाद की काव्यभाषा समरूप और समरस है। उसम निराला की भाति प्रयोगो का बाहुल्य नहीं। जहा कहीं प्रसाद का उदात्त भावना की व्यजना करनी पडी है, वहा उन्होंने भाषा क बदले छदयोजना की सहायता ली है और वीर रस क वणन म तो वह प्राय निस्सहाय हो गए है। शेरसिंह का शस्त्र समपण जसी कविता म भी वीर भाव की अपेक्षा विगहणा की मनोभावना प्रमुख रूप स निर्मित हुई है। हास्य रौद्र और भयानक रसो की अपेक्षा प्रसाद की काव्यभाषा वियोगशृगार और करुण रस क अधिक उपयुक्त बन सकी है। प्रसाद की भाषा म लाक्षणिक प्रयोगो क बाहुल्य की चर्चा हम ऊपर कर चुके है। वक्रोक्ति बहुल लाक्षणिक पदावली की योजना मे प्रसाद की भाषा एक अभिनव भगिमा स समन्वित हो सकी है।

प्रसाद और निराला की तुलना ? ऊपर हम इन दोनो कवियो की जिन पृथक पृथक विशेपताओ का उल्लेख कर चुके है उनम उनकी प्रकृति और प्रवृत्ति की भिन्नता का कुछ आभास मिल गया है। इस भिन्नता क रहते हुए तुलना के लिए अधिक अवकाश भी कहा है ? कितने आश्चय की बात है वयक्तिक अनुभूति की प्रमुखता और प्रबलता रखनेवाले कवि प्रसाद न एक महाकाव्य लिख डाला जबकि वह मूलत श्रेष्ठ प्रगीता क रचयिता की प्रतिभा रखत थ। कदाचित यही कारण है कि कामायनी प्रगीतात्मक भावनाओ का महाकाव्य कहा जाता है और यह भी कम आश्चय की बात नहीं कि निराला जस निस्सग तटस्थ और वस्तुमुखी सौंदयद्रष्टा कवि न कोई महाकाव्य न लिखकर मधुगान प्रगीता म ही अपना सपूण काव्यरचना की है। व प्रगीत उनकी स्वच्छ और उदात्त भावना का प्रतिफलन

करत है जबकि प्रगातकाव्य मूलत वयक्तिक भावात्मक द्वद्वो की क्रीडाभूमि है। निराला के प्रगीतो का बाह्य कौशल और तराश भी किसी विषयिप्रधान कवि का प्रदेय नही है। उसम सवत्र एक क्लासिकल' पूणता प्राप्त होती है। अपन कई प्रगीतो मे तो निराला महाकाव्योचित सौदय की सष्टि भी करते हैं। इस प्रकार प्रसाद का महाकाव्य तो प्रगीतात्मक शली का एक अप्रतिम उदाहरण है और निराला के प्रगीत महाकाव्य की स्वच्छता और उदात्तता स सपन्न है। यह विरोधाभास इस युग की काव्यरचना की एक स्मरणीय विलक्षणता है। दूसरी ओर हम यह भी दखन हैं कि निराला क अधिकाश प्रगीत सामूहिक भावना और रम की भूमि पर सस्थित हैं जबकि प्रसाद का महाकाव्य 'कामायनी वैयक्तिक मनोभावो और परिस्थितियो क सघष और द्वद्व पर सस्थित है। रसात्मकता प्रबधकाव्य का गुण है, पर वह निराला क प्रगीतो म अपनी सपूण विशदता म उपलब्ध है। मनोभावनाआ का ऊहापोह प्रगीतकाव्य की विशेषता है परतु वह 'कामायनी' के विशाल प्रबधु म सफलता स सयोजित है। यह एक दूसरा उल्लेखनीय विराधाभास है। वयक्तिक प्रेरणाआ म उदभूत काव्य म किसी समग्र दशन की नियाजना सामान्यत सभव नहीं हाती। परतु प्रसाद क काव्य म और विशेपत कामायनी' मे एक सपूण दशन की नियाजना हुई है। यह इस युग के हिंदीकाव्य का सबसे बडा चमत्कार है जिसका श्रेय प्रसाद का सवाशत प्राप्त है। निराला स्वय एक श्रेष्ठ दाशनिक हैं, परतु उनके काव्य म दशन का भाव कही दिखाई नही दना। उनका प्रमत्त व्यक्तित्व उनके श्रृगार प्रधान गीता मे प्रतिफलित हो गया है। अतिरिक्त दाशनिकता का एक किनार रखकर निराला न सौदय की ही साधना अपन काव्य म की है। यह एक तीसरा महत्वपूण विरोधाभास है। प्रतिभा क इन वचित्र्या का दखत हुए प्रसाद और निराला की तुलना का प्रयास अपन आप मे असगत हो जाता है। हम इतना ही कह सकत है कि दोना ही कवि अपनी प्रतिभा म महान, अप्रतिम और अपराजेय है।

एक अभिभापण

निराला बसवाडे क सामा य परिवार क व्यक्ति थ। उनकी शिक्षा बगाल म हुई। महिपादल रियासत म निराला क पिता एक सामा य कायकर्ता थे। महिपादल के राजघरान स निराला का सबध रहा है। सगीत प्रेम उ ह वही से उत्प न हुआ। वह सगीत का अभ्यास करन लगे। स्कूली पढाइ म दसवी कक्षा तक मुश्किल स पहुच सके। कहना हागा कि उनम मनस्विता का पक्ष प्रधान था। विशेप कारण यही था कि उनम अ य विपयो की अभिरुचि नही थी। परतु दसव दर्जे तक पढन मात्र स उनकी बुद्धि की माप नहीं होती। बगला के साहित्यकार रवीद्रनाथ का उन पर प्रभाव पडा। रवीद्र क काव्य म उनकी रहस्यवादी अतभूमि भी मिलती है। वह लौकिक वस्तु को स्वतत्र मानकर निर्माण नही करते उम एक अलौकिक आभा म मप न रखत है। काव्य की इस रहस्यवादी भूमिका को निराला ने वहा से लिया। दूसरी प्रवत्ति है विराट चित्रा की सयोजना। अधिकाश कविया की प्रिया प्रियतम की याजना मानवीय भूमि पर ही व्यक्त हुइ। रवीद्र प्रकृति क प्रसार म जात है। यह विराटता उनकी एक अभिनव विशेपता है। निराला म भी इसी प्रकार की विराटता है। उनकी पहली कविता विजन वन वल्लरी पर सोती थी सुहाग भरी जूही की कली शृगारिक है। पर इसकी वस्तुयाजना शृगारिक न हाकर प्राकृतिक है। इसमे प्रकृति के स्वच्छद वातावरण का दिग्दशन है।

उनका सपक राजघरान म था पर वह मूलत एक ग्रामवासी है। सामा यता एसी वस्तु है जा मनुष्य का आग बढा सकती है। साधारण परिवार म ज म लेकर आग बढ़ने की महत्वाकाक्षा उनम द्न्मूल थी। इसी सामान्यता के कारण उनम जनसमाज क प्रति आस्था का विकास हुआ और सामा य जनसमाज के प्रति सहानुभूति जागत हुई। जो सामा य जन क दुख दद हैं उनके लिए गहरी सवदना निरालाका य की विशेपता बनी। वह काव्य द्वारा इस सहानुभूति को व्यक्त करत हैं नारबाजी स नहीं। जा जानिया और समुदाय गिरे हुए हैं वे अपने को पहचानें। मानवीय उत्थान का यह दूसरा तल भी उनक काव्य म है। सब मनुष्या का अधिकार समान है—विभद कृत्रिम है। निरालाकाव्य म यही द्वद्व और सघप मुखरित हुआ है। उनकी महत्त्वाकाक्षा के माग म पडन वाली जो अदम्य बाधाए हैं उनके

विरुद्ध निराला के काव्य में उसी प्रकार की ओजस्विता आई है। उनके महत्वाकांक्षी स्वरूप की झलक महात्मा गांधी जवाहरलाल नेहरू आदि से उनकी भेंट और बातचीत में दिखाई देती है। पर यह महत्वाकांक्षा केवल वैयक्तिक नहीं हिंदी का राष्ट्रीय प्रतिनिधित्व लेकर उपस्थित हुई है। इसी राष्ट्रीय माध्यम में वह अपनी कविता को राष्ट्र के सामने रखना चाहते हैं। उनका कहना है कि, जो साहित्य के क्षेत्र में नहीं है वह दूसरों के कहने सुनने से साहित्य पर फतवा दे तो यह उसकी अनधिकार चेष्टा होगी। महात्मा गांधी ने एक बार लिखा कि रवीन्द्रनाथ के समान हिंदी में कोई कवि नहीं है। तब निराला ने उनसे पूछा कि आपने कौन सी कविताएं पढ़ी हैं? गांधी ने कहा मैंने तो कोई कविता नहीं पढ़ी। निराला ने कहा—फिर आप ऐसा प्रचार क्या करते हैं? ऐसा कहने से गलत फहमी हो सकती है। उन्होंने कहा मैं आपको हिंदी कविताएं सुनाता हूं फिर आप बताइए कि रवीन्द्र की कविता और हिंदी काव्य में क्या समानता और अंतर है?

उनका हिंदी के महत्व पर विश्वास है। अपने काव्य के प्रति भी आस्था है। हिंदी कविता को बिना पढ़े हुए ही लोग कहते हैं कि इसमें वैशिष्टय नहीं है। रवीन्द्र का काव्य एक वृहत्काव्य है। उनकी कल्पनाएं गहरी और उदात्त हैं। हिंदी की अपनी विशेषताएं हैं। निराला में जो क्रांति का स्वर है वह रवीन्द्र में नहीं है। 'जागो फिर एक बार' 'बादल राग' हिंदी की अपनी चीजें हैं।

रवीन्द्र स्वयं धनी परिवार के थे। निराला एक सामान्य स्तर के व्यक्ति थे। अतएव दोनों के काव्यस्वरों में स्वाभाविक अंतर है। निराला ने अपनी स्वतंत्र शैली उपस्थित की है। वह किसी अन्य भाषा या व्यक्ति का अनुकरण नहीं है। निराला का 'सरोजस्मृति' अप्रतिम करुण गीत है। वह विश्व के किसी भी शोक गीत की तुलना में रखा जा सकता है। इसी प्रकार हिंदी के प्रश्न को लेकर, हिंदी-हिंदुस्तानी नाम को लेकर भी निराला ने अपने स्पष्ट विचार व्यक्त किए। काव्य भाषा का स्वरूप क्या हो इस पर निराला ने लेख लिखे। काव्यभाषा के संबंध में गांधी तथा अन्य व्यक्तियों ने कहा कि हिंदी में संस्कृत की बहुलता होती जा रही है। इसे कौन पढ़ेगा। निराला ने कहा कि काव्य और साहित्य के समीप जनता को पहुंचना चाहिए। कवि की भाषा पर नियंत्रण करना, उसे साधारण जनता के अविकसित धरातल पर उतार देना तो ठीक नहीं। उन्होंने गांधी को कई उदाहरणों से समझाया कि संस्कृति किस तरह से आगे बढ़ सकती है। कवि अशिक्षित या अर्धशिक्षित समाज के लिए नहीं लिखा करता।

जीवन संबंधी विचार

निराला ने रामकृष्ण आश्रम में रहकर अद्वैतवाद के ग्रंथ अनूदित किए। 'समन्वय'

का सपादन किया। वेदाती विचारो को पढा। उसस प्रभावित हुए, परतु किसी सम्प्रदाय म रहना वह नापसद करते हैं। जब आश्रम की स्थविरता मे उनका मन ऊब गया तब वह 'समन्वय' की नौकरी छोड 'मतवाला' म चले गए। यहा प्रश्न उठता है कि जो व्यक्ति रामकृष्ण आश्रम मे रहा हो, जिसन 'समन्वय' जस आध्यात्मिक पत्र का सपादन किया हो वह 'मतवाला' मे श्रृगारिक रचनाए कस कर सकता है? वेदात स प्रकृति के विराट स्वरूप का क्या सबध है? निराला म अद्वत विचारणा का ज म वेदात के माध्यम स हुआ। कोई भी स्थिति उदात्त की स्थिति पर पहुच सकती है। सब स्थितिया काव्य के लिए ग्राह्य हैं यह निराला की का य भूमिका है।

आधुनिक साहित्यिक की दृष्टि क्या हो सकती है? जब नए युग का सचार हो रहा हो, तब निवत्तिमूलक दाशनिकता के प्रति अभिरुचि नही हो सकती। निराला न सारी प्रगतिशील परिस्थिति को आखो देखकर उसका उदात्तीकरण किया। उनका काव्य व्यग्य, परिहास के रूप म भी सामान्य चीजो को लेकर बढता है। कुकुरमुत्ता' म सामान्य जन कुकुरमुत्ता के—प्रतीक हैं। निराला न कहा है कुकुरमुत्ता केवल कुकुरमुत्ता बना रह तो उसका महत्व नही है। कविता म 'कुकुर मुत्ता' अपना अहकार प्रकट करता है कि सारी सृष्टि उसी से बनी है— उसकी नकरा पर बनी है। कुकुरमुत्ता जब तक इस प्रकार बढ बढ कर बखान करता रहता है तब तक निराला उसके साथ नही है। वह सस्कृति के हिमायती कवि हैं। जब तक हम प्राकृत रूप म है, तब तक प्राकृत ही है। प्रकृति स सस्कृति की ओर बढन पर ही आत्मलाभ हो सकता है। निराला का जीवनदशन किसी एक वस्तु या प्रवृत्ति तक सीमित नही है। उसम परिपूण वैविध्य है। उसम स्वय एक विराटता की स्थिति है इसलिए किसी वाद का आत्यतिक आग्रह नहीं। यदि वह है भी तो का य का और सस्कृति का है। इसलिए निराला परस्पर विरोधी भावो को भी व्यक्त करत ह। उनक का य मे व्यक्तित्व सबधी तटस्थता, अनासक्ति का तत्व, वस्तु का कलात्मक वणन सृष्टि के दिव्य सौन्दय की झलक मिलती है। निराला म कही भी कोरी श्रृ गारिक वासना की भूमि नही आई है। उनके रोमैंटि सिज्म म निजी वेदना का स्वर नही है। भावना का गाभीय क्या है? वयक्तिक वदना का प्रकाशन गभीर भाव नही कहा जा सकता। गभीरता तटस्थता से आती है तभी ज्यादा गहराइ म जाकर वस्तुचित्रण किया जा सकता है। यह वस्तुमुखी दृष्टि निराला म है। अन्य कतिपय कवियो म वेदना की गहराई के नाम पर केवल आत्मविलाप है। निराला आत्मविलाप से बहुत दूर हैं। स्वच्छन्दतावाद क बाद यूरोप म प्रतीकवादी काव्य आया। मनोविज्ञान से सबधित काव्य बना। टी० एस० एलियट की कविता आई। यूरोप म जो आधुनिक कविता हुई है, उसका

क्या प्रदेय है ? निरालाकाव्य के साथ क्या उस की तुलना की जा सकती है ? यूरोपियन समीक्षा म रोमैंटिक कवियो का कल्पनावादी कहकर टाला जाता है रोमैंटिक कविता का व पीछे की चीज ममझने लग हैं। तब यह नइ ची क्या ह यह प्रतीकवादी काव्य क्या है ? इस कविता म व्यक्तिवाद की प्रमुखता ह। कवि अत मुख हो गए हैं। वे रोमैंटिक कविता की रंगीनी स ऊब चल है। उन्होन नए माग का अत प्रयाण का माग कहा है। टी०एस० एलियट जस कवि समीक्षका क अनुसार आज का ससार वहुत ही कुरूप है। वह सच्चाई से सबध नही रखता। समाज म कोइ भी ग्राह्य वस्तु नजर नही आती। इसलिए कुरूपता को खोलकर रख दना चाहिए, तब नई मस्कृति का जन्म हो मक्ता है। वतमान सस्कृति के विरुद्ध क्रांति की घोषणा य लोग करना चाहत हैं, पर इनका रास्ता क्या है ? क्या मचमुच विश्वमानवता के सारे माग अवरुद्ध है ? या उसम प्रगति का माग ढूढा जा सकता है। क्या हम अतीत क सौंदय का अतीत मे जाकर पकड सक्ते हैं ? या वतमान म उसे अवतरित करना होगा। एलियट अतीत को अतीत म जाकर पकडना चाहत हैं, वतमान उनक लिए गर्हित है। यह दृष्टि सवथा नकारात्मक है।

निरालाकाव्य कौन सा सदेश दता है ? वह उत्थानमूलक सदेश है। वह सस्कृति, मानवव्यवहार, नतिकता का काव्य है। उनके काव्य मे वगवाद स्वतत्र रूप स नही आया है। प्रगतिवादी निराला का नाम लेत हैं कि वह बडा कवि है। परतु उनका प्रगतिवाद मानवीय है। वह वगवाद क आधार पर निर्मित काव्य नही है। अतश्चेतनावादी भी उनका अपना गुरु मानने लग है। आधुनिक हिंदी की सभी काव्यधाराए निराला क काव्य म अपना उदगम ढूढती है। निराला का सभी अपना गुरु मानने लगे हैं। निराला वगवादी नही है, अतश्चतनावादी भी नही हैं। वह अतमुख कलाकार नही है। वह भारतीय नवजागरण के अन्यतम कवि हैं। उनका काव्य राष्ट्रोन्नति के लिए महत्वपूण है। उस खडित दष्टि स दखना अनुचित है। काव्य क प्रति, दशन के प्रति, राष्ट्रीय जीवन के प्रति अन्याय है।

उपेक्षा की एक हल्की सी भावना स उनके स्वास्थ्य की चर्चा होती है। यह उनक प्रति वास्तविक श्रद्धा का निदशन नही है। जिस कवि ने कभी 'राम की शक्तिपूजा' 'सरोजस्मृति' जैसी रचनाए लिखी है, जो अपन आप म अस्खलित और आत्यतिक उदात्त हैं, आज उनकी जीवनस्थिति म इतना परिवतन हो गया कि वह कल्पना की उदात्त भूमि पर जाने के लिए प्रयत्न करन पर भी नही जा पात। सग्राम से पराजित होकर, शरणागति का अनुभूति उनम जागृत हुई है। उनके काव्य मे इस उदात्त शृखला का टूटना एक चिंतनीय वस्तु है। निराला न 'जागो फिर एक बार' 'तुलसीदास' या 'राम की शक्तिपूजा जसी कविताए की थी। 'सरस्वती वन्दना' मे ज्ञानियो का भी कवितारमणी क प्रति पराजित होन

बताया है। ज्ञानियों का काम मुग्ध होना नहीं है। पर यहां उन्होंने ज्ञानी को भी काव्य के सम्मुख मुग्ध होता कहा है। निराला यद्यपि अद्वैतवादी हैं उनका राम कृष्ण आश्रम से घनिष्ठ संबंध रहा है, पर काव्य की भावसत्ता को वह किसी भी दर्शन का अनुवर्ती नहीं मानते। काव्य उनके लिए सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ पर्याय है। निराला ने एक स्थान पर 'कौन तम के पार' संसार के अंधकार के पार कौन सी वस्तु है इसकी जिज्ञासा की है। इस तम (संसार) के पार कुछ नहीं है। जिस प्रकार जल बदलकर बादल बनता है फिर बादल जल में परिवर्तित होता है। जब तत्व एक ही है तब अंधकार के पार कोई वस्तु है इसकी कल्पना क्या और कैसे की जाए? निराला के समस्त काव्य को देखने पर उनकी आस्था किसी रूढ़ दर्शन में स्थिर नहीं दीखती। वह अद्वैतवादी हैं पर संन्यासी जीवन से उन्हें अनुरक्ति नहीं। बड़े से बड़े सिद्धांत को, पुरुष को निराला सापेक्ष महत्व ही देते हैं। उनका आदर्शवादी काव्य भी है और यथार्थोन्मुख भावनाधारा भी। उन्होंने 'जूही की कली' 'तुम और मैं' के साथ 'कुकुरमुत्ता' जैसी रचनाएं भी की हैं। उनका मुख्य सिद्धांत मानवसंस्कृति के उन्नयन का है। दूसरा प्रधान सूत्र आसक्ति के त्याग का है। उनकी सारी रचनाओं में शृंगारिक चित्र मिलेंगे, परंतु कहीं भी मलिन भावना नहीं मिलेगी।

निराला में वैयक्तिक संवेदन है पर स्वपरकता नाम की चीज नहीं है। 'प्रिय यामिनी जागी' में गार्हस्थ्य जीवन (प्रकृति) के सौंदर्य का आलेखन किया है। पूरी कविता में निराला की वैयक्तिक आसक्ति कहीं नहीं दिखेगी। प्रातः होने पर सी वदा हो जाती है, उसे निराला वासना की मुक्ति कहते हैं—ऐसी मुक्ता जो त्याग में तागी हुई है। यहां त्याग के बंधन को स्वीकार किया है। गृहिणी के सौंदर्य का यह वर्णन अप्रतिम है।

निराला का कहना है कि जब तक जड़ता के बंधन से मुक्ति नहीं होती तब तक वासनाएं घेरे रहती हैं। 'जागरण' कविता का यही आशय है कि समस्त बंधनों का अतिक्रमण करना ही मानवकर्तव्य है, उनके 'अलका', 'अप्सरा', 'निरुपमा' उपन्यासों में प्रेम और सौंदर्य के रमणीक चित्र हैं। दूसरे प्रकार की रचनाएं—'कुल्लीभाट', 'बिल्लेसुर बकरिहा' हैं। एक जीवनचित्र 'निरुपमा' में मिलता है और दूसरा जीवनचित्र 'कुल्लीभाट' में। संसार में क्या होना चाहिए यह एक कल्पना है और क्या हो रहा है, दूसरी कल्पना है। निराला की तरह अनेक रसों और भावस्तरों की काव्यसृष्टि इस युग में अन्य किसी ने नहीं की है।

काव्य तभी वस्तुतः अपनी ऊंचाइयों और कलात्मक पूर्णता पर पहुंचता है जब कवि अपनी व्यक्तिगत भावासक्ति से ऊपर उठता और निजी लिप्साओं का अतिक्रमण करता है। युगप्रतिनिधि कवि किसे कह सकते हैं? उसे जो युग की

कहानी को अपनी कहानी बनाए। छायावादी कवि प्राय अपन म ही लीन
आत्मोमुख बने रहे हैं। यह रोमैंटिसिज्म की कमजोरी मानी गई है। जिनम
अपन से पृथक रहने की क्षमता नही है, व वास्तव म विशद काव्यसृष्टि नही कर
सकत। युगकवि को एकात म रहने दें तो उस युग के अनुभव नही हो सकेंगे।
निराला कभी एकात म नही रह इसलिए वह युगकवि और राष्ट्रकवि बनन की
क्षमता रखते हैं। हम अपन इस राष्ट्रकवि के प्रति क्या कर रहे हैं? राष्टकवि
केवल राजनीतिक कवि नही हा सकता। उसे समग्र युगजीवन का प्रतिनिधित्व
करना पडता है। इस दृष्टि स हमार असली राष्ट्रकवि तो प्रसाद हैं। असली
राष्ट्रकवि निराला हैं। जो युगद्रष्टा नही होगा वह राष्ट्रकवि क्या हागा?

एक श्रद्धाजलि

निराला स मरा परिचय बहुत पुराना है। आधुनिक साहित्य व अध्ययन की मुख्य जो प्ररणाए मिली ह उनम स एक मुख्य प्रेरणा निराला की है। पैंतीस वष तक मेरा सबध निराला स रहा, जिसे अभिन्नता का सबध कहा जा सकता है।

निराला के काव्य की परीक्षा आधुनिक युग की पीठिका पर हा की जानी चाहिए। युग के विविध पहलुओ पर विचार करत हुए वतमान समय का कवि कम क्या हा सकता है, इसकी धारणा बनाकर ही निराला का परखना अधिक उपयुक्त होगा। निराला न वतमान युग के उत्तरदायित्व को हृदयगम कर, उसकी पूर्ति के लिए उन समस्त बधना स छुटकारा पा लिया था जा किसी भी प्रकार बाधक बन सकत थ। तब तक कोई कवि अपनी आत्मिक प्रेरणा के अनुरूप काव्यरचना नही कर सकता जब तक उसन अपन व्यक्तित्व का युगजीवन के लिए समर्पित न कर दिया हा। उसके लिए एस पुरुष की आवश्यकता है जो निर्भीक और निर्बध है। एसा व्यक्तित्व निराला का है। इसीलिए उन्ह सामाजिक भूमि पर अनक कठिनाइया उठानी पडी है। उनक काव्य का और उनके व्यक्तित्व का निरादर भी हुआ है। कोई व्यक्ति जानबूझकर पागल नही होता। निराला के अतिम वष विक्षेप के ही वष रह है। उन्होन अपन युग की विषमताओ को दखकर अनतिक तत्वा स खिन्न होकर, उनस मुह नही मोडा। सासारिक जीवन म अभेद्य दीवारा स टकराकर उनकी मानसिक चेतना आहत हुई। यह निराला ही थ जो सुख का जीवन व्यतीत करन के लिए उत्पन्न नहीं हुए थे। निराला का व्यक्तित्व आज के सामान्य कवियो के व्यक्तित्व स एकदम भिन्न था, उनका दुहरा व्यक्तित्व नही था। कहने-करने के दा स्तर नही थ। निराला की काव्य रचना उनके अदम्य साहस उनकी निर्बाध जीवनाभिलाषा स सबधित है। आज यूराप म विभिन्न प्रकार की काव्यधाराए प्रचलित हैं। अब तक मानववादी या सामाजिक दृष्टि विश्वकाव्य की मुख्य भूमिका रही है। यूरोप म एसी स्थिति भी आई जब समाज म इतनी विकृतिया बढ गइ कि कवि की आध्यात्मिक चेतना उन्ह बरदाश्त नही कर पाई। तब समाज की मानववादी भूमिका स अलग हाकर अपन निज क परितोष के लिए काव्यरचना की जान लगी। इस प्रकार व्यक्तिवादी या पलायनवादी काव्य की सष्टि हुई। निराला शुरू स ही अपना रास्ता

निर्धारित करके चले थे और चलते रहे। वह अदम्य साहसी थे। उन्हें अपना रास्ता नहीं बदलना पड़ा। समस्त युगीन उत्तरदायित्वों को अपने व्यक्तित्व में समेट कर रख लेने की तैयारी उनके सिवा किसी अन्य आधुनिक कवि में नहीं पाई जाती। यह उनकी शक्ति का अजस्र स्रोत है।

निराला ने अपनी आरंभिक रचनाओं में वेदांत की भावना को लेकर एक उल्लासपूर्ण मानसिक भूमिका पर कार्य किया। वह एक नवीन सांस्कृतिक काव्य-चेतना को हिंदी में प्रथम बार लाए। उस समय की उनकी कृतियां यह सूचित करती हैं कि वह स्वच्छंद और बहुमुखी सांस्कृतिक चेतना के कवि हैं। मानवजीवन को अधिक सुसंस्कृत बनाने की दिशा में उनके समस्त काव्यप्रयास हैं उन्होंने मानव संस्कृति और राष्ट्रीय संस्कृति को एकाकार करके देखा था। इसे ही हम उनके छायावादी या सौंदर्यवादी काव्य के नाम से पुकारते हैं।

निराला के काव्य में प्रधानतया दो स्वर हैं। एक वह स्वर जो संस्कृति का है—आत्मोल्लास और अडिग आस्था का—और दूसरा वह जो लोकजीवन का है। कोई भी कवि लोकजीवन को छोड़कर सांस्कृतिक भूमिका पर ही नहीं रह सकता। अगर रहता भी है तो उसकी सांस्कृतिक चेतना वायवीय हो जाएगी। दूसरी ओर कोई कवि लोकजीवन और उसकी व्यावहारिक विकृतियों के साथ बहुत दूर तक समझौता नहीं कर सकता। दोनों पक्षों का सामंजस्य श्रेष्ठ कवि में रहा करता है। अन्यथा उसका काव्य वैयक्तिक काव्य बन जाएगा। सामूहिक संस्कृति के उन्नयन का लक्ष्य आवश्यक है। ऐसे आदर्शों की योजना जो कविता को जनसमाज की वस्तु मानकर सामूहिक जीवन और सामाजिक संस्कृति को केंद्र में रखकर उसका उन्नयन करने वाली अभिलाषा और शक्ति रखती हो, सच्ची काव्ययोजना है। ऐसे लक्ष्य को रखकर चलने वाले कवि के लिए जरूरी था कि वह एक ओर मानवसंस्कृति के उच्च आदर्शों से संबद्ध हो और दूसरी ओर लोकजीवन से भी संबंध बनाए रहे। निराला को हम लोकजीवन या सामान्य मानवजीवन की भूमिका पर भारतीय उच्चादर्शों को लेकर चलने और दुहरे आशय की पूर्ति करते देखते हैं। ऐसा कवि जो जनता के वास्तविक जीवन के इतना समीप हो और साथ ही सांस्कृतिक भूमि पर इतना सुदृढ़ और अडिग हो, दूसरा नहीं दिखाई देता। आजकल कई प्रकार के नए और टूटे स्वर सुनाई पड़ते हैं। निराला के काव्य में संतुलन है व्याप्ति है, उनकी अंतिम कविताओं में करुणा है, आक्रोश है, पर जीवन से विच्छिन्नता नहीं। उनकी आरंभिक रचनाओं में एक आशावाद, उल्लास, निर्माणात्मक प्रतिभा, आलंकारिता और सौष्ठव मिलते हैं। जब निराला के आत्मविश्वास पर चोटें पर चोटें लगी तब उनके काव्य में एक कटुता का, जीवन में व्यंग्यात्मक दृष्टि का भी प्रवेश हुआ। मनुष्य या कवि बहुत

दूर तक ऐसे काव्य की रचना नही कर सकता जिसमें बाह्य जीवन की प्रतिराधी प्रवत्तिया असर न डालें। ऐसी स्थिति म निराला न अपन स्वर को बदला। एक ओर 'राम की शक्तिपूजा', तुलसीदास' आदि मे आत्मशक्ति को विजयनी बना कर दश के सामन एव आलोकमय सकेत प्रस्तुत किया। दूसरी ओर उहान व्यग्यात्मक कविता लिखी। इन व्यग्यात्मक रचनाआ का बहुत लोग प्रगतिवाद भी कहते है। पर वहा काइ वाद नही है। उहान 'मास्को डायलाग्स' म एक ऐस व्यक्ति का उपहास किया है जा रूस म छपी हुई नई स नई पुस्तक को अपने मित्रा का घूम घूमकर दिखाता है पर हिंदी का एक वाक्य भी शुद्ध नही लिख सकता। इसका आशय यह नही कि उह प्रगतिशील नए समाज के प्रति सहानु भूति नहीं थी। नए युग क सामाजिक वैषम्या और विकृतिया पर ही तो उनका व्यग्य है। सास्कृतिक कवि हान के कारण उहोने सावत्रिक उनयन की माग की।

कुकुरमुत्ता पर लाग अनक ढग से विचार प्रकट करत हैं। उसम काइ विधा नात्मक पक्ष या रचनात्मक पक्ष नही है, एसा कहा जाता है। कुकुरमुत्ता' केवल धार ही धार है, तलवार ही तलवार है उसम मूठ है ही नही। कुकुरमुत्ता' को यदि आप पढ़ें तो देखेंग कि उसम एक ओर सवहारा वग का पक्ष है। वह सामती पूजीवादी सभ्यता की खिल्ली उड़ाता है। साथ ही वह युग की समस्त एका गिताआ का भी उपहास करता है और अत म आतिशयिक अतिरजना द्वारा अपने सबध म भी बढ चढ कर बात करता और अपने को भी उपहासास्पद बनाता है। फिर कुछ शेष रहता है। 'कुकुरमुत्ता' का आशय यह है कि गुलाब भले ही पुरानी या सामतवादी सस्कृति का प्रतिनिधि है, और वह कुकुरमुत्ता स्वय एकदम नवीन है। पर व्यजनाशक्ति के पारखी उनकी उक्तियो के व्यग्याथ को समझ सकत है। व्यजना यह है कि न पुराना गुलाब न नया कुकुरमुत्ता ही आधु निक सास्कृतिक आदश की पूर्ति कर सकत हैं। हमारी वतमान सस्कृति कुकुर मुत्ता की भूमिका से उठकर नई सष्टि और नया विकास करगी तब हम एक समुनत सस्कृति ला सकेंग। नया गुलाब ही पुरान गुलाब का स्थान ले सकता है। नया समाज और उसकी नई सस्कृति ही पुरानी सस्कृति की स्थानापन्न बन सकती है। इस प्रकार कुकुरमुत्ता कविता निराधार व्यग्य नही है। वह सस्कृति के सजन म नए मौलिक तत्वो का सकेत देती है।

निराला के इस काव्यचरण के पश्चात अय चरण भी हैं। अतिम समय म उनकी कविता आत्मनिवदन और विनय के भावा से आपूण हा गई है। कुछ लोग उनकी इस काय भूमिका को भक्तकविया की वैयक्तिक साधना की भूमि पर रखकर दखना चाहते हैं। मरा अपना मत है कि निराला इस प्राथनाकाय म सामाजिक दष्टि की उपक्षा नही करत। अधिकाश गीत ऐसे हैं जिनम वह एक

ऐसी शक्ति का आवाहन करते हैं जो हमारे समाज की वर्तमान विषमताओं और सामाजिक विकारों का प्रक्षालित कर सकें। इस प्रकार निराला का व्यंग्यकाव्य और यह प्रार्थनाकाव्य एक ही आशय सूत्र म जुड़े हुए हैं। निराला की गीत सृष्टियाँ जयदेव और विद्यापति की परंपरा का अनुवर्तन करती है, वह शास्त्रीय भूमिका पर है। उनकी तुलना प्रसाद, महादेवी आदि के वैयक्तिक भावना समन्वित गीतों से नहीं की जा सकती।

निराला के संबंध म संदेश देते हुए राष्ट्रपति ने उन्हें भारतीय परंपरा का एक महान कवि और मौलिक विचारक बताया है। निराला सचमुच भारतीय परंपरा के कवि थे। उनका व्यक्तित्व भारतीय कवि परंपरा से जुड़ा हुआ है। भारतीय अध्यात्म तत्व को उन्होंने अपनाया था। उनका जीवन रामकृष्ण के जीवनदर्शन से प्रेरित होकर विकसित हुआ था।

कवि निराला मुक्त छंद तथा गीतिरचना के कवि थे। उन्होंने देश की नवीन स्थिति म उसके सामाजिक जीवन की बदलती हुई भूमिकाओं पर वास्तविक उन्नयनकारी साहित्य का सृजन किया। निराला ने अपने काव्य का मेरुदंड मानववादी भूमिका पर स्थिर कर लिया था। उन्होंने छंद के बंधन को तोड़ा, इसके कारण कुछ लोग सोचते हैं कि उन्होंने काव्यसंस्कृति के साथ अन्याय किया। उसके बाद न्याय करने के लिए उन्होंने गीतबद्ध रचना की। वास्तव म ऐसा नहीं है। निराला मुक्तछंद के भी कवि हैं और गीतों के भी। उनके पास ऐसी प्रतिभा थी कि उन्होंने संगीत तत्व का योग मुक्तछंद म भी किया और उसी तत्व के योग से गीतों की भी रचना की। हिंदी कविता को गीत के माध्यम से ऐसा विशिष्ट कृतित्व दिया, जिसके जोड़ का कृतित्व हिंदी म अन्यत्र नहीं है। इस युग की जितनी काव्य शैलियाँ हैं उनका प्रवर्तन और संस्कार उन्होंने किया। वह एक साधक कवि थे। सांसारिक जीवन के बंधनकारी उपादानों का उन्होंने आरंभ से ही छोड़ दिया था। निराला ने व्यावहारिक जीवन की उन समस्त बाधाओं का आरंभ से ही तिरस्कार किया था जो कवि की भावसाधना और उसके स्वातन्त्र्य में आड़े आती हैं। इस दृष्टि से वह हिंदी के अप्रतिम कवि थे।

उनके काव्य का जो प्रगतिवादी स्वर है वह उनका परवर्ती स्वर है। उन्होंने युग की विषमताओं को देखते हुए इस प्रकार की रचना की है। वे कविताकला के साधक थे। जब कभी वह दूसरे कवि के काव्य को सुनते थे। उसकी भरपूर प्रशंसा करते थे। इस प्रकार की उदारता और इस प्रकार की सौंदर्याभिरुचि आज समीक्षकों म भी कम पाई जाती है। व्यावहारिक बंधनों से दूर एेसे चिंतनशील और भावनावान कवि शताब्दियों म भी कभी कभी ही आते हैं।

निराला के कृतित्व का लेकर दो तीन प्रश्न किए जाते हैं। एक यह कि क्या उन्हें छायावादी कवि कह या प्रगतिशील कह या प्रयोग बहुल कवि के रूप म वे गीता और छन्दो के स्रष्टा मान जाए ? निराला को विभिन्न वादा का प्रवतक कहा गया है। आज अनकानेक शैलियो और वादा के कवि उन्हे अपना आदि गुरु कहन लगे हैं।

दूसरा प्रश्न है कि निराला मूलत शृगार के कवि है या वीर रस के अथवा शात या करुण रस के कवि है ? यद्यपि महान कवि के लिए किसी रस की सीमा नही होती, पर यह प्रश्न निराला काव्य के सबध म उठाया गया है।

तीसरा प्रश्न है आधुनिक युग की काव्यधारा मे काव्यविकास म, ससार की वतमान काव्य प्रवृत्तियो के बीच, निराला का अपना वशिष्ट्य क्या है ? उन्हें आज के पश्चिमी काव्य की किस धारा से सबद्ध किया जाए ? मैं सक्षेप म इन तीना प्रश्नो पर अपना अभिमत दना चाहूगा।

पहला प्रश्न वादा के सबध का है। निराला ने किसी वाद विशेष का आग्रह नही किया। उनका एक ही मौलिक आग्रह दशन या सस्कृति सबधी रहा है। वाद की सीमा म वह नही बधे। यदि दशन की सीमा को ही वाद का आधार दिया जाए तो हम उन्हें भारतीय वदात दशन का कवि कह सकते हैं। उनकी दार्शनिक प्रौढता ही उनको विभिन्न वादा म ले गई है पर किसी एक वाद का वशवर्ती नही बनाया। मूलवर्ती दाशनिक चेतना के कारण वह कही भटके नही। इसलिए निराला को किसी वाद के घेरे म रखन का उपक्रम उचित नही। अनक वाद और शलिया उनके काव्य म अतर्भूत हैं, और व उन सबके स्रष्टा होकर भी उन सबसे परे हैं।

अब रसा के प्रश्न को लीजिए। कुछ लाग उन्हे मधुर शृगार का कवि कहते हैं। कुछ उन्हे पौरुष का कवि मानत है और वीर रस की प्रधानता दखन हैं। उनके अतिम गीता का स्वर आत्मनिवदनात्मक है और शात तथा करुण रसा की व्यजना करता है। हम देखना है कि वे किस रस की निष्पत्ति म सबम अधिक सफल हुए हैं। निराला के काव्य म रस उनकी सास्कृतिक चेतना की उपज है। यदि वह सास्कृतिक चेतना शुद्ध न होती, तो वह विभिन्न रसभूमियो म जाकर किसी एक की भी मार्मिक अवतारणा न कर पात। यह कहना कठिन होगा कि उनम किस रस की प्रधानता है ? जसे प्रकृति की ही कोई वस्तु विकसित होती हुई विभिन्न रूप धारण करती है उसी प्रकार उनका व्यक्तित्व आगे बढा है। उनम वीर रस की भी योजना है। उनम सुदरतम शृगारिक तत्व भी जुडे हैं। उनके अतिम समय के गीत मूलत शात और करुण रसा स सपृक्त हैं। उनके काव्य को किसी रस विशेष की श्रेणी म नही रखा जा सकता। वह सुदर प्रगीतो के,

उदात्त वीरगीतो के और मार्मिक करुण भावो के स्रष्टा हैं। वह इन सबके कवि हैं और इन सबको पार भी कर गए हैं।

अब हम अपने अंतिम प्रश्न पर आते हैं। आज के काव्ययुग म निराला का किस प्रकार का वैशिष्ट्य है ? यूराप म तो कविता खडित हो चुकी है। कदाचित यही कारण है कि वहा के काव्य म आज एसा प्रखर और सर्वतोमुखी व्यक्तित्व नही आ पाया है। रवीद्रनाथ के काव्य म भी यही विशालता है परतु यूरोपीय काव्यसमीक्षा म उन्हे रहस्यवादी प्रतीकवादी कवि की सीमित भूमिका देकर देखा गया है। निराला के साथ भी एसा सीमानिर्धारण नही किया जा सकता। आधुनिक युग म टी एस इलियट ने जो विभिन्न मोड लिए हैं वसे ही बडे मोड निराला ने भी हैं। निराला सपूर्ण युग के सघर्षो म गुजरे है। उन्होने समाज की महान विकृतियो को देखा है। फिर भी उन्होने मानवजीवन के प्रति आस्था कायम रखी है। तभी उनका काव्य मानववादी भूमिका पर स्थिर रहा है, वह व्यक्तिनिष्ठ, पलायनवादी या प्रतीकवादी नही बना। निराला के व्यक्तित्व म एक तत्व ऐसा है जो युग की समस्त जीवन-भूमिका पर एक समन्वय स्थापित कर सका है। वह पहले आशा के स्वर को लेकर चले हैं पीछे आक्रोश के स्वर को और अत म परम सत्ता के आह्वान के स्वर को। अपने व्यक्तित्व और वैयक्तिक साधना के बल पर उनके काव्य म एक सामजस्य है। वह सामजस्य की भूमिका मानववादी स्तर पर है मानवजीवन के प्रति आस्था पर निर्मित है, यह निराला का मूल्यवान प्रदेय है। जो काव्य मानवविकास के लक्ष्य को छोडकर चलता है, आत्मताप और वैयक्तिकता का रास्ता पकडता है—एस काव्य की वतमान युग म कमी नही है। आज यूराप मे एसे कवि भी हुए हैं जो पूर्णत समाजनिरपेक्ष जीवननिरपेक्ष और व्यक्तिवादी-अस्तित्ववादी है। निराला को ऐसे सकीर्ण अनुभवो म जाने की आवश्यकता नही पडी। उन्होंने मनुष्यता पर विश्वास नही खोया। कविता को वयक्तिक या खडदर्शन की भूमिका पर ले जाकर आत्मविच्छेद नहीं किया उनके अपने आदर्श, विश्वास खोए नही। आज टी एस इलियट जैसे कवि अनास्था छोडकर पुन मानववादी काव्य का सस्पर्श कर रहे हैं। महान कवि वह है जो आस्था नही खोता पराजित नही होता और अपने को कठिन परिस्थितियो म रखकर भी मानववादी भूमि पर बना रहता है। निस्सन्देह निराला ऐसे ही कवि हैं। वह भारतीय साहित्य के मणिदीप है, उज्ज्वल आलोक नक्षत्र है। निराला का अस्त हिंदी काव्यसूर्य का अस्त है।

ऐसे विशिष्ट और महान सघर्षशील कवि के प्रति हम अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए अपूर्व गर्व का अनुभव करते है।

समाहार

निराला के व्यक्तित्व और काव्य के सबध म अनक अनोखी धारणाए हिंदी साहित्य मे प्रचलित रही है। आरभ म तो एक अनबूझ या दुरधिगम्य कवि क रूप म समझे जाते थ और वर्षों तक उनकी कविताए शिक्षालयो और विश्वविद्यालयो के पाठ्य क्रम के बाहर रखी गई थी। निराला की शली और अभिव्यजना सश्लिष्ट और अथगभ रही है। कदाचित इसीलिए वह सामान्य पाठको और सामान्य विशेषज्ञो की भी पहुच के बाहर थी। परतु पाठको का एक वग उनके प्रति आरभ से ही आकृष्ट था और यह वग उनके काव्य में ऐसी विशेषताए पाता था जो अन्यत्र दुलभ थी। जिस भाव या रूपचित्र को निराला प्रगीत की चार पक्तियों या गीत के एक बध म अकित कर देते थे उसे दूसरे कवि पूरी खींचतान और फैलाव के पश्चात भी उपस्थित करने म अक्षम रहते थे। जो पाठक सस्कृत और पाश्चात्य काव्य की अथप्रवण अभि यजना से परिचित थ, उन्ह निराला का काव्य सदैव अभीष्ट और ममपूर्ण लगता रहा है।

कुछ समय के अनतर निराला को क्रातिकारी और पौरुषवान कवि का अभि धान दिया गया। परतु उनकी क्रातिकारिता अधिकतर छदो का बधन तोडने म मानी गई और उनका पौरुष शिवाजी का पत्र जसी प्रखर रचनाओ म माना गया, जो पुन एक एकागिता थी। निराला की क्रातिकारिता जितनी छदबधन तोडन म थी उतनी ही छदो का नवविन्यास करने म भी थी। इस तथ्य की ओर लोगो की दृष्टि कम ही गई। क्राति केवल नियमोल्लघन म नही है, वह नवविन्यास और नवनिर्माण म भी है, इसका प्रयत्न कम ही हो पाया। निराला का पौरुष केवल उनकी ओजस्विनी शब्दावली म दखन की चेष्टा की गई और लोग ऐसे उद्धरण दत रह जिनम भावागत प्रखरता ही प्रधान थी। किंतु पौरुष वस्तुगत भी होता है और वह वस्तुत वस्तुगत ही होता है यह अभिज्ञता बहुत विलब स हो पाई। निराला के बादल राग म जो स्वतत्र अस्खलित उद्दाम और अदम्य भावधारा थी, वह सामाजिक क्राति का गभीर स्वर उदघोषित कर रही थी। यह वस्तुगत पौरुष जीवन दृष्टि का परिणाम था यह केवल वीरभावना की अभिव्यक्ति मात्र नहा था। वह स्वातन्त्र्य की एक अप्रतिहत झकार थी जिस बहुत स लोग न सुन सके थे और न समझ सके थ। पौरुष शब्दो का गुण नहीं है न वह कविता का गुण है,

वास्तव म वह कवि की चेतना का प्रतिफलन है, जो सार काव्य म व्याप्त रहता है।

काव्यशास्त्र की पुरानी पगडडी पर चलन वाल पडितो ने भी निरालाकाव्य पर आपत्तिया की थी, जिनम से मुख्य आपत्ति यह रही है कि निराला की कविता म व्यजना की अपक्षा अभिधा और अभिधेय चित्रो की प्रमुखता है। निराला वस्तु मुखी कवि रह हैं। उनके रूपचित्र अधिकतर मावयव है। उन अवयवा की मघटना के द्वारा ही उनकी चित्रात्मकता निर्मित हुई है। यह नवीन काव्य की एसी विशेषता है जो सदैव प्राचीन शास्त्र से समर्थित नही है परतु नए भावको के लिए यह एक अभीष्ट भावनदिशा है जिसे निराला काव्य के प्रमी महत्वपूण मानत हैं। इसी से मिलता जुलता एक और विचार है जो छिट फुट रूप म हिंदी समीक्षा म दुहराया गया है। वह यह है कि निराला कवि नही है गीतप्रणेता या कपोजर मात्र है। उनकी रचनाए केवल गेय है काव्यविधि स आस्वाद्य नही हैं। परतु इस प्रकार के प्रकीणक वक्तव्य निरालाकाव्य के अध्यताओ के लिए कभी ध्यान देने याग्य नही रह और न आज ही है।

कुछ समीक्षको न निराला को अपनी अपनी विशेष दष्टियो स दखन का प्रयत्न किया है और कई तो उन्ह वाद विशेष की सीमा म भी ल गए हैं। किसी भी बडे कवि के लिए यह असभव नही कि उसकी कुछ रचनाए किसी सामयिक वाद क अनुकूल हो, परतु जब किसी कवि का समग्र और सर्वांगीण विवेचन किया जाता है, तब वाद की सीमाए स्पष्ट होन लगती हैं और कवि सभी वादो स बडा दिखन लगता है। अभी हाल म एक समीक्षक महोदय न उनकी कुछ रचनाओ म अतियथार्थवाद या 'स्ट्रीम काशमनस' की पद्धति को दखन का प्रयत्न किया था। पर न तो वह निराला के साथ न्याय कर सके, न अतियथार्थवाद या मुक्त आसग पद्धति का ही स्पष्ट स्वरूप उदघाटित कर सके। यह स्वीकार करन म किसी को आपत्ति नही हो सकती कि निराला न अपन मुक्तछन्द के आविष्कार स हिन्दी की नवीन और आधुनिक कविता का व्यापक रूप से प्रभावित किया परतु उन्होने अन्य विधियो से भी हिंदी काव्य पर अपनी छाप डाली है। उनकी अभिव्यजना की विविधता और चमत्कार प्रयोगवादियो का भी प्रकाम्य हुए हैं। कुछ लोग निराला को प्रगतिवाद और प्रयोगवाद दोनो का जनक विज्ञापित करत रह हैं। उन सबके विचार अशत सगत भी है परतु इस प्रकार का सबधनिरूपण उन सभी प्रगल्भ कवियो के साथ किया जा सकता है जो सीमाओ म रहना नही जानते। निराला की प्रतिभा म सीमाओ का अतिक्रात करन का गुण विद्यमान रहा है परतु इसके साथ ही उनका एक जीवनदशन तथा एक रचनाविधि भी है, जो बहुत-कुछ समरस बनी रही है। उनके काव्य के वैविध्य म समरसता की खोज प्रस्तुत पुस्तक म

मेरा प्रयास रहा है । उनकी रचनाविधियो म एकात्मता और परिनिष्ठित रूप को ढूढन और पाने का प्रयत्न भी मैंन इसम किया है।

निराला यद्यपि सामाजिक भूमिका के अत्यत सामान्य स्तर स उत्थित होकर साहित्यिक क्षेत्र म आए थे, परतु उन्ह बगाल के एक समृद्ध राजवश का साहचय मिला था और वह तत्कालीन सगीत और बगला काव्य म अशत निष्णात हो चुके थे। यह थाडे लाग जानत है कि वह प्रकृत्या एकातप्रिय थे। 'निराला' उपनाम वगाली प्रचलन म एकातजीवी का ही पर्याय है। केवल साहित्य और कला के क्षेत्र म ही नही, दशन की ओर भी उनका झुकाव उनकी एकातप्रियता के प्रभाव से ही अपक्षाकृत अल्पवय मे हुआ था। वह अधिकाश म विवेकानन्द और रामकृष्ण के अध्यता थे। उनके काव्य म जो वचारिक और दाशनिक तत्व अनुस्यूत हैं, व इसी के परिणाम है। निराला को भावनावादी या कल्पनावादी कवि कोई नही वह सकता।

वैचारिक और कलात्मक स्तर पर इन आरभिक उपलब्धियो के साथ निराला शारीरिक साधना और स्वास्थ्य के प्रति भी सदैव सजग रहे थे। प्रशस्त शरीर तो उन्ह वशपरपरा से मिला था, पर उस साचे म ढालकर बलवत्ता और अवयव सगति दने म उनकी निजी चेष्टाए कम न थी। मल्लविद्या का अभ्यास ता उन्होने किशोर वय स लेकर पैंतीस की आयु तक किया परतु फुटबाल जैसे आधुनिक गत्वर खेल म भी उनकी गति और योग्यता उल्लेखनीय थी। इस प्रकार एक ऐसे व्यक्तित्व की निर्मिति का आभास मिलता है जा अपन वहिरग म विश्वस्त और सघर्षों के लिए तत्पर तथा अतरग म कलाचेतना से सपन्न तथा प्रकृति से एकात जीवी और अतर्मुख रहा है।

उस मूल व्यक्तित्व पर देश और काल के प्रभाव भी स्वाभाविक रूप से पडे हैं, जो उनके काव्य तथा साहित्य मे प्रतिफलित दिखाइ देते हैं। द्विवदीयुग के तात्कालिक विपया की काव्यरचना स वह सदैव दूर रहे हैं। उन्हाने काव्य के विपयचयन म समाज की सतह पर की स्थितियो और समस्याआ पर ध्यान नही दिया। 'विधवा' और 'भिक्षुक' पर लिखते हुए भी उन्हान भारतीय विपन्नता और सामाजिक असगति का ही चित्रण किया है। उनका काव्यपटल सामयिक स्थूल प्रभावा से प्राय रिक्त रहा है। प्रत्यक्ष या लौकिक वस्तु को वायवीय रूपातरण देन मे वह आरभ से ही सतक थ।

निराला प्रकृति के अतरग प्रेमी और उपासक रह हैं। पुष्पा और वनस्पतिया नदिया और वनस्थलिया का उनका साहचय अत्यत समीपी रहा है। बगाल की 'दक्षिना' (मलय) वायु उनकी काव्यप्रेरणा का साकार स्रात रही है। प्रकृति के नुस सौंदय के साथ निराला अद्वत दशन का मिलाकर चले हैं। चेतन शक्ति ही

प्रकृति को आकपण देती है, साधक बनाती है, अन्यथा सब कुछ माया तो है ही। *निराला की यह दाशनिकता उनके गभीर प्रकृतिप्रेम और सौंदयचेतना की सहकारिणी रही है।*

निराला प्रेम और शृगार के कवि भी हैं। उनके प्रगीता मे प्रेम की कल्पना *अतिशय उदात्त है, और साथ ही नैसर्गिक भी। कहा जा सकता है कि निसग की भूमि* पर ही उदात्त का आनयन उन्हान किया है। उनकी दृष्टि म प्रेम मानव की श्रेष्ठ उपलब्धि है। प्रेमतत्व को वह ज्ञान के समकक्ष रखत हैं। उनकी दृष्टि मे प्रेम और सौंदय की अनुभूतिया कवि का विशेषाधिकार है। सामान्यजन प्रेम और सौदय को स्वाथ के स्तर पर देखता और अपनाता है। वह उनसे कुछ पाना चाहता है, परतु कवि और द्रष्टा प्रेम और सौदय को पदाथ की भूमि पर देखत हैं। हृदयो मे प्रेम और सौंदय की चेतना वह निर्विकल्प भाव से भरत हैं। यही उनकी दृष्टि मे कवि की विशिष्टता है।

ऊपर हमने देश और काल की परिस्थितिया और प्रभावो की चर्चा की है। निरालाकाव्य मे ये प्रभाव उनकी अद्वतवादी दाशनिकता के अग बनकर आए हैं। प्रकृति के समस्त सौंदय म एकात्मता, मानवीय सबधा क वषम्यो का निराकरण और साम्यस्थापन तथा सास्कृतिक और राष्ट्रीय आदशमय प्ररणा उनके काव्य म सवत्र विद्यमान है। राष्ट्रीय दृष्टि से एक नवोन्मेष के युग मे काव्यरचना करने का पूरा प्रमाण वे देते हैं। भारत की सुषमा और सौदय के साथ उसके प्रति आत्म समपण और कतव्यनिष्ठा के भाव निराला के आरभिक काव्य म प्रचुरता से प्राप्त होने हैं। 'माता और 'जननी' शब्द का प्रयोग उन्हान इसी राष्ट्रभूमि के लिए अधिकतर किया है। नारी के प्रति निराला की सम्मान भावना, निष्ठा और सवेदना सवत्र पाई जाती है।

उनके परवर्ती काव्य म यह उदात्त दाशनिकता, आदर्शोन्मुखता और सौदय चेतना रूपातरित हुई है और निराला की काव्यशली म व्यग्य, विनोद और परिहास के तत्व समाहित हुए हैं। इस परिवतन के मूल म कदाचित निराला की बढती हुई आयु और प्रौढ होत हुए अनुभवो का स्थान है। अपने आरभिक व्यग्यकाव्य मे निराला कुछ वैयक्तिक रहे हैं। उन्होने अपने को केंद्र म रखकर दूसरो के प्रति कटाक्ष किया है परन्तु शीघ्र ही वह यहा भी वस्तुमुखी और सावजनिक हो गए हैं जसा कि 'कुकुरमुत्ता' 'खजोहरा', 'स्फटिकशिला' और 'नये पत्ते' अनेक लघु रचनाआ मे दिखाई देता है। इन कविताआ की व्याख्या करते हुए किसी ने उन्हे प्रगतिवादी, किसी ने यथाथवादी कहा है। निराला का मुख्य परिवतन शैलीगत है। जहा तक उनके विचार और भावपक्ष का सबध है उनकी प्रेरणा भारतीय सस्कृति और दशन की प्रेरणा ही रही है।

शैली के क्षेत्र में एक अन्य प्रयोग उदात्त संबंधी है, जिसके दो उदाहरण 'राम की शक्तिपूजा' और 'तुलसीदास' की रचनाएं हैं। 'राम की शक्तिपूजा' का औदात्य आत्यंतिक नहीं है, क्योंकि उसकी मूल चेतना संशय और करुणा के तत्वों से निर्मित है। 'तुलसीदास' की कल्पना में वस्तुगत औदात्य का अधिक ध्यान रखा गया है, यद्यपि उसमें भी शैली का औदात्य अधिक मुखर हो उठा है। निराला की ये कृतियां वीरगाथा या 'बलेड पोइट्री' के स्तर पर प्रणीत हुई हैं जिसमें अलौकिक तत्वों की योजना प्रायः रहा करती है। महाकाव्य के औदात्य से 'बैलेड' की ओजस्विता भिन्न होती है, इसे समझना आवश्यक है। महाकाव्य का औदात्य भावों और परिस्थितियों के गंभीर चित्रण पर अवलंबित रहता है जबकि वीरगीत में आश्चर्य और अलौकिकता का आधार रहा करता है।

हिंदी के समीक्षकों ने निराला के दीर्घ प्रगीतों का एक काव्यरूप के स्तर पर अधिक विचार नहीं किया है। निराला के दीर्घ प्रगीत उनके काव्य की एक स्वतंत्र इकाई हैं और अपनी काव्यात्मक विशेषता और महत्व में उल्लेखनीय हैं। ध्यान देने की बात यह है कि ये दीर्घ प्रगीत प्रायः सन् 35 और '38 के बीच में लिखे गए हैं। इसके पहले या पीछे उनके दीर्घ प्रगीतों की संख्या स्वल्प है और उनकी रूपरेखा भी अनियमित और अनिर्दिष्ट है। उदाहरण के लिए 'यमुना के प्रति' कविता आकार में दीर्घ होती हुई भी स्वरूप में लघुप्रगीतात्मक ही है। निराला के दीर्घ प्रगीतों में 'सरोजस्मृति' शीर्ष स्थान की अधिकारिणी है। भारतीय काव्य में इसके जोड़ की कविता अत्यंत विरलता से प्राप्त होगी। दूसरा उत्तम दीर्घ प्रगीत 'विम्रम सहस्राब्दी' है जिसमें निराला की समाहार क्षमता और इतिहास ज्ञान का विशद और सुंदर परिचय मिलता है। हिंदी के कतिपय समीक्षकों ने, न जाने क्या, 'राम की शक्तिपूजा' और 'तुलसीदास' को निराला की सर्वश्रेष्ठ रचना कहा है। कदाचित उनका काव्यविवेक 'औदात्य' का विश्लेषण नहीं कर सका है। वास्तव में 'सरोजस्मृति' की तुलना में ये दोनों कविताएं आयास साध्य और बहिरंग प्रसाधना से समन्वित कही जाएंगी। उनमें 'सरोजस्मृति' की सी अनिवार्यता और गंभीर संवेदना नहीं है।

यहीं हमारा ध्यान उन कतिपय समीक्षकों की ओर जाता है जो निराला को प्रमुखतः वीराख्यान का कवि कहते हैं और कवि द्वारा सुनाई जानेवाली 'जागो फिर एक बार' और 'शिवाजी का पत्र' की स्मृति को सजाए बैठे हैं। वास्तव में निराला बहुलप्रतिभा के कवि हैं। कोमल और मनोरम गीत, स्वच्छंद और सौंदर्योपेत प्रगीत, विनय और प्रार्थना की सृष्टियां, हास्य और विनोद के प्रकरण, वीर-भावना की उद्दाम और प्रशस्त कृतियां उनके काव्य की समान उपलब्धियां हैं। उनके काव्य को किसी एक काव्यरूप के अंतर्गत रखकर, या उस रूपविशेष को

प्रमुखता देकर देखना न उचित है और न सभव। निराला विविध काव्यरूपो के आविष्कारक और प्रयोक्ता है।

इधर कुछ समय से नई समीक्षा म 'उदगार' नामक एक शब्द चल पडा है। किसी भी कवि को उद्‌गारप्रधान कहकर उसकी साहित्यिक सामान्यता या निम्नता का उल्लेख करना फैशन मे दाखिल हो रहा है। काव्य की विषयवस्तु के साथ उसकी अभिव्यजना सयुक्त रहती है। कोई काव्य अपन मे उदगारप्रधान अथवा भावनाप्रधान नही कहा जा सकता। जसी काव्य वस्तु होगी, जैसी कवि की वस्तु के प्रति प्रतिक्रिया होगी, वसा ही उनका बाह्य आकार या अभिव्यजना हागी। आज की अतमुख कविता यदि उदगारा पर विश्वास नही रखती तो यह उसकी अपनी सीमा है। परतु यह काव्य की कोई कसौटी नही हो सकती। साहित्य समीक्षक उद्‌गार की अकाव्यात्मकता को पहचान सकता है और उसकी काव्यात्मकता का भी। उद्‌गार अपन म ही अकाव्यात्मक है, यह आरोप केवल विशेष खेमे के व्यक्ति ही कर सकत है। निराला के काव्य म ऊपरी दष्टि स उद्‌गारा का स्थान है, परतु उनकी अतरग भावना उदगारप्रिय नही है वह रूप और चित्रण प्रधान है

सिहीनी की गोद से छीनता रे शिशु कौन!
एक मेष माता ही रहती है निर्निमेष,
छिनती सतान जब, जन्म पर अपन अभिशप्त तप्त आसू बहाती है।

सतही दष्टि स देखने पर ये पक्तिया उदगारप्रधान प्रतीत हागी, परतु सतुलित दष्टि रखन वाले भावक इसकी रूपात्मकता और गभीर सवेदना को अच्छी तरह समझ सकते हैं। आजकल लाग अभिव्यक्ति म ही नही, छदा मे भी उद्‌गारात्मकता के दाप दखने लगे है। शायद छद स्वय उदगार है, इसलिए आज के अतिवादी मुक्त छद ही नही छदमुक्ति का राग अलाप रहे है। परतु इस प्रकार की प्रक्रियाए न ता कविता का ही कल्याण कर सकेंगी और न काव्यविवेक को जागत करन म ही समथ होगी। वहा पर कोई रचना कवल उदगारात्मक हा गई है, यहा पर वह भावप्रवेग को वहन करती और प्रचड रूपो का माध्यम लेती है इसकी बिना छान बीन किए 'उद्‌गार' विशेषण का प्रयोग करना न केवल एक असाहित्यिक क्रिया है बल्कि प्रयोक्ताआ की अपनी अल्पप्राणता का प्रमाण भी बन जाती है। कविता केवल अतरालाप या स्वगतकथन नही है वरन वह परिपूण आलाप या आत्माभिव्यक्ति है इस तथ्य से अवगत होन पर ही निरालाकाव्य का विशेषत्व समझा जा सकता है।

निराला दाशनिक और सास्कृतिक कवि हैं परतु उनकी दाशनिक और सांस्कृतिक चेतना जीवन के वास्तविक अनुभवा, दृश्यों, रूपो, स्थितिया और समस्याओं

के आकलन और निरूपण म कभी पश्चात्पद नही रही। वास्तव मे यह उनका स्वच्छदतावादी पक्ष है, जिसका विस्तार और वैविध्य हिंदी कविता मे अनुपम है। किसी ने किसी एक अनुभूति की गहराई म जाकर आत्मप्रधान और मार्मिक काव्य सृष्टि की होगी, अय न दार्शनिकता के आधिपत्य और वभव का अधिक आडबर के साथ प्रदशन किया होगा, किसी अय न सीमित आध्यात्मिक भूमिका पर *रहस्यवादी भावना की अधिक विस्तत अभिव्यक्ति की होगी,* परतु समग्र रूप से जीवनानुभवा के द्रष्टा के रूप म निराला का काव्य अपनी स्वच्छदतावादी विशालता मे इन सबका अतिक्रमण कर गया है। रसा की भूमिका पर भी जो अनकरूपता निराला म है, काव्यशैलियो और काव्यछदा के प्रणयन म जो बाहुल्य और विशदता उनम पाई जाती है, दूसरे कवि उनके समीप नही पहुचते। निराला का स्वच्छदतावाद सौम्य और सुदर के साथ कुरूप और विद्रूप के चित्रण म, भयानक और आश्चयमय के निर्माण म एक सा समथ रहा है। कुछ लोग आदशवाद और यथाथवाद की काव्यसरणिया म उनकी पूववर्ती और परवर्ती काव्यरचना को *बाटना चाहते है। यह निराला की ही काव्यक्षमता है कि उन्होने काव्य की सीमा* मे इन वादो को पृथकता या विघटन का आधार नही बनने दिया। निराला के आदर्शोन्मुख चित्र अनुभव और निरीक्षण की यथायता स समन्वित हैं और उनके यथाथवादी चित्र हास्य और व्यग्य के माध्यम से आदर्शो को इगित करते है। निराला के काव्य मे शैलिया और रचनापद्धतिया बदलती रही है परतु एक स्वच्छदतावादी कवि की चेतना का परिहार अत तक नही हुआ।

अपन अतिम दस वर्षों म निराला की काव्यसष्टि भावात्मक गीता का आधार लेकर स्थिर हो गई है। इन वर्षों म लबी कविताए या खुले प्रगीत उन्होंने कदाचित *इसलिए नही लिखे कि उनकी भावना की विस्तारक्षमता सीमित हो गई थी।* उनके इन वर्षों के प्राय तीन सौ भावगीता मे आत्मनिवेदन, प्रकृति की शक्तिदायिनी सत्ता का प्रत्यय, सामाजिक असमानता के प्रति व्यग्य की ध्वनि, भली भाति मुखर हुई है। इस अतिम दौर की रचनाओ म निराला काव्यालकारा से बहुत कुछ विरत हो चुके थे और तोल्स्तोय के परवर्ती साहित्य की भाति सरल अभिव्यक्ति के प्रेमी बन गए थे। परतु इन गीता म भावगाभीय और गीतात्मक समृद्धि कही भी कम नही हुई है। इस समय की कुछ थोडी रचनाए उनकी मानसिक अस्थिरता, आवेग और विक्षेप का परिचय भी देती हैं परतु ऐसी रचनाओ को 'मुक्त-आसग' की भूमि पर रखकर परखना समीचीन नही है। इस काल की दो एक कृतिया एसी भी हैं जिनम, निराला की कल्पना 'फतासी' के स्तर पर पहुच गई है। उनकी सजग चेतना उनका साथ नही दे पाई है। ये निराला के समरस और समोत्कप सपन्न काव्य के अपवाद हो सकते हैं, परतु इन्ह नई सजना शैली

का नाम देना किसी भी अथ म सगत नही है।

समग्र रूप से देखने पर निरालाकाव्य की मानववादी भूमि भी स्पष्ट हो जाती है। उन्होंने मानवीय भावना और प्रवत्तियो का सम्मान किया है और ऐसा करत हुए उन्होंन वैयक्तिक प्रतिक्रियाओ को दूर ही रहने दिया है। इसी अथ म उनका काव्य तटस्थ और वस्तुमुखी है। इस मानवीय भावफलक पर उन्हान दाशनिकता का रग भी चढाया है, अध्यात्म की ओर भी गए हैं। परतु उनके अध्यात्म मे लौकिक सौंदय का तिरस्कार कहीं नही हुआ है। उनकी दाशनिकता और उनका अध्यात्म औदात्य के उपकरण बन हैं, परतु उनकी कविता की मुख्य भूमि मानवीय धरातल के समीप रही है। मानवता के प्रति उन्हान अपना विश्वास अडिग और स्थिर रखा है।

पाश्चात्य कविता म यद्यपि आज भी मानववादी शब्द का प्रयोग किया जाता है, परतु आज का अधिकाश मानववाद कवि व्यक्ति की आत्मरक्षा के प्रयत्न का प्रक्षेपण मात्र है। उसकी एक नकारात्मक स्थिति कही जा सकती है। अधिकाश प्रतीकवादी कविता, जो आधुनिक युग की उपज है, बाह्य जगत के प्रति निरपेक्ष होकर कवि की व्यक्तिनिष्ठ आत्मसत्ता का प्रतिनिधित्व मात्र करती है। समाज और व्यक्ति मे परिपूण विघटन प्राय सवत्र दिखाई देता है। यूरोप और अमरीका का अस्तित्ववाद भी इसी भावचेतना का सहकारी कहा जा सकता है। निराला के काव्य म इस प्रकार का वस्तु विच्छेद उपस्थित नही हुआ, यह उनकी वैयक्तिक और आध्यात्मिक शक्तिमत्ता थी, और कदाचित यह उस भारतीय अद्वतदशन का सस्कार था जो व्यष्टि और समष्टि म विच्छेद की स्थिति स्वीकार नही करता।

निराला के काव्य को हमने इस पुस्तक म 'शताब्दी का काव्य' और उन्हे 'शताब्दी का कवि' कहा है। मुख्यत हमारा आशय उस मानववादी काव्यचेतना से और कवि की उस बहुविषयव्यापिनी निर्मिति और कला की विविध भगिमाओ से है जो आधुनिक युग के किसी एक कवि म इस मात्रा म परिलक्षित नहीं होती। हिंदी काव्य क्षेत्र मे निराला क प्रभाव की इयत्ता और सभावना अब तक सुस्पष्ट नही हो सकी है, परतु उनके काव्य को हिंदी के नवीन कवियो और रचनाकारो ने जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष स्वीकृति दी है विविध काव्यवादो और शैलियो के सष्टा होन का उन्हे जो श्रेय दिया है और अपने आप म उनकी काव्यरचना जिस निर्बंध व्यक्तित्व की साक्षी बन चुकी है उन तथ्यो को देखत हुए उन्हें 'शताब्दी का कवि' कहने म कोई असगति नही दिखाई दती। भारतीय नवजागति की जितनी मद्रु मधुर और मद्र गभीर रागिनियाँ निराला के काव्य म समाहृत है कदाचित किसी अन्य आधुनिक कवि मे नही। वैयक्तिक विशेषताओ म अन्य कवि उनसे

भिन्न और श्रेष्ठतर भी हो सकते है, परतु युगीन काव्य पर व्यापक और बहुरूपी प्रभाव की सृष्टि म उनका काव्य सर्वाधिक प्रेरणाप्रद देखा और माना गया है।

यद्यपि मेरी यह पुस्तक निराला के कविरूप से ही सबध रखती है, परतु उनके साहित्यिक निर्माण के बहुमुखी प्रयासो म उनके काव्य की क्या स्थिति है, यह प्रश्न प्राय पूछा जाता है और अप्रासगिक भी नही है। विशेषकर एसी स्थिति मे जब निराला के उपन्यासो और कहानियो म स्वच्छन्दतावादी कल्पना, आदर्शोन्मुखता, सास्कृतिक व्यक्तित्व की झाकी, हास्य और विनोद क प्रकरण, चरित्रो की व्यग्यात्मक निर्मिति आदि वे ही तत्व और प्रवृत्तिया पाई जाती हैं जो उनके काव्य म भी उपलब्ध हैं तब यह प्रश्न और भी सगत हो जाता है। इस सबध म हम इतना ही कहगे कि निराला प्रमुखत कवि हैं और, इतना ही नही, वह काव्य साधना का समर्पित भी है। उनकी काव्येतर कृतियो मे सवत्र वैसा ही समपण नही दिखाई दता और कही कही तो वह शिल्प की दष्टि से विश्रृखल भी हो गई है। निराला की किसी काव्य रचना पर इस प्रकार का आरोप लगाना आसान नही। दूसरी बात यह है कि काव्य भिन्न कृतियो के निर्माण म जो बहिरग प्रक्रियाए अपेक्षित होती हैं, काव्य मे उनकी वसा अपक्षा नही होती विशेषकर प्रगीत काव्य म। प्रगीतकाव्य म आत्मनिमाण की सहज प्रक्रिया कायरत रहती है। उसमे अवातर द्रव्य लाना कवि के काव्य का अपलाप है। जब कि कथासाहित्य मे अवातर वस्तुओ का (बहिरग) सगठन और सयोजन भी अभीष्ट होता है उन वस्तुओ का किसी अतरग प्रक्रिया के द्वारा समन्वित करना जिस कौशल की अपेक्षा रखता है उतना हो पर्याप्त होता है। काव्य म बहिरग प्रक्रिया की आवश्यकता नही होती क्योकि उसमे बहिरग वस्तु का स्थान स्वल्प होता है। काव्य और कथा साहित्य के इन भिन्न स्वरूपो और प्रस्थानो का प्रत्यय होने ही निराला की प्रतिभा काव्य निर्माण की प्रतिभा है कथा निर्माण की नही इस तथ्य स हम अवगत हो जाते हैं। इस सबध म यह भी उल्लेखनीय है कि निराला का कथासाहित्य, उनके निजी कथन के अनुसार ही बाए हाथ स लिखा गया है और वह भी अधिकतर आर्थिक आवश्कताओ की पूर्ति के लिए। निराला की कोइ काव्य रचना इस आशय से इस मनोभूमिका पर, नही लिखी गइ। जहा तक समीक्षा का सबध है, निराला की समीक्षाए अधिकतर आत्मकेंद्रित हैं। उन्होन काव्यजन्य अपने सस्कारो को प्रमुखता दी है और काव्यकला की उन विशिष्टताओ का समथन किया है जो उन्ह व्यक्तिगत रूप स अभिप्रत और प्रिय रही है। एक प्रकार से उनकी समीक्षा उनकी ही कविता का विशदीकरण है। रवीद्रनाथ पर उन्होंने जो समीक्षा पुस्तक लिखी है, वह काव्य सौंदय के व्यावहारिक पक्षो का सुदर आकलन करती है। फिर भी उनम साहित्य सबधी सद्धातिक विचारणा के लिए अव

केश नहीं रहा है। निराला की काव्यतर निर्मितियों पर स्वतंत्र रूप से विचार करना यहा अभीष्ट नहीं है, यहा केवल सापेक्षता के स्तर पर सक्षिप्त चर्चा की गई है।

अतत यह प्रश्न भी सगत और समीचीन रूप स उठाया जा सकता है कि निराला का काव्य भारतीय काव्य परपरा म किन विशेषताओ के लिए स्मरणीय रहेगा, उसकी वस्तुगत और शलीगत मौलिकताए क्या है। और इसी से सबद्ध दूसरा प्रश्न यह है कि आधुनिक काव्य म वह भारतीय हो या विदेशी निराला की स्थिति क्या है, उन्होंने आधुनिक' जीवन को किस प्रकार और किन रूपो मे आकृष्ट और प्रभावित किया है। इन प्रश्नो का उत्तर पुस्तक म यत्र तत्र यथा प्रसग दिया गया है। यहा हम सक्षेप मे कह सकते हैं कि निराला ने भारतीय काव्य परपरा को अनेक प्रकार से उपबृहित किया है। काव्य और दर्शन की जो कलात्मक सयोजन की भूमिका उन्होंने प्रस्तुत की है, और इस सयोजन के लिए जिस विशेष कला प्रणाली का निर्माण किया है, वह उनकी अपनी वस्तु है। पूर्ववर्ती भारतीय काव्य मे इन तत्वो का इस रूप म समाहार कदाचित अप्राप्य है। निराला की दूसरी विशेषता उनकी भाषा निर्मिति है, जहा उन्होंने असख्य नए प्रयोग किए है और, कही कही चित्य और चकित करने वाले प्रयोग भी बेहिचक किए हैं। सस्कृत के एक सम्मानित पडित ने कदाचित इसी कारण निराला के लिए 'मुरारेस्तु तृतीय पथा' कहकर उनके विलक्षण प्रयोगो की सूचना दी थी। यह सही है कि शब्द रचना और भाषा निर्मिति की भूमिका पर निराला अत्यधिक स्वाधीन रहे हैं। जिस प्रकार मिल्टन की भाषा के सबध म कहा गया है कि वह अगरेजो की अगरेजी नही है, कुछ और है उसी प्रकार निराला की भाषा के सबध म भी कहा जा सकता है कि वह हिंदी काव्य परपरा की हिंदी नहीं है, कुछ और है। इसे कुछ लोग एक विचलन भी मान सकते हैं पर हिंदी भाषा और साहित्य के इस नवोन्मेषकाल म यह एक ऐसी निर्मिति है जिसका मूल्य कुछ समय बीतने पर ही आका जा सकेगा।

जहा तक दूसरे प्रश्न का सबध है, हमने इस पुस्तक म आधुनिक विश्वकाव्य म उनकी स्थिति मानववादी भूमिका पर मानी है परतु यह शब्द एक तो साहित्यिक प्रचलन का शब्द नही है और दूसरे इसका अर्थ भी क्रमश अस्पष्ट होता जा रहा है। अतएव हम कह सकते हैं कि निराला आधुनिक विश्व काव्य म भारतीय वेदात के प्रतिनिधि कवि है। इस शब्द की जो भी व्याप्ति समझी जा सकती है समझी जानी चाहिए। निराला विच्छेद और विघटन की वर्तमान विश्वभूमि पर सश्लेषण और सयोजन के कवि हैं। अनास्था और सशय के विश्व परिवेश म वह एक अतिक्रामक आशा और निर्बाध समन्विति के कवि हैं। उनकी

काव्यशैली पश्चिम की किसी शैली विशेष का प्रतिरूप नही है, परतु उस सामान्य रूप स अध्यात्मोन्मुख और परोक्ष तत्व स अनुप्राणित शैली कह सकते हैं। उसका प्रत्यक्ष रूप उदात्त या 'क्लासिकल' के समीप है। जहा तक आधुनिक भारतीय काव्य और जीवन का प्रश्न है, निराला के काव्य म अभिव्यजना की वे असख्य उदभावनाए और कौशल मिलते हैं जिनका सामयिक का यजगत पर व्यापक सक्रमण और प्रसरण हुआ है। निराला की काव्य वस्तु आधुनिक भावचेतना का सस्कार कर चुकी है और कर रही है। यदि विभिन्न काव्यशैलिया, धाराओ और प्रवृत्तिया के नए स्रष्टा और रचयिता किसी एक कवि के विषय म सर्वाधिक विश्वस्त और सुमनस्क है तो कवि निराला के विषय म ही है। इसस भी निराला का आधुनिक जीवन और काव्याभिव्यक्ति से गहरा सवध अनुमित होता है। यो तो छिद्रान्वेषिया और पुरोभागी चिंतको की कमी हिंदी म नही है, परतु उनम भी निराला काव्य पर किसी अपर पक्ष को रखने की कोई महती प्रेरणा अब तक जागृत नही हुई। इसे भी हम निराला काव्य की क्षमता और हिंदी काव्य का सौभाग्य ही कहेंगे।

परिशिष्ट

जीवन रेखाए

सूयकात त्रिपाठी 'निराला' का पतृक और पारिवारिक नाम सूयकुमार त्रिपाठी था। इसी नाम से उ ह तब तक पुकारा जाता था, जब तक स्वय उन्हाने सन 1917 18 के आसपास उसे बदलकर सूयकात त्रिपाठी नहीं रखा। इनका ज म बगाल के मेदिनीपुर जिले की महिषदल रियासत म माघ शुक्ल एकादशी सवत 1953, जनवरी सन 1897 को हुआ था। कुछ वर्षों के अनतर जब कवि की मानसिक स्थिति कुछ डावाडोल रहने लगी तब उ होने ही यह तिथि बदल कर माघ शुक्ल वसत पचमी को अपनी ज मतिथि बताया। प्राप्त प्रमाणा मे डा० श्यामसुदरदास की पुस्तक 'हि दी के निर्माता' की तिथि तथ्यपूण कही जा सकती है।

कवि के पूवज उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले के गढाकोला नामक गाव मे रहा करते थे। उनके पितामह का नाम शिवधारी त्रिपाठी था, जिनके चार लडके थ— गयादीन, जोधा, रामसहाय तथा रामलाल। इन चारो भाइयो का यज्ञोपवीत और विवाह आदि शिवधारी त्रिपाठी ने ही किया था। उस समय इनकी पारिवारिक स्थिति काफी सप न थी। शिवधारी त्रिपाठी के तृतीय पुत्र रामसहाय त्रिपाठी के प्रथम और एकमात्र पुत्र सूय कुमार या सूयकात त्रिपाठी 'निराला' थ। इनकी माता का नाम रुक्मिणी देवी था और वे दूबे वश की थी। उनका पितगृह फतेहपुर जिले मे चादपुर नामक गाव था। कुछ समय के पश्चात शिवधारी त्रिपाठी का शरीरात हो गया। तब भी चारो भाइयो का सम्मिलित परिवार था और भाइयो म काफी सौहाद्र भी बना रहा। बडे भाई गयादीन और जाधा घर का कामकाज देखते थे, रामसहाय और रामलाल नौकरी के लिए कलकत्ता गए और आरभ म पुलिस की नौकरी की और तत्कालीन गवनर के अगरक्षक पद पर नियुक्त हुए। एक बार गवनर महोदय दौरे म महिषदल गए थे, उस समय रामसहाय और रामलाल दोनों भाइयो के पुष्ट और प्रशस्त शरीर को देखकर महिषदल के राजा साहब ने गवनर से प्राथना की कि वह इन दोना भाइया का उ ह दे दें और गवनर ने उनका यह निवेदन स्वीकार किया। बगाल म ऐसे ऊंचे पूरे और हृष्ट पुष्ट व्यक्ति कम ही नजर आत

थे, इसलिए राजा साहब का इनके प्रति विशेष आकर्षण था। महिषादल में ये दोनों भाई सपरिवार रहने लगे और वहीं सूर्यकुमार त्रिपाठी का जन्म जनवरी, 1897 में हुआ जो आगे चलकर सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' नाम से ख्यात हुए। निराला की माता का देहांत उस समय हो गया था जब इनकी आयु तीन वर्ष की थी। इनका पालन पोषण इनकी चाची और भाभी ने किया।

परिवार में पुराना कनौजिया आचार विचार प्रचलित था। बिना स्नान किए चौके में प्रवेश करना निषिद्ध था। एक बार जब निराला छः सात वर्ष के थे, खेल कूद कर बाहर से आए और सीधे रसोईघर में घुस गए। भाभी ने मना किया और समझाया, इसी समय पिता रामसहाय आ गए। उन्होंने जब सारी बात सुनी, तब वे सूर्यकुमार को पकड़कर पास के तालाब के किनारे ले गए और वहां डुबो डुबोकर उन्हें स्नान कराया। भाभी और चाची दोनों इस घटना से आतंकित हुईं और वे सूर्यकुमार पर और अधिक ममता रखने लगीं।

नौ वर्ष की अवस्था में निराला का यज्ञोपवीत संस्कार गांव में कराया गया। सन 1911 में निराला का विवाह रायबरेली जिले के डलमऊ स्थान के निवासी रामदयाल दूबे की पुत्री से संपन्न हुआ। निराला की पत्नी का नाम राय मनोहरा देवी था। एक वर्ष के पश्चात गौना या द्विरागमन संपन्न हुआ। निराला के श्वसुर ऊंचा सुनते थे, इसलिए जब वह अपनी पुत्री को विदा कराने पहुंचे तो रामसहाय के अस्वीकार करने पर भी पुत्री को विदा कराकर ले गए। इस बातचीत को मनोहरा देवी ने आद्यंत सुना था, इसलिए उनके मन में शंका और चिंता उत्पन्न हो गई थी। उन्होंने पत्र लिखकर अपने पिता की ओर से क्षमा याचना की थी। परंतु निराला पर इस घटना का कुछ भी प्रभाव न पड़ा। पत्नी के प्रति उनका अटूट प्रेम था और वह कई बार छुट्टी लेकर महिषादल से डलमऊ आते जाते रहे। निराला के प्रथम पुत्र रामकृष्ण का जन्म सन 1914 ई० में डलमऊ में हुआ था। उनकी पुत्री राय सरोज का जन्म भी कुछ ही समय पश्चात 1916 ई० में डलमऊ में हुआ। यही दो निराला की संतान थीं।

कुछ ही वर्षों के पश्चात रामसहाय और रामलाल त्रिपाठी पेंशन लेकर महिषादल से गढ़ाकोला चले आए और घर का काम काज देखने लगे। तब महिषादल में निराला, उनके चचेरे भाई बदलू और बदलू के चार पुत्र, बिहारीलाल, रामगोपाल, केशवलाल और कालीचरण रह रहे थे। इन चारों के प्रति निराला का घनिष्ठ प्रेम था। बड़े लड़के बिहारीलाल को आरंभिक शिक्षा दिलाने का कार्य भी उन्होंने किया था। उन दिनों निराला हाई स्कूल तक की पढ़ाई समाप्त कर तत्कालीन महिषादल के राजा साहब के निजी सहायक या सचिव हो गए थे। सन 1917 में निराला के पिता रामसहाय त्रिपाठी अस्वस्थ हुए और शीघ्र ही उनका देहांत हो गया। सन

1918 म निराला की पत्नी भी अस्वस्थ हुई। वह डलमऊ म ही रहती थी। डलमऊ स तार आने पर निराला के चचेरे भाई बदलूप्रसाद और उनका पुत्र रामगोपाल महिषदल से डलमऊ पहुचे। बीमारी का दूसरा तार मिलने पर राजा साहब से आज्ञा लेकर निराला महिषादल से डलमऊ पहुचे, परतु उनके वहा पहुचने के पहले ही पत्नी का देहात हो चुका था। दोनो की अतिम भेंट श्मशान मे ही हो पाई। ससुराल से घर गढाकोला लौटन पर निराला को अपन परिवार के अनकानक व्यक्तियो का देहात हो जान और महामारी से ग्रस्त होने के समाचार मिले। पारिवारिक विपत्तियों का पहाड ही उन पर ढह पडा।

पत्नी का देहात होन के पश्चात ससुराल वाला न एक अय कन्या का निराला से विवाह करने का प्रस्ताव किया। वह कन्या फतेहपुर जिले के किशनपुर गाव के जुगलकिशोर मिश्र की कया थी। निराला ने विवाह करना अस्वीकार कर दिया और उस लडकी का विवाह अपने भतीजे बिहारीलाल से करा दिया।

सन '20 के आसपास निराला महिषदल से कलकत्ता चले गए। वहा कुछ दिन रामकृष्ण आश्रम से प्रकाशित होन वाले समन्वय' पत्र म रहे। वह प्राय आश्रम के सयासियों के साथ रहते थे और उनसे विभिन्न विषयो की आध्यात्मिक चर्चाए करते रहत थ। शीघ्र ही वे 'समन्वय' छोडकर 'मतवाला' पत्र म चले गए। वहा रहते हुए वह अपने परिवारवालो की यथासभव मदद करने रहे। 'मतवाला' पत्र से ही प्रथम बार निराला की काव्यप्रतिभा का समस्त हिन्दी ससार को परिचय मिला। इसी म उ अधिकाश कविताए प्रकाशित हुइ जो 'प्रथम अनामिका' और 'परिमल' में छपी हैं।

सन 1928 म निराला कलकत्ता से अपने गाव गढाकोला आए। यहा उनका सघर्ष स्थानीय जमीदारो से हुआ। स्वय निराला का बगीचा और जमीन बेदखल कर ली गई और गाव वालो पर अत्याचार किया जा रहा था। निराला ने किसानो का सगठन किया और काफी समय तक जमीदारो से लोहा लेत रहे। परतु अत म उन्ह प्रतीत हुआ कि किसानो का सगठन मजबूत नही है और व थोडे प्रलोभन पर भी जमीदारो से मिल जाते हैं। इससे निराला के मन म ग्लानि हुई और वे 1929-30 म गढाकोला छोडकर लखनऊ चले आए। एक प्रकार म निराला के जीवन का आर्थिक और भौतिक सघर्ष इसी समय से आरभ हुआ। सन 1929 तक उनकी पारिवारिक स्थिति अपेक्षया अच्छी थी।

अपने पुत्र रामकृष्ण का यज्ञोपवीत और विवाह निराला न किया था। रामकृष्ण का प्रथम विवाह शिवशकर शुक्ल की कया फूलदुलारी से लखनऊ म सपन्न हुआ था। उस पत्नी से छाया नामक एक पुत्री उत्पन्न हुई थी। इसके कुछ पूव ही निराला की एकमात्र पुत्री सरोज का विवाह शिवशेखर द्विवेदी (कलकत्ता निवासी)

से गढाकोला म ही सपन्न हुआ था। उन दिना निराला की आर्थिक स्थिति अत्यत चितनीय थी। विवाह के पश्चात भी रामकृष्ण और सरोज अपने ननिहाल डलमऊ म ही रहा करते थे।

जमीदारो और किसाना के बीच सन '28 '29 के सघप का सकेत यद्यपि सक्षेप म किया गया है, पर वास्तव म यह बहुत मार्के का सघप था, जिसन कवि की निर्भीकता, अन्याय के प्रति आक्रोश और उत्पीडित के प्रति दयाद्रता का बहुत ही स्पष्ट परिचय दिया। यद्यपि कवि अपने लक्ष्य मे सफल न हो सका, अत्याचारा का उन्मूलन न कर सका, परतु उसके व्यक्तित्व का एक पहलू जो अन्यथा उद्घाटित ही न हो पाता, असदिग्ध रूप से उदघाटित हुआ।

1929 के पश्चात निराला लखनऊ म रहन लगे थे। कभी नारियल वाली गली, कभी बताशा वाली गली और कभी हाथीखाना भूसामडी आदि मुहल्ला म प्राय दस वर्षों तक रहे। इस बीच कुछ समय के लिए वह कलकत्ता भी गए थे, जहा उन्होने 'रगीला' पत्र का सचालन किया था पर यहा भी उन्ह अभीष्ट सफलता नही मिली। समय बदल रहा था, बिना पूजी के पत्रा का चलना कठिन होता जा रहा था। पूजी न निराला के पास थी और न उनके मित्रा के पास। इन्ही वर्षों म वे कुछ महीना के लिए प्रयाग, और डलमऊ म भी रहे थे। उन वर्षों मे उनकी *आर्थिक स्थिति बहुत डावाडोल थी और वे बाजार के लिए उपन्यास और कहानिया* लिखने को बाध्य हुए थे।

सन '40 के पश्चात निराला न लखनऊ का अपना निवास स्थान छोड दिया, कदाचित वह उस मकान का किराया चुकान म कठिनाई का अनुभव करने लगे थे। '40 के पश्चात वह उन्नाव, प्रयाग, वाराणसी आदि स्थाना म अपन मित्रा के साथ रहे थे। उन्नाव म वह सुमित्राकुमारी सिन्हा और उनके पतिदेव के साथ काफी समय तक रहे। प्रयाग मे उनका मुख्य स्थान वाचस्पति पाठक का लीडर प्रेस का मकान था। काशी म दुर्गाकुड स्थित मेरे मकान म भी वह महीना रहे थे और कुछ समय पश्चात गायघाट स्थित राष्ट्रभाषा विद्यालय म रहन चले गए थे। इन सभी स्थाना में रहत हुए निराला का साहित्यिक लेखन चलता रहा, परतु यह *कहना होगा कि 1930 से '40 तक वह जिस प्रकार का अनवरत लेखन चला सके* थे वसा परवर्ती वर्षों मे नही कर सक। तब उनकी रचनाए बहुत कुछ प्रकीणक प्रकार की होने लगी थी। लखनऊ रहत हुए उपन्यासा और कहानियों के अतिरिक्त उन्होंने वह सामग्री प्रस्तुत की थी जो गीतिका', अनामिका तुलसीदास और अशत 'अणिमा में पाई जाती है। उनकी स्फुट काव्यरचनाए जिनम 'वेला, नय पत्ते' और 'कुकुरमुत्ता' आदि गणनीय हैं लखनऊ छोडन के पश्चात ही निर्मित हुई थी। राष्ट्रभाषा विद्यालय वाराणसी म रहत हुए उन्होने रामचरितमानस के

मालवाड का खड़ी बोली म अनुवाद किया था। सन 1947 की 14 जनवरी को काशी म उनकी स्वणजयती धूमधाम से मनाई गइ थी। यद्यपि यह उत्सव उत्तर भारत के अनेकानेक नगरो म मनाया गया था, परतु केंद्रीय समाराह वाराणसी म ही सपन्न हुआ था।

स्वणजयती (1947) के पश्चात निराला अधिकतर प्रयाग म ही रहे। वहा 'भारती भडार' से उनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई थी अतएव वहा रहने म उन्हें कुछ अधिक सुविधा प्रतीत हाती थी। आरभ म तो वह महादेवी वर्मा द्वारा सचालित साहित्यकार ससद म रहे परतु शीघ्र ही वह स्थान छोडकर वह दारागज में स्वतत्र मकान लेकर रहने लगे। कुछ समय वह श्रीनारायण चतुर्वेदी के दारागज स्थित मकान मे भी रहे थे, परतु अतत वह अपने श्रद्धालु मित्र और कलाकार कमलाशकर के अनुरोध पर उनके घर आ गए थे और परिवार मुक्त होकर वही रहने लगे थे। यही रहते हुए उनकी अचना', 'आराधना, 'गीतगुज' आदि काव्यकृतिया और कुछ अधूरे उपन्यास भी प्रकाशित हुए थे। प्रयाग म ही रहते हुए उन्होंने रामकृष्ण, विवेकानद और बकिमचद्र के अनेक ग्रथों का अनुवाद भी किया था।

कवि निराला का निधन 15 अक्तूबर 1961, रविवार को हुआ।

काव्यकृतिया

1	'अनामिका' (प्रथम) प्रकाशन तिथि 1922	अब यह पुस्तक अनुपलब्ध है। इसकी प्राय सभी (7) कविताए कवि के अन्य सग्रहो म ले ली गई है।
2	'परिमल' प्रकाशन तिथि '30	यह निराला काव्य का प्रथम प्रतिनिधि सग्रह है। इसम आरभ (1917 18) से लेकर 1929 तक की सभी प्रमुख रचनाए सगहीत हैं। इस सग्रह मे 14 मुक्त छद, 31 स्वच्छन्द छद और 30 छदबद्ध प्रगीत रचनाए है। इन्ही प्रगीतो मे प्राय 10 गेय गीत भी हैं। काव्यरूप की दष्टि से 'परिमल' की रचनाओ को गीत, प्रगीत, दीघ प्रगीत ('यमुना', 'शिवाजी का पत्र') और काव्यरूपक ('पचवटी प्रसग') म विभक्त कर सकते हैं सपूण रचना सख्या 87

'परिमल की कुछ श्रेष्ठ रचनाए

1 प्राय सभी गीत सुदर, भावपूण और रूप सज्जा से सपन्न हैं।

2 प्रगीतो मे —'जुही की कली', 'प्रिया के प्रति',

'पारस वासन्ती', 'तुम और मैं', 'वसन्त समीर क्या दू', 'स्मति, भर देते हो', 'अधिवास', 'विधवा', 'भिक्षुक', 'सध्या सुदरी', 'शरत्पूर्णिमा की विदाई, 'बादल राग', 'वनकुसुमो की शय्या', 'शेफालिका', 'स्मति चुबन', 'जागो फिर एक बार' आदि अतिशय प्रसिद्ध और सुदर हैं।

दीर्घ प्रगीतो मे—'यमुना के प्रति', तथा 'शिवाजी का पत्र' क्रमश वियोग शृगार और राष्ट्रीय भावना की सुदर और धारावाहिक अभिव्यक्ति करती हैं।

का य रूपक—'पचवटी प्रसग उत्फुल्ल भाव सौंदय और प्राकृतिक परिवेश की मनोरमता को प्रतिफलित करने म अप्रतिम है।

गीतिका'
प्रकाशन तिथि '36

इस सग्रह म सन '30 स '36 तक के निराला जी के गेय गीत उपलब्ध हैं। यह कवि का प्रथम गीत सग्रह है जिसम भावा की भास्वरता और रूप सौंदय दशनीय हुए है। इन गीता म कवि की भापा हिंदी और सस्कृत के समाहित सौदय को अभिव्यक्त करती है। यद्यपि इन गीतों म श्रेष्ठता के क्रम से चुनाव करना कठिन है पर कुछ अत्यत प्रसिद्ध गीत ये हैं—'वर दे वीणावादिनि वर दे' 'यामिनी जागी,' 'सखि वसत आया' 'सोचती अपलक आप खडी', 'मौन रही हार' 'छोड दो जीवन यो न मलो', 'सखी री यह डाल वसन वासती लेगी' दृगो की कलिया नवल खुली, 'सरि धीरे बह री', 'मैं लिखती सब कहत', 'जग का एक दखा तार, एक ही आशा मे सब प्राण, देख दिव्य छवि लोचन हारे', 'तुम्हीं गाती हो अपना गान, भारति जय विजय करे, आदि। सपूण गीत सख्या 101

'अनामिका (द्वितीय)
प्रकाशन तिथि '38

इसम 'परिमल' काल की कुछ छूटी हुई कविताओ के अतिरिक्त कवि की कुछ अनूदित रचनाए और मुख्यत उसके दीघ प्रगीत सगृहीत हैं। रेखा', 'प्रेयसी, 'वनवेला', 'सरोजस्मति, 'मित्र के प्रति', 'सम्राट एडवड के प्रति', 'सेवा आरभ, आदि दीघ

प्रगीत और 'राम की शक्तिपूजा' जैसी आख्यानक रचना इसी सग्रह की मूल्यवान कार्योपलब्धि हैं। सपूण रचना सख्या 56

तुलसीदास' प्रकाशन तिथि '38	यह 100 बधा का उदात्त शली का प्रसिद्ध आख्यान-काव्य है। पक्ति सख्या 600।
'कुकुरमुत्ता' प्रकाशन तिथि '43	यह दो खडो म दीघहास्य कृति है। सपूण पक्ति सख्या खड एक—228 खड दो—228 कुल योग 436 पक्ति
'अणिमा' प्रकाशन तिथि '42	अणिमा कवि की 38 स 43 तक की कुछ चुनी हुई रचनाओ का लघु सग्रह है। इसम कवि के कुछ नए गीत, 'सहस्त्राब्दि', 'स्वामी प्रेमानद जी महाराज', जस दीघ प्रगीत और कई प्रशस्ति गीत हैं। 'चूकि यहा दाना है', 'यह है बाजार सडक के किनार दुकान है', जैसी शली की व्यग्यात्मक रचनाए भी हैं। सपूण रचना सख्या 45
'बला प्रकाशन तिथि, '46 जनवरी	उर्दू शैली की गजलें। विषय की विविधता। नई लयो की गीतात्मक कृति। गीत सख्या 95।
'नये पत्ते' प्रकाशन तिथि, '46 माच	मिली जुली हिंदी उदू की हास्य विनोद व्यग्य रचनाए। यथार्थोन्मुखी चित्रण से समन्वित। 'देवी सरस्वती' जैसी उदात्त और प्राकृतिक सौदय-वणन सपन्न दीघ रचना इस सग्रह की शोभा है। 'स्फटिक शिला' और 'खजोहरा' के दीघ व्यग्य प्रगीत इसके नए अवदान हैं।
'अर्चना' प्रकाशन तिथि '50	नई शली के 112 आत्मनिवदनात्मक भावगीतो का सग्रह।
'आराधना' प्रकाशन तिथि '53	'अचना' की गीति शली का विस्तार। संपूण गीत सख्या 96।
'गीत गुज' प्रकाशन तिथि '54	प्रथम सस्करण म 25 गीत। द्वितीय संस्करण '59 म 35 गीत हैं। प्रकृति के प्रति अतरग आस्था से समन्वित गीत सष्टि। इसके अतिरिक्त परिशिष्ट भाग म छ स्फुट रचनाए दी गई हैं।

समस्त प्रकाशित रचना सख्या

'परिमल'	87
'गीतिका'	101
'अनामिका'	56
'अणिमा'	45
'बेला'	95
'नये पत्ते'	28
'अचना'	112
'आराधना'	96
'गीत-गुज	41
	601 कविताए

समग्र रचना पुस्तके तुलसीदास 600 पक्तिया

कुकुरमुत्ता 436 पक्तिया

कवि के अतिम जीवन काल के अनेक गीत और अय रचनाए अब तक अप्रकाशित है।

आचाय नन्ददुलारे वाजपेयी

हिंदी म स्वच्छदतावादी समीक्षा के उन्नायक, कृती आलोचक, शिक्षक तथा प्रशासक अपने कीर्तिशेष होने तक इन्होंने 13 पुस्तकें लिखी, जो आज भी हिंदी समीक्षा के लिए न केवल प्रासगिक हैं बल्कि आधार ग्रथ का काम दे रही है